इस पुस्तक के विषय में :

ब्रह्मचर्य-साधना

पुस्तक 'ब्रह्मचर्य-साधना' जो अधिकांशतः ब्रह्मचर्य-विष
और जहाँ ब्रह्मचर्य-पालन सम्भव न हो, वहाँ नियमित विवाहित
का प्रतिपादन करती है। यह पुस्तक जनता में लोकप्रिय रही है।

इसके अतिरिक्त, काम तथा काम के उदात्तीकरण-विषय पर
जी के विचार उनकी बृहदाकार रचनाओं में भी इतस्ततः बिखरे हु
जाते हैं। सर्वसाधारण को तथा विशेषकर युवा-पीढ़ी को काम तथ
के उदात्तीकरण के महत्त्वपूर्ण विषय पर कार्यकारी पथ-प्रदर्शन प्रदा
के उद्देश्य से प्रस्तुत पुस्तक में काम तथा ब्रह्मचर्य-विषय पर स्वामी
सभी विचारों तथा अनुदेशों को 'ब्रह्मचर्य-साधना' तथा अन्य स्थ
संग्रह कर उन्हें सम्यक् रूप से सम्पादित किया गया है। यह क
आधुनिक युवकों की स्नेहमयी सेवा के रूप में किया गया है,
उत्तरदायित्वहीन समाज प्रायः अन्धकार में टटोलने के लिए छोड़ दे
इन दिनों हम 'किशोर-अपचार' के विषय में प्रायः सुनते रहते हैं;
यह 'किशोर-अपचार' प्रौढ़ लोगों के अनुत्तरदायित्व का परिण
संसार के युवक मार्ग-दर्शन के लिए लालायित रहते हैं ज
माता-पिता, शिक्षक तथा समाज से प्रायः सुलभ नहीं होता है।

ऐसी आशा है कि गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी की यह पुस्त
उल्लिखित अभाव की पूर्ति करेगी तथा संसार के नवयुवकों क
महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में ज्ञान और पथ-प्रदर्शन प्रदान करेगी, जिसका
शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक हित पर प्रभाव प
तथा जिसके वे पूर्ण रूप से अधिकारी हैं।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी पब्ली

ISBN 81-7052-076-2 HS 24 Rs. 65/-

प्रथम हिन्दी संस्करण . . . १९९०
द्वितीय हिन्दी संस्करण . . . १९९९
तृतीय हिन्दी संस्करण . . . २००७

[१,००० प्रतियाँ]

ISBN 81-7052-076-2
HS 24

'डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए स्वामी विमलानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो॰ शिवानन्दनगर—२४९ १९२, जिला टिहरी-गढ़वाल, उत्तरांचल' में मुद्रित ।

विश्व के नवयुवकों को समर्पित

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

८ सितम्बर, सन् १८८७ को विश्व-मंच पर प्रथम प्रभात देखा। परिवार के लोग उनको कुप्पुस्वामी कहते थे, जो कालान्तर में स्वामी शिवानन्द सरस्वती के नाम से दिग्विश्रुत हुए। जनता की आधिभौतिक चीत्कार ने उनको मलया बुलाया और वैदिक गीतों की सनातन-परम्परा ने उनको हिमालय की ओर प्रेरित किया। १० साल तक अकट तपश्चर्या कर, आत्म-संयम और आत्म-शुद्धि के वातावरण से अनवरत ध्यान में समाधिस्थ होते हुए उनको ज्ञानोज्वल-प्रज्ञा की अनुभूति हुई।

अपना ज्ञान जनता को देने और निष्काम कर्म-प्रणाली के आधार पर समाज और राष्ट्रों की मानवता का निर्माण करने के लिए सन् १९३६ में उन्होंने 'द डिवाइन लाइफ सोसायटी' की स्थापना की और कालान्तर में सन् १९४८ में 'योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी' सदृश अद्वितीय संस्था को उद्यत होते देखा। आज वे ग्रन्थकार के नाते ३०० से अधिक गम्भीर ग्रन्थों के प्राणदाता हैं, जिनमें उनके जीवन की विशाल ज्ञान-ज्योति बिम्बित होती है और जो साधारण-से-साधारण मानव का भी पथ-प्रदर्शन करती है। अपने हृदय को मानव-समाज के विकास के लिए अक्षरों का स्वरूप दे कर वे विशाल विश्व के तीर्थयात्री को मार्ग तो दिखा ही रहे हैं, अन्धकार में नवीन प्रभात तो ला ही रहे हैं, साथ-साथ वे प्रत्येक सत्यशील परन्तु यातना-तप्त साधक के चिर-सहयात्री भी रहे हैं, जिनका शब्द उसे प्रोत्साहन और अभिप्रेरणा देता है, जिनकी कृपाकटाक्षवीक्षणलहरी उसको दिव्य बना देती है, स्वर्णमय कर देती है। आज तो वे विश्व के गुरुदेव हैं जिनकी ब्रह्माण्ड-व्यापिनी विजय-वैजयन्ती के नीचे सभी धर्म, सभी सम्प्रदाय, सभी वर्ण तथा सभी मनुष्य अपना-अपना आश्रय खोज रहे हैं और निःसन्देह भविष्य भी उनकी अवतार-कथा को घर-घर गायेगा। उन्होंने अपने दिग्विजयी व्यक्तित्व को परात्पर-जीवन में तन्मय कर दिया था। वे १४ जुलाई १९६३ को महासमाधि में लीन हुए।

शुद्धता के लिए प्रार्थना

हे करुणारूप प्रेममय स्वामी ! हे प्रभु मेरी आत्मा के आत्मा, मेरे जीवन के जीवन, मेरे मन के मन, श्रोत्रों के श्रोत्र, प्रकाशों के प्रकाश, सूर्यों के सूर्य ! मुझे प्रकाश तथा शुद्धता प्रदान कीजिए। मैं शारीरिक तथा मानसिक ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित हो जाऊँ। मैं विचार, वाणी तथा कर्म में पवित्र रहूँ। मुझे अपनी इन्द्रियों को नियन्त्रित तथा ब्रह्मचर्य-व्रत के पालन करने के लिए बल प्रदान कीजिए। इन सभी प्रकार के सांसारिक प्रलोभनों से मेरी रक्षा कीजिए। मेरी समग्र इन्द्रियाँ सदा आपकी प्रिय सेवा में तत्पर रहें।

मेरे यौन-संस्कारों तथा कामवासनाओं को मिटा दीजिए। मेरे मन से कामुकता को नष्ट कर डालिए। मुझे एक सच्चा ब्रह्मचारी, सदाचारी तथा ऊर्ध्वरेता योगी बनाइए। मेरी दृष्टि विशुद्ध हो। मैं सदा धर्म-मार्ग पर चलूँ। मुझे स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द, भीष्मपितामह, हनुमान् अथवा लक्ष्मण के समान शुद्ध बनाइए। मेरे सभी अपराधों को क्षमा कीजिए, क्षमा कीजिए। मैं आपका हूँ। मैं आपका हूँ। त्राहि, त्राहि। रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए। प्रचोदयात्, प्रचोदयात्। प्रबुद्ध कीजिए, प्रबुद्ध कीजिए। मेरा पथ-प्रदर्शन कीजिए। ॐ ॐ ॐ।

विषय-सूची

ब्रह्मचर्य-साधना

प्रथम खण्ड

काम-प्रपञ्च

१

वर्तमानकालीन अधःपतन

पुरुष के समक्ष एक महान् भ्रान्ति है। वह नारी के रूप में उसको उद्विग्न करती है। इसी प्रकार स्त्री-जाति के समक्ष भी एक महान् भ्रान्ति है जो पुरुष के रूप में उसको उद्विग्न करती है।

आप ऐम्सटर्डम, लन्दन अथवा न्यूयार्क कहीं भी जायें, इस प्रतिभासिक विश्व का विश्लेषण करने पर आपको केवल दो ही पदार्थ उपलब्ध होंगे—कामुकता तथा अहङ्कार।

नैसर्गिक काम-प्रवृत्ति मानव-जीवन में सर्वाधिक महान् आग्रही माँग है। काम-ऊर्जा अथवा कामवासना मानव में सर्वाधिक बद्धमूल नैसर्गिक प्रवृत्ति है। काम-ऊर्जा मन, बुद्धि, प्राण, इन्द्रियाँ तथा समस्त शरीर को सम्पूर्णतः आपूरित करती है। यह मानव-प्राणी के सङ्घटक तत्त्वों में प्राचीनतम तत्त्व है।

व्यक्ति में सहस्राधिक कामनाएँ होती हैं; किन्तु उनमें प्रमुख तथा सबल कामना है सम्भोग की कामना। मूलभूत कामना है पति अथवा पत्नी के रूप में एक साथी के लिए आग्रही माँग। सभी इतर कामनाएँ इस एक प्रमुख मूलभूत कामना पर आश्रित होती हैं। धन की कामना, पुत्र की कामना, सम्पत्ति की कामना, घर की कामना, पशु की कामना तथा अन्य कामनाएँ इसकी ही अनुवर्ती हैं।

क्योंकि इस ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण रचना को बनाये रखना है, अतः विधाता ने सम्भोग की कामना को अत्यधिक बलवती बनाया है। अन्यथा, विश्वविद्यालयों के स्नातकों की भाँति ही अनेक जीवन्मुक्त अनायास ही प्रकट हो गये होते। विश्वविद्यालय की उपाधियाँ प्राप्त करना सुकर है। इसके लिए किञ्चित् धन, स्मरण-शक्ति, बुद्धि तथा अल्प आयास अपेक्षित हैं। किन्तु काम-आवेग को नष्ट करना एक अति-श्रमसाध्य कार्य है। जिस व्यक्ति ने कामुकता का पूर्णतया

उन्मूलन कर डाला है तथा जो मानसिक ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित हो चुका है, वह व्यक्ति साक्षात् ब्रह्म अथवा भगवान् है।

यह संसार कामुकता तथा अहङ्कार ही है, अन्य कुछ नहीं। इनमें अहङ्कार ही मुख्य वस्तु है। यही आधार है। कामुकता तो अहङ्कार पर आश्रित है। यदि 'मैं कौन हूँ' के अनुसंन्धान अथवा विचार द्वारा अहङ्कार को नष्ट कर दिया जाये तो काम-भाव स्वतः ही पलायन कर जाता है। मनुष्य अपने भाग्य का स्वयं स्वामी है। उसने अपने दिव्य गौरव को खो दिया है तथा अविद्या के कारण कामुकता और अहङ्कार के हाथों का यन्त्र तथा उनका दास बन गया है। कामुकता तथा अहङ्कार अविद्याजात हैं। आत्मज्ञानोदय आत्मा के इन दोनों शत्रुओं को, असहाय, अज्ञानी, क्षुद्र मिथ्या जीव अथवा भ्रामक अहं को लूट रहे इन दो दस्युओं को विनष्ट कर डालता है।

कामवासना की कठपुतली बन कर मनुष्य ने अपने को बहुत बड़ी मात्रा में अधःपतित कर डाला है। हन्त! वह एक अनुकरणशील यन्त्र बन चुका है। उसने अपनी विवेक-शक्ति खो दी है। वह निकृष्टतम रूप की दासता के गर्त में जा गिरा है। क्या ही दुःखद अवस्था है! निस्सन्देह, क्या ही शोचनीय दुर्गति है! यदि वह अपनी खोई हुई दिव्यावस्था तथा ब्राह्म-महिमा को पुनर्प्राप्त करना चाहता है तो उसकी समग्र सत्ता का रूपान्तरण करना चाहिए, उसकी कामवासना को उदात्त दिव्य विचारों तथा नियमित ध्यान द्वारा पूर्णतया रूपान्तरित करना चाहिए। कामवासना का रूपान्तरण नित्य-सुख की प्राप्ति की एक बहुत ही प्रबल, प्रभावशाली तथा सन्तोषप्रद विधि है।

यह संसार ही कामुक है

कामवासना का संसार के सभी भागों पर एकाधिपत्य है। लोगों के मन कामपूर्ण विचारों से ओतप्रोत हैं। यह संसार ही कामुक है। समस्त विश्व भीषण कामोन्माद के वशीभूत है। सभी दिग्भ्रान्त हैं तथा विकृत बुद्धि से संसार में चल-फिर रहे हैं। कोई भगवद्विचार नहीं है। कोई भगवच्चर्चा नहीं है। भूषाचार (फैशन), उपाहार-गृहों (रेस्तराँ), विश्रान्ति-गृहों (होटलों), प्रीतिभोजों, नृत्यों, घुड़दौड़ों तथा चलचित्रों की ही चर्चा है। लोगों का जीवन खान, पान तथा प्रजनन में ही समाप्त हो जाता है। इसमें ही उनके कर्तव्य की इतिश्री है।

कामवासना ने लन्दन, पेरिस तथा लाहोर में ही नहीं वरन् मद्रास के

परम्परानिष्ठ परिवार की ब्राह्मण बालिकाओं तक में भी नवीन भूषाचार (फैशन) चालू कर दिया है। वे अब अपने मुख में हरिद्रा-चूर्ण के स्थान में 'चैरी ब्लाज़म पाउडर' तथा 'वेजिलिन स्नो' लगाती हैं तथा फ्रांसीसी लड़कियों की भाँति अपने बाल कटवाती हैं। इस प्रकार के अनुकरण की हेय प्रवृत्ति भारत में हमारे बालकों तथा बालिकाओं के मन में अनधिकृत रूप से प्रवेश कर गयी है। हमारे प्राचीन ऋषियों तथा मनीषियों के पवित्र आदर्शों तथा उपदेशों की सर्वथा उपेक्षा की जा रही है। यह क्या ही शोचनीय अवस्था है! यदि जान्सन अथवा रसेल जैसा कोई पाश्चात्य विद्वान् विकास, गति, परमाणु, सापेक्षता अथवा अनुभवातीत सिद्धान्त के रूप में कोई बात प्रस्तुत करता है तभी लोग उसे सच मानेंगे। निस्सन्देह, यह लज्जास्पद बात है। उनके मस्तिष्क विदेशी कणिकाओं से अवरुद्ध हैं। उनमें दूसरों में वर्तमान किसी गुण को आत्मसात् करने के लिए मस्तिष्क ही नहीं है। भारत में आज के नवयुवकों तथा नवयुवतियों का दुःखद अधःपतन हुआ है। यह ऐसा युग है जब वे रिक्शा, कार, ट्राम, साइकिल अथवा वाहन के बिना थोड़ी दूर भी नहीं चल सकते। क्या ही अत्यधिक कृत्रिम जीवन है! भारत की महिलाओं में कन्धों तक बाल कटाने की प्रवृत्ति ने घोर संक्रामक रोग का रूप ले लिया है। इसने समस्त भारत को आक्रान्त कर रखा है। यह सब काम तथा लोभ की शरारत के कारण है।

आजकल के नवयुवक पाश्चात्य लोगों का अन्धाधुन्ध अनुकरण करते हैं। इसके परिणामस्वरूप उनका अपना विनाश होता है। लोग कामुकता से दोलायमान हैं। वे अपने सदाचार तथा दिक्कालबोध खो बैठे हैं। वे कभी भी सदसद् में विवेक नहीं करते। वे अपना लज्जाभाव भी सर्वथा खो बैठते हैं।

यदि आप सत्र-न्यायालयों के समक्ष न्यायिक विचारार्थ आने वाले लूटपाट, बलात्कार, अपहरण, आक्रमण, हत्या इत्यादि अपराधों का पुरावृत्त पढ़ें तो आप पायेंगे कि इन सबके मूल में लिप्सा ही है—चाहे वह धन की लिप्सा हो अथवा विषय-सुख की। कामुकता जीवन, कान्ति, बल, जीवन-शक्ति, स्मृति, सम्पत्ति, कीर्ति, पवित्रता, शान्ति, ज्ञान तथा भक्ति को नष्ट कर डालती है।

अपनी बुद्धि पर गर्व करने वाले मनुष्य को पशु-पक्षियों से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। पशुओं में भी मनुष्य से अधिक आत्म-संयम होता है। एकमात्र इस तथाकथित मनुष्य ने ही अति-भोग से अपनी अधोगति कर ली है। वह कामोत्तेजना के आवेश में आ कर ही हेय कृत्य को बारम्बार दोहराता है। उसमें

रञ्चमात्र भी आत्म-संयम नहीं होता है। वह कामवासना का पूर्ण दास और उसके हाथों की कठपुतली होता है। वह खरगोशों की भाँति प्रजनन करता तथा संसार में भिक्षुओं की संख्या में वृद्धि करने के लिए अगणित बच्चों को जन्म देता है। सिंह, हाथी, बैल तथा अन्य शक्तिशाली पशुओं में मनुष्यों से अधिक आत्म-संयम होता है। सिंह वर्ष में केवल एक बार सहवास करते हैं। स्त्री जातीय पशु गर्भ धारण करने के पश्चात् जब तक उनके बच्चों का दूध पीना नहीं छूट जाता तथा जब तक वे स्वयं स्वस्थ तथा हृष्ट-पुष्ट नहीं हो जाते तब तक पुञ्जातीय पशु को अपने पास फटकने नहीं देते। मनुष्य ही प्रकृति के नियमों का उल्लङ्घन करता है। फलतः अगणित रोगों से पीड़ित होता है। उसने इस विषय में अपने को पशुओं के स्तर से भी नीचे अधःपतित कर डाला है।

जैसे राजकोष, प्रजा तथा सेना के अभाव में राजा राजा नहीं है; सुगन्ध के अभाव में पुष्प पुष्प नहीं है; जल के अभाव में सरिता सरिता नहीं है; उसी प्रकार ब्रह्मचर्य के अभाव में मनुष्य मनुष्य नहीं है। आहार, निद्रा, भय तथा मैथुन—ये पशु तथा मनुष्य दोनों में उभय निष्ठ हैं। धर्म-विवेक तथा विचार-शक्ति ही मनुष्य की पशु से विशिष्टता दर्शाता है। ज्ञान तथा विचार की प्राप्ति एकमात्र वीर्य के परिरक्षण से ही सम्भव है। यदि किसी व्यक्ति में ये विशिष्ट गुण उपलब्ध नहीं हैं तो उसकी गणना वस्तुतः साक्षात् पशु में ही की जानी चाहिए।

जब काम, जो इस संसार में सभी सुखों का स्रोत है, समाप्त हो जाता है तब समस्त सांसारिक बन्धन, जिनका आश्रय-स्थान मन है, समाप्त हो जाते हैं। सर्वाधिक साङ्घातिक विष भी काम की तुलना में कोई विष नहीं है। पूर्वोक्त तो एक शरीर को दूषित करता है; जबकि उत्तरोक्त अनुक्रमिक जन्मों में प्राप्त होने वाले अनेक शरीरों को कलुषित करता है। आप वासनाओं, कामनाओं तथा संवेगों और आकर्षणों के दास बन गये हैं। आप इस दयनीय अवस्था से कब ऊपर उठने जा रहे हैं? जो व्यक्ति यह बोध रखते हुए भी कि संसार के विनाशकारी पदार्थों में अतीत तथा वर्तमान में सुख का आत्यन्तिक अभाव है अपने विचारों के द्वारा उनसे चिपके रह कर उनमें उलझे रहते हैं, वे यदि और बुरे नाम के नहीं तो गधा कहलाने के अधिकारी तो हैं ही। यदि आप विवेक-सम्पन्न नहीं हैं, यदि आप मोक्ष के लिए यथाशक्य प्रयास नहीं करते और यदि आप अपना जीवन-काल खाने, पीने तथा सोने में ही व्यतीत करते हैं तो आप चौपाया

ही हैं। आपको उन चौपायों से कुछ पाठ सीखना है जिनमें आपकी अपेक्षा कहीं अधिक आत्म-निग्रह है।

आज मानव-जाति जो मैथुन-अपकर्ष से अभिभूत है, उसका सीधा-सा कारण यह तथ्य है कि लोग यह मान बैठते हैं कि मानव-प्राणी में एक नैसर्गिक काम-प्रवृत्ति है; किन्तु बात ऐसी नहीं है। नैसर्गिक काम-प्रवृत्ति प्रजनक होती है। यदि पुरुष-स्त्रियाँ प्रजनन तक ही सम्भोग को सीमित रखें तो यह स्वयं में ब्रह्मचर्य-पालन ही है। क्योंकि बहुसंख्यक लोगों के लिए ऐसा कर पाना असम्भव ही होता है, अतः जो लोग जीवन के उच्चतर मूल्य चाहते हैं उनके लिए पूर्ण संयम का विधान किया गया है। जहाँ तक ज्वलन्त मुमुक्षुत्व वाले साधक का सम्बन्ध है, उसके लिए ब्रह्मचर्य एक अनिवार्य शर्त है, क्योंकि वह अपना वीर्य किञ्चित् भी नष्ट नहीं कर सकता।

प्रत्येक सांसारिक कामना को तुष्ट करना पाप है। शरीर को तो दिव्य विषयों में दत्तचित्त आत्मा का दीनहीन दास होना चाहिए। मानव की रचना ही भगवान् के साथ मानसिक सम्पर्कमय जीवन-यापन करने के लिए हुई थी; किन्तु वह दुष्ट दानवों के प्रलोभन के वशीभूत हो गया। उन्होंने उसे भगवद्ध्यान से विरत करने तथा सांसारिक जीवन की ओर ले जाने के लिए उसकी प्रकृति के विषयी पक्ष का लाभ उठाया। अतः समस्त विषय-सुखों को त्यागना, विवेक तथा वैराग्य के द्वारा अपने को संसार से पृथक् करना, मात्र आत्मा के अनुरूप जीवन-यापन करना तथा भगवान् की पूर्णता तथा पवित्रता का अनुकरण करना ही नैतिक गुणवत्ता है। विषय-परायणता ज्ञान तथा पवित्रता की विरोधी है। अपवित्रता से बच कर रहना ही जीवन का परम कर्तव्य है।

आध्यात्मिक साधना यौनाकर्षण का समाधान है

पूर्ण शारीरिक तथा मानसिक ब्रह्मचर्य की संस्थापना ही वास्तविक संस्कृति है। अपरोक्षानुभूति द्वारा जीवात्मा तथा परमात्मा की ऐक्यानुभूति ही वास्तविक संस्कृति है। कामुक सांसारिक व्यक्ति को 'आत्मसाक्षात्कार', 'ईश्वर', 'आत्मा', 'वैराग्य', 'संन्यास', 'मृत्यु' तथा 'शव-भूमि' (कब्रिस्थान) शब्द बहुत ही बीभत्स तथा भयावह लगते हैं; क्योंकि वह विषयों से आसक्त है। नृत्य, सङ्गीत, महिला-सम्बन्धी चर्चा इत्यादि के शब्द उसे अत्यधिक रोचक लगते हैं।

यदि व्यक्ति संसार के मिथ्या स्वरूप का गम्भीरतापुर्वक चिन्तन करना आरम्भ

कर दे तो विषयों के प्रति उसका आकर्षण धीरे-धीरे लुप्त हो जायेगा। लोग कामाग्नि से विदग्ध हो रहे हैं। इस भीषण व्याधि के उन्मूलन के लिए सभी उपयुक्त साधनों को प्रारम्भ कर उनको उपयोग में लाना चाहिए तथा इस भयानक कामरूपी शत्रु का उन्मूलन करने में विविध प्रकार की पद्धतियों में से जो भी उनकी सहायक हों उनसे सभी लोगों को पूर्ण रूप से परिचित कराना चाहिए। यदि वे एक विधि से असफल हो जाते हैं तो अन्य विधि का आश्रय ले सकते हैं। काम तो असंस्कृत लोगों में पायी जाने वाली एक पाशविक प्रवृत्ति है। इस बात से पूर्ण अवगत होते हुए भी कि पवित्रता की प्राप्ति तथा सतत ध्यानाभ्यास के द्वारा आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करना ही जीवन का लक्ष्य है व्यक्ति को बारम्बार ऐन्द्रिक क्रियाओं को दोहराते रहने से लज्जित होना चाहिए। आपत्तिकर्ता कह सकता है कि इन विषयों की चर्चा खुले आम न करके गुप्त रूप से करनी चाहिए। यह गलत है। तथ्यों को छिपाने से क्या लाभ है? तथ्यों को छिपाना तो पाप है।

आधुनिक संस्कृति तथा नवीन सभ्यता के इन दिनों में, वैज्ञानिक प्रगति के इस युग में सम्भवतः कुछ लोगों को ये पंक्तियाँ रुचिकर न लगें। वे टिप्पणी कर सकते हैं कि इनमें कुछ शब्द कर्णकटु, बीभत्स, क्रोधजनक तथा अश्लील हैं तथा सुसंस्कृत रुचि वाले व्यक्तियों के लिए उपयुक्त न होंगे। यह उनकी नितान्त भूल है। ये पंक्तियाँ मोक्षकामी पिपासु साधकों के मन पर बहुत गहरी छाप छोड़ेंगी। उनके मन पूर्णतः परिवर्तित हो जायेंगे। आधुनिक समाज के उच्च वर्ग के लोगों में कोई आध्यात्मिक संस्कृति नहीं है। शिष्टाचार केवल दिखावा है। आप सर्वत्र ही अत्यधिक दिखावा, पाखण्ड, मिथ्या शिष्टता, निरर्थक औपचारिकताएँ तथा रूढ़ियाँ देख सकते हैं। हृदय-तल से कुछ भी नहीं निकलता। लोगों में निष्कपटता तथा सत्यनिष्ठा का अभाव है। ऋषियों के महावाक्यों के उद्गार तथा धर्मग्रन्थों के अमूल्य उपदेश कामुक तथा सांसारिक व्यक्तियों के मन पर कुछ भी छाप नहीं छोड़ते। वे कठोर भूमि पर बोये हुए बीज के समान अथवा अपात्र व्यक्ति को प्रदान किये हुए अच्छे पदार्थ के समान हैं।

यदि मनुष्य अपवित्र जीवन यापन से होने वाली गम्भीर क्षति को स्पष्टतया जान जाता है तथा पवित्र जीवन यापन द्वारा जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने का निश्चय कर लेता है तो उसे चाहिए कि वह अपने मन को दिव्य विचारों, धारणा, ध्यान, स्वाध्याय तथा मानवता के सेवा-कार्य में व्यस्त रखे।

सभी यौनाकर्षणों का मुख्य कारण आध्यात्मिक साधना का अभाव ही है। कामुकता पर केवल काल्पनिक संयम से आपको कोई सुपरिणाम प्राप्त नहीं होगा। आपको सामाजिक जीवन की समस्त औपचारिकताओं का निर्ममतापूर्वक उच्छेदन तथा शारीरिक-व्यवहार से मुक्त पवित्र जीवन यापन करना चाहिए। आन्तरिक निम्न प्रवृत्तियों के प्रति आपकी उदारता आपको यातना-लोक में पहुँचा देगी। इस विषय में बहाना बनाने से कोई लाभ न होगा। आपको उदात्त आध्यात्मिक जीवन के अपने अभियान में सत्यशील होना चाहिए। उत्साहहीनता आपको पूर्व-दुःखावस्था में ला छोड़ेगी।

मित्रो! अब इस मायिक संसार-रूपी पङ्क से जग जाइए। कामवासना ने आपकी तबाही कर डाली है; क्योंकि आप अविद्या में निमग्न हैं। पूर्ववर्ती जन्मों में आपके कितने ही करोड़ माता, पिता, स्त्री तथा पुत्र हो चुके हैं। यह शरीर मल से पूर्ण है। इस मलदूषित शरीर का आलिङ्गन करना क्या ही लज्जा की बात है! यह केवल मूर्खता ही है। इस शरीर का मोह त्याग दीजिए। शुद्ध आत्मा की महिमा पर ध्यान के द्वारा इस शरीर के साथ तादात्म्य भी त्याग दीजिए। शरीर की उपासना त्याग दीजिए। शरीर के उपासक तो असुर तथा राक्षस हैं।

ब्रह्मचर्य : आज की तात्कालिक आवश्यकता

मेरे प्रिय भाइयो! स्मरण रखें कि आप यह अस्थिमांसमय नश्वर शरीर नहीं हैं। आप अमर, सर्वव्यापक सत्-चित्-आनन्द आत्मा हैं। आप आत्मा हैं। आप सजीव सत्य हैं। आप ब्रह्म हैं। आप परम चैतन्य हैं। आप इस परमावस्था को सच्चा ब्रह्मचर्यमय जीवन यापन करके ही प्राप्त कर सकते हैं। ब्रह्मचर्य की भावना आपके समग्र जीवन तथा प्रत्येक व्यवहार में व्याप्त हो जानी चाहिए।

लोग ब्रह्मचर्य के विषय में बातें तो करते हैं, किन्तु व्यावहारिक व्यक्ति बिरले ही होते हैं। ब्रह्मचर्य का जीवन सचमुच सङ्कटाकुल है; किन्तु लौहसङ्कल्प, धैर्य तथा अध्यवसाय वाले व्यक्ति के लिए मार्ग निर्बाध बन जाता है। हम इस क्षेत्र में सच्चे, व्यावहारिक व्यक्ति चाहते हैं; ऐसे व्यक्ति चाहते हैं जो व्यावहारिक ब्रह्मचारी हों तथा जो अपने सुपुष्ट शरीर-गठन, आदर्श जीवन, उदात्त चरित्र तथा आध्यात्मिक शक्ति से लोगों को प्रभावित कर सकें। केवल वृथालाप से कुछ भी लाभ नहीं है। हमारे पास इस क्षेत्र में तथा सभा-मञ्च पर वृथालाप करने वाले पर्याप्त व्यक्ति हैं। अब कुछ व्यावहारिक व्यक्ति आगे आयें तथा अपने अनुकरणीय जीवन तथा आध्यात्मिक प्रभामण्डल से बालकों का पथ-प्रदर्शन

करें। मैं एक बार आपको पुनः स्मरण करा देना चाहता हूँ कि '**शासनात् करणं श्रेयः**'—उपदेश करने से स्वयं करना भला है।

मनुष्य की साधारण आयु स्वाभाविक सौ वर्ष की तुलना में अब घट कर चालीस वर्ष रह गयी है। इस देश के सभी शुभचिन्तकों को इस अतीव लज्जाजनक तथा अनर्थकारी परिस्थिति पर बहुत ही ध्यानपूर्वक विचार तथा समय रहते उसका समुचित उपचार करना चाहिए। देश का भावी कल्याण युवकों पर ही पूर्णतः निर्भर करता है। संन्यासियों, सन्तों, अध्यापकों तथा माता-पिताओं का कर्तव्य है कि वे नवयुवकों में ब्रह्मचर्य-जीवन पुनः स्थापित करें। मेरा अनुरोध है कि शिक्षा-अधिकारी तथा वयोवृद्ध जन भावी पीढ़ी के उत्थानार्थ इस महत्त्वपूर्ण विषय 'ब्रह्मचर्य' की ओर अपना विशेष ध्यान दें। युवकों के प्रशिक्षण का अर्थ है राष्ट्र-निर्माण।

भारत का भावी कल्याण एकमात्र ब्रह्मचर्य पर ही पूर्णतः निर्भर करता है। संन्यासियों तथा योगियों का यह कर्तव्य है कि वे छात्रों को ब्रह्मचर्य में प्रशिक्षित करें, उन्हें आसन तथा प्राणायाम की शिक्षा दें तथा आत्मज्ञान का सर्वत्र प्रचार करें। वे स्थिति को सुधारने में बहुत-कुछ कर सकते हैं; क्योंकि वे पूर्णकालिक कार्यकर्ता हैं। उन्हें लोकसंग्रहार्थ अपनी गुहाओं तथा कुटीरों से बाहर आ जाना चाहिए।

यदि हमारी मातृभूमि राष्ट्रों की श्रेणी में उन्नत स्थान प्राप्त करना चाहती है तो उनकी सन्तानों—पुरुष तथा स्त्री दोनों—को चाहिए कि वे इस महत्त्वपूर्ण विषय 'ब्रह्मचर्य' का इसके सभी रूपों में अध्ययन करें, इसके परम महत्त्व को समझें तथा इस महाव्रत का नियमनिष्ठता से पालन करें।

अन्त में मैं अञ्जलिबद्ध हो हार्दिक प्रार्थना करता हूँ कि आप सभी शान्ति तथा समृद्धि के शत्रु कामवासना पर नियन्त्रण रखने के लिए साधना द्वारा सच्चाईपूर्वक कठोर सङ्घर्ष करें। अकृत्तिम ब्रह्मचारी इस संसार का वास्तविक महान् सम्राट् है। समस्त ब्रह्मचारियों को मेरा मूक नमस्कार! उनकी जय हो!

आप अपवित्र तथा काम-विचारों से रहित हो अपने सच्चिदानन्दरूप में महामेरु की भाँति अविचल आसीन हों! भगवान् साधकों को ब्रह्मचर्यपालन के लिए मनोबल तथा शक्ति प्रदान करें! आप अपने पवित्र निर्मल चित्त से अपनी आत्म-सत्ता के बोध में अनवरत स्थित रहें! आप सांसारिक कामनाओं तथा

महत्त्वाकांक्षाओं से मुक्त हो उस परम तत्त्व में विश्राम करें जो भोक्ता तथा भोग के मध्य सतत वर्तमान रहता है!

आपके मुखमण्डल पर दिव्य प्रभा विभासित हो!

आप सबमें दिव्य शिखा अधिकाधिक देदीप्यमान हो!

आपमें दिव्य शक्ति तथा शान्ति सदा निवास करें!

ॐ शान्तिः! शान्तिः! शान्तिः!

२

कामावेग की कार्यप्रणाली

मनुष्य अपनी प्रजाति अथवा वंशक्रम को बनाये रखने के लिए सन्तान उत्पन्न करना चाहता है। यह एक नैसर्गिक प्रजनन-प्रवृत्ति है। मैथुन की कामना इस नैसर्गिक काम-प्रवृत्ति से उत्पन्न होती है। कामवासना की प्रबलता कामावेग की तीव्रता पर निर्भर करती है।

गीता के अनुसार आवेग वेग या शक्ति है। भगवान् कृष्ण गीता (५-२३) में कहते हैं—"जो मनुष्य देह-त्याग करने से पूर्व ही काम तथा क्रोध से उत्पन्न हुए वेग को इस लोक में सहन करने में समर्थ है, वही योगी है, वही सुखी पुरुष है।"

आवेग एक महान् शक्ति है। यह मन पर प्रभाव डालता है। यह मन तक तत्काल सञ्चारित होता है।

जैसे भूतैल (पेट्रोल) अथवा वाष्प यन्त्र (इञ्जन) को सञ्चालित करता है वैसे ही नैसर्गिक प्रवृत्तियाँ तथा आवेग इस शरीर को गतिशील बनाते हैं। नैसर्गिक प्रवृत्तियाँ ही मानव के सभी कार्य-कलापों की मुख्य चालक हैं। वे शरीर को धक्का देतीं तथा इन्द्रियों को कर्मयोग में प्रवृत्त करती हैं। नैसर्गिक प्रवृत्तियाँ स्वभाव को जन्म देती हैं। नैसर्गिक आवेग प्रेरक-बल उपलब्ध कराता है जिससे समस्त मानसिक क्रियाकलाप जारी रखा जाता है। ये आवेग मानसिक शक्तियाँ हैं तथा मन और बुद्धि के माध्यम से कार्य करते हैं। वे मनुष्य के जीवन को आकार प्रदान करते हैं। उनमें ही जीवन का रहस्य है।

पुरुषों में महिलाओं के प्रति आकर्षण रजोगुण से उत्पन्न होता है। उनकी सङ्गति के प्रति अज्ञात आकर्षण तथा तज्जन्य सुख कामावेग का बीज है। यह

आकर्षण, जो प्रारम्भ में एक बुद्‌बुद के समान होता है, बाद में प्रबल मनोवेग अथवा कामवासना की भयङ्कर अनियन्त्रणीय तरङ्ग का आकार धारण कर लेता है। सावधान! जप, सत्सङ्ग, ध्यान तथा विचार के द्वारा भक्ति की आध्यात्मिक तरङ्ग उत्पन्न करें तथा इस आकर्षण को कलिकावस्था में ही नष्ट कर डालें।

आपको कामावेग की मनोवैज्ञानिक कार्यप्रणाली को समझना चाहिए। यदि शरीर में खाज हो जाती है तो उसके खुजलाने मात्र से सुखानुभूति होती है। कामावेग एक स्नायविक खुजलाहट ही है। इस आवेग के तुष्टिकरण से एक भ्रामक सुख प्राप्त होता है; किन्तु इसका उस व्यक्ति के आध्यात्मिक हित पर अनर्थकारी प्रभाव पड़ता है।

काम का पुष्प-धनुष

काम शक्तिशाली होता है। उसके पास पाँच बाणों—यथा मोहन, स्तम्भन, उन्मादन, शोषण तथा तापन—से सज्जित एक पुष्पधनुष होता है। एक बाण, जब नवयुवक कोई रमणीय रूप देखते हैं तब उन्हें मोहित करता है। द्वितीय उनका ध्यान खींचता है। तृतीय उन्हें उन्मत्त बनाता है। चतुर्थ बाण रूप के प्रति प्रखर प्रलोभन उत्पन्न करता है। पञ्चम बाण उनके हृदय में प्रदाह उत्पन्न करता तथा उन्हें जलाता है। यह उनके हृदय-प्रकोष्ठ को गहराई तक भेदता है। इस भूलोक में ही नहीं तीनों लोकों में किसी भी व्यक्ति में इन बाणों के अन्तर्निहित प्रभाव के प्रतिरोध करने की शक्ति नहीं है। इन बाणों ने भगवान् शिव तथा प्राचीनकाल के अनेक ऋषियों के हृदयों को भी विद्ध किया था। इन बाणों ने इन्द्र तक को भी अहल्या के साथ छेड़-छाड़ करने को प्रवृत्त किया था। सुकुमार कटि, पाटलवर्ण कपोल तथा रक्तिम ओष्ठों वाली युवती की सम्मोहक भृकुटियों तथा वेधनशील चितवन के द्वारा काम सीधे बाण चलाता है। चाँदनी रात्रि, इत्र तथा सुगन्धित द्रव्य, पुष्प तथा पुष्प-हार, चन्दन-लेप, माँस-मदिरा, रङ्गशाला तथा उपन्यास कामुक नवयुवकों को भ्रमित करने के लिए उसके शक्तिशाली शस्त्रास्त्र हैं। जिस क्षण उनके हृदय तीव्र कामवासना से आपूरित हो जाते हैं उसी समय तर्क तथा विवेक पलायन कर जाते हैं। वे पूर्णतया अन्धे बन जाते हैं। काम प्रतिभाशाली व्यक्तियों, महान् सुवक्ताओं, मन्त्रियों तथा शोध-छात्रों, डाक्टरों तथा विधिवक्ताओं (बैरिष्टरों) को क्रीड़ामृग अथवा नवयुवतियों की गोद के पालतू कुत्ते बना देता है। तर्क ने अस्थायी रूप से विद्वान् पण्डितों अथवा अध्यापकों की शुष्क बुद्धि में अपना स्थान ग्रहण कर लिया है। उसमें कोई वास्तविक जीवट नहीं होता। काम को

उसकी शक्ति की जानकारी होती है। काम का सर्वत्र एकाधिपत्य होता है। वह सबके हृदयों में प्रवेश कर जाता है। उसे उनके स्नायुओं के गुदगुदाने की विधि ज्ञात है। वह नवयुवकों की कामवासना को उत्तेजित करने मात्र से उनके तर्क, विवेक तथा बुद्धि को पल-भर में नष्ट कर डालता है।

स्वप्नकाल में जब सभी इन्द्रियाँ निष्क्रिय रहती हैं उस समय भी कामदेव का पूर्ण अधिकार रहता है। महिलाएँ उसकी अचूक प्रतिनिधि होती हैं। वे सदा इसके इशारे पर नाचती हैं। कामदेव उनके मन्द स्मित, सम्मोहक चितवन तथा मधुर वाणी के माध्यम से, उनके श्रुतिमधुर गीतों तथा स्त्री-पुरुष के सम्मिलित नृत्यों के माध्यम से कर्म करता है। युवतियाँ पुरुषों का विनाश-कार्य शीघ्र सम्पन्न करती हैं तथा ऋषियों तक की मानसिक शान्ति भङ्ग कर सकती हैं। कामदेव ब्रह्मचारियों के सुन्दरी युवती महिलाओं के चित्रों के विषय में सोचते ही, उनके कङ्कणों तथा नूपुरों की मन्द ध्वनि सुनते ही, उनके प्रफुल्लित मुख के विषय में चिन्तन करते ही काल्पनिक आमोद के उन्माद में उनके स्नायु-तन्त्र को कम्पायमान कर सकता है। तब स्पर्श के सम्बन्ध में कहना ही क्या है!

चित्त के संस्कार

मैथुन से चित्त में संस्कार उत्पन्न होता है। यह संस्कार मन में वृत्ति (विचार-ऊर्मि) उत्पन्न करता है और यह वृत्ति पुनः संस्कार को जन्म देती है। भोग से वासनाएँ प्रगाढ़ होती हैं। स्मृति तथा कल्पना के द्वारा कामवासना पुनर्जीवित हो उठती है।

स्त्री की मूर्ति की स्मृति मन को अशान्त करती है। यदि व्याघ्र ने एक बार मानव-रक्त का स्वाद ले लिया है तो वह सदा मानव-प्राणी को मारने के लिए दौड़ता है। वह नरभक्षी बन जाता है। इसी भाँति यदि मन को एक बार यौन-सुख का स्वाद मिल गया तो वह सदा स्त्रियों के पीछे भागता रहता है।

स्मृति के द्वारा मन में संस्कारों तथा वासनाओं की तह से कल्पना प्रकट होती है। तत्पश्चात् आसक्ति आती है। कल्पना के साथ ही मनोभाव तथा आवेग प्रकट होते हैं। मनोभाव तथा आवेग पास-पास रहते हैं। तदनन्तर कामोत्तेजना—मन तथा सारे शरीर में लिप्सा तथा जलन—आती है। जिस प्रकार पात्र के अन्दर रखा जल रिस कर पात्र के बाहरी भाग पर आ जाता है उसी प्रकार मन में स्थित कामोत्तेजना तथा जलन मन से स्थूल शरीर मे फैल जाती है। यदि आप

अत्यधिक सावधान रहें तो असद् कल्पनाओं को प्रारम्भ में ही भगा सकते हैं तथा आसन्न सङ्कट का परिहार कर सकते हैं। यदि आप कल्पना-रूपी चोर को प्रथम द्वार में प्रवेश करने भी दें तो द्वितीय द्वार पर जब कामोत्तेजना प्रकट हो, सावधानीपूर्वक निगरानी रखें। अब आप जलन को बन्द कर सकते हैं। आप प्रबल कामावेग को इन्द्रिय तक पहुँचाये जाने को भी सुगमता से रोक सकते हैं। उड्डीयान-बन्ध तथा कुम्भक-प्राणायाम द्वारा काम-शक्ति को मस्तिष्क की ओर ऊपर ले जाइए। मन को दूसरी दिशा में ले जाइए। ॐ अथवा किसी अन्य मन्त्र का एकाग्र मन से जप कीजिए। प्रार्थना कीजिए। ध्यान कीजिए। इस पर भी यदि मन का नियन्त्रण करना दुष्कर प्रतीत हो तो तत्काल सत्सङ्ग में जाइए तथा अकेले न रहिए। जब प्रबल कामावेग अकस्मात् प्रकट होता है और इन्द्रिय तक पहुँचा दिया जाता है तब आपको सबकुछ विस्मृत हो जाता है और आप विवेकशून्य हो जाते हैं। आप काम के शिकार बन जाते हैं। बाद में आप पश्चात्ताप करते हैं।

एक अन्धे व्यक्ति में भी, जो ब्रह्मचारी है और जिसने स्त्री का मुख नहीं देखा है, कामावेग अतीव प्रबल होता है। ऐसा क्यों है? यह पूर्वजन्म के संस्कारों की प्रबलता के कारण है जो अवचेतन मन में अतःस्थापित होते हैं। जो-कुछ भी आप करते हैं, जो-कुछ भी आप सोचते हैं, वह सब चित्त अथवा अवचेतन मन की परतों में रखे रहते अथवा मुद्रित होते रहते अथवा अङ्कित होते रहते हैं। इन संस्कारों को आत्मा अथवा परमात्मा के ज्ञानोदय के द्वारा ही विदग्ध किया जा सकता अथवा मिटाया जा सकता है। जब कामवासना समस्त मन तथा शरीर को आपूरित कर लेती है तब संस्कार एक बड़ी वृत्ति का आकार धारण कर बेचारे नेत्रहीन व्यक्ति को उत्पीड़ित करते हैं।

चेतन मन को नियन्त्रित करना सुकर है; किन्तु अवचेतन मन को नियन्त्रित करना बहुत ही दुष्कर है। आप एक संन्यासी हो सकते हैं। आप एक सदाचारी व्यक्ति हो सकते हैं। ध्यान दें कि आपका मन स्वप्न में कैसा व्यवहार अथवा आचरण करता है। आप स्वप्न में चोरी करना आरम्भ करते हैं। आप स्वप्न में व्यभिचार करते हैं। कामावेग, महत्त्वाकांक्षाएँ तथा अधम कामनाएँ—ये सभी आपमें जटित तथा अवचेतन मन में बद्धमूल हैं। अवचेतन मन तथा इसके संस्कारों को विचार, ब्रह्मभावना तथा 'ॐ' और उसके अर्थ पर ध्यान के द्वारा विनष्ट कीजिए। जो व्यक्ति मानसिक ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित है उसके स्वप्न में कभी

भी एक भी दुर्विचार नहीं हो सकता है। वह कभी भी दुस्स्वप्न नहीं देख सकता है। स्वप्न में विवेक तथा विचार के अभाव होता है। यही कारण है कि विवेक तथा विचार की शक्ति द्वारा जाग्रतावस्था में निष्पाप होने पर भी आपको दुस्स्वप्न दिखायी देते हैं।

एक साधक अपनी व्यथा निवेदन करता है : "जब मैं ध्यान करता रहता हूँ तब मेरे अवचेतन मन से मल की परतों के बाद परतें उठती रहती हैं। कभी-कभी तो इतनी प्रबल तथा विकट होती हैं कि मैं किङ्कर्तव्यविमूढ़ हो जाता हूँ कि उन्हें क्योंकर नियन्त्रित किया जाये। मैं सत्य तथा ब्रह्मचर्य में पूर्णतः प्रतिष्ठित नहीं हूँ। कामवसना तथा असत्य बोलने की पुरानी आदतें अब भी मुझमें छिपी पड़ी हैं। कामवासना मुझे तीव्र कष्ट दे रही है। स्त्री का विचार मात्र मेरे मन को क्षुब्ध करता है। मेरा मन इतना संवेदनशील है कि मैं उनके विषय में सुन अथवा सोच नहीं सकता। मन में ज्यों-ही विचार आता है त्यों-ही मेरी साधना भङ्ग हो जाती है और सारे दिन की शान्ति भी खराब हो जाती है। मैं अपने मन को समझाता हूँ, फुसलाता हूँ, डराता हूँ; फिर भी सब निरर्थक। मेरा मन विद्रोह कर बैठता है। मैं नहीं जानता कि इस कामवासना को कैसे नियन्त्रित किया जाये। उत्तेजनशीलता, अहङ्कार, क्रोध, लोभ, घृणा तथा आसक्ति अभी तक मुझमें गुप्त रूप से विद्यमान हैं। कामुकता मेरा मुख्य शत्रु है और यह अत्यधिक बलवान् भी है। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि कृपया मुझे यह परामर्श दें कि इसे क्योंकर विनष्ट किया जाये।"

जब अवचेतन मन से मल निकल कर प्रबल शक्ति से चेतन मन के धरातल पर जायें तो उनका प्रतिरोध करने का प्रयास न कीजिए। अपने इष्टमन्त्र का जप कीजिए। अपने दोषों अथवा दुर्गुणों के विषय में अधिक चिन्तन न कीजिए। यदि आप अन्तर्निरीक्षण करें तथा अपने दोषों का पता लगा लें तो यही पर्याप्त होगा। दुर्गुणों पर आक्रमण न करें। तब वे अपने उदास मुख दिखलायेंगे। धनात्मक गुणों का विकास करें। आप अपने को प्रायः चिन्ताग्रस्त न बनाते रहें कि मुझमें कितने ही दोष तथा दुर्बलताएँ हैं। सात्त्विक गुणों का विकास कीजिए। ध्यान के द्वारा धनात्मक गुणों के विकास से तथा प्रतिपक्ष-भावना-प्रणाली से सभी ऋणात्मक गुण स्वतः ही नष्ट हो जायेंगे। यही उपयुक्त विधि है।

आप वृद्ध हो सकते हैं, आपके केश श्वेत हो सकते हैं; किन्तु आपका मन सदा

युवा ही रहता है। जिस समय आप जराजीर्णता की परिपक्वता को पहुँच गये हों, उस समय आपका सामर्थ्य भले ही तिरोभूत हो गया हो, किन्तु तृष्णा बनी रहती है। तृष्णाएँ ही जन्म की वास्तविक बीज हैं। ये बीज-रूपी तृष्णाएँ सङ्कल्प तथा कर्म उत्पन्न करती हैं और ये तृष्णाएँ ही संसार-चक्र को घुमाती रहती हैं। इन्हें कलिकावस्था में ही नष्ट कर डालिए। तभी आप सुरक्षित रह पायेंगे। आपको मोक्ष प्राप्त होगा। ब्रह्मभावना, ब्रह्मचिन्तना, ॐ का ध्यान तथा भक्ति—गहराई में रोपित इन तृष्णा-रूपी बीजों का उन्मूलन करेंगे। आपको इन्हें विविध कोनों से भली-भाँति खोज निकालना तथा विदग्ध करना होगा जिससे ये पुनरुज्जीवित न हो सकें। तभी आपके प्रयास निर्विकल्प-समाधि का फल देंगे।

एक विद्यार्थी मुझे लिखता है : "अशुद्ध मांस तथा त्वचा मुझे अत्यन्त शुद्ध तथा अच्छे प्रतीत होते हैं। मैं बहुत ही कामुक हूँ। मैं सभी स्त्रियों के प्रति मानसिक मातृभाव विकसित करने का प्रयास करता हूँ। मैं महिला को कालीदेवी का रूप मान कर उसके समक्ष मानसिक साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ। तथापि मेरा मन अत्यन्त कामुक है। ऐसी स्थिति में मैं क्या करूँ? मैं सुन्दरी स्त्री की बार-बार झलक पाना चाहता हूँ।" स्पष्ट है कि उसके मन में विवेक तथा वैराग्य का रञ्चमात्र उदय नहीं हुआ है। पूर्व के पापमय संस्कार तथा वासनाएँ अत्यन्त प्रबल हैं।

निष्पाप ब्रह्मचारी भी प्रारम्भ में कुतूहल द्वारा कष्ट उठाता है। उसमें यह जानने तथा अनुभव करने का कुतूहल होता है कि सम्भोग किस प्रकार का सुख प्रदान करेगा। वह कभी-कभी सोचता है : "एक बार मैं स्त्रीसम्भोग कर लूँ तो मैं इस कामावेग तथा कामवासना का पूर्णतः उन्मूलन कर सकूँगा। यह यौन-सम्बन्धी कुतूहल मुझे बहुत कष्ट दे रहा है।" मन इस ब्रह्मचारी को धोखा देना चाहता है। माया कुतूहल के द्वारा विनाश करती है। कुतूहल प्रबल इच्छा में रूपान्तरित हो जाता है। विषयोपभोग कामनाओं को तुष्ट नहीं कर सकता। अतः कुतूहल की प्रबल तरङ्ग को विचार अथवा शुद्ध लिङ्गहीन आत्मा-सम्बन्धी जिज्ञासा, सतत-ध्यान से कामवासना के पूर्ण उन्मूलन तथा ब्रह्मचर्य की महिमा और अपवित्र जीवन के दोषों के चिन्तन द्वारा नष्ट करना ही विवेकपूर्ण उपाय है।

अपने मानसिक ब्रह्मचर्य को कैसे मापें

एक सुन्दरी युवती का वीक्षण एक कामुक व्यक्ति के मन में आकर्षण तथा संक्षोभ, हृदय-भेदन तथा गम्भीर उन्माद उत्पन्न करता है। यदि किसी व्यक्ति में ये

लक्षण विद्यमान नहीं हैं तो यह उसके ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित होने के चिह्न का द्योतक है। पशु-पक्षियों के जोड़ा खाने अथवा युग्मन अथवा एक महिला के अनावृत्त शरीर के दृश्य से रञ्चमात्र भी संक्षोभ उत्पन्न नहीं होना चाहिए।

यदि रुग्णावस्था-काल में ब्रह्मचारी के मन में स्त्री के सङ्ग की भावना उठती है, यदि उसकी सङ्गति में रहने की प्रबल कामना है, यदि उसके साथ वार्तालाप करने, खेलने तथा हास-परिहास करने की इच्छा है, यदि एक सुन्दरी युवती को देखने की चाह है, यदि उसकी दृष्टि अपवित्र तथा व्यभिचारी है और यदि शरीर में पीड़ा के समय स्त्री के हाथों के स्पर्श की कामना है तो स्मरण रहे कि उसके मन में कामुकता अभी भी छिपी हुई है। उसमें तीव्र यौन-लालसा है। इसे नष्ट करना चाहिए। पुराना चोर अब भी छिपा हुआ है। ऐसे ब्रह्मचारी को बहुत ही सावधान रहना चाहिए। वह अब भी खतरे के क्षेत्र के भीतर ही है। उसने ब्रह्मचर्य की अवस्था को प्राप्त नहीं किया है। स्वप्न में भी मन में नारी के स्पर्श अथवा सङ्ग की लालसा नहीं उठनी चाहिए। व्यक्ति के ब्रह्मचर्य की माप स्वप्न में हुई उसकी अनुभूतियों के द्वारा की जा सकती है। यदि व्यक्ति स्वप्न में कामुक विचारों से पूर्णतः मुक्त रहता है तो वह ब्रह्मचर्य की पराकाष्ठा को पहुँच गया है। आत्मविश्लेषण तथा आत्मनिरीक्षण व्यक्ति के मन की दशा के निर्धारण के लिए अपरिहार्य आवश्यकताएँ हैं।

ज्ञानी को स्वप्नदोष नहीं होते। जो ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित है वह एक भी दुस्स्वप्न नहीं देखता। स्वप्न हमारी मानसिक दशा अथवा मानसिक शुद्धता की मात्रा आँकने की कसौटी का काम करता है। यदि आपको अशुद्ध स्वप्न नहीं दिखता तो आप ब्रह्मचर्य में प्रगति कर रहे हैं।

काम-भाव ही मन से लुप्त हो जाना चाहिए। शुकदेव को ऐसी अनुभूति थी। शुकदेव ने विवाह नहीं किया। वह अपना गृह त्याग कर विशाल विश्व में नङ्ग-धड़ङ्ग विचरण करने लगे। उनके पिता व्यास के लिए यह पुत्र-वियोग बहुत ही दुःखदायी था। व्यास अपने पुत्र की खोज में बाहर निकल पड़े। जब वे एक सरोवर के पास से जा रहे थे, अप्सराएँ जो स्वच्छन्द जलक्रीड़ामग्न थीं, लज्जित हो गयीं और शीघ्र ही अपने वस्त्र धारण कर लिये। व्यास ने कहा : "निस्सन्देह यह एक आश्चर्य की बात है। मैं वृद्ध हूँ और वस्त्र धारण किये हूँ; किन्तु जब मेरा पुत्र इस मार्ग से विवस्त्र अवस्था में गया तब आप सब शान्त तथा अप्रभावित

रहीं।" अप्सराओं ने उत्तर दिया : "पूज्य ऋषिवर ! आपके पुत्र को स्त्री-पुरुष का भेद ज्ञात नहीं है; किन्तु आपको ज्ञात है।"

कामुकता का उन्मूलन सुकर कार्य नहीं है

आपको अपने हृदय के विभिन्न कोनों में छिपे हुए इस भयानक काम-शत्रु को सावधानीपूर्वक खोज निकालना होगा। जिस प्रकार लोमड़ी झाड़ी में छिपी रहती है, उसी प्रकार यह कामुकता मन के अधःस्तर तथा कोनों में छिपी रहती है। यदि आप जागरूक रहेंगे तभी आप इसकी उपस्थिति का पता पा सकते हैं। गहन आत्मपरीक्षण परम आवश्यक है। जिस प्रकार शक्तिशाली शत्रुओं को आप तभी पराजित कर सकते हैं जब आप उन पर सभी दिशाओं से आक्रमण करें; उसी प्रकार आप अपनी शक्तिशाली इन्द्रियों को तभी नियन्त्रण में रख सकते हैं जब आप उन पर ऊपर-नीचे, अन्दर-बाहर—चारों ओर से आक्रमण करें।

इन्द्रियाँ बहुत ही उपद्रवी हैं। उपदंश उत्पन्न करने वाले शक्तिशाली संक्रमित विषाणु (वाइरस) पर चिकित्सक विलेपन, अन्तःक्षेपण (सूई), मिश्रण, चूर्ण आदि विविध युक्तियों से सभी दिशाओं से आक्रमण करता है। इसी प्रकार इन्द्रियों का निग्रह भी उपवास, आहार-संयम, प्राणायाम, जप, कीर्तन, ध्यान, विचार अथवा 'मैं कौन हूँ' की जिज्ञासा, प्रत्याहार, दम, आसन, बन्ध, मुद्रा, चित्तवृत्ति-निरोध, वासना-क्षय आदि विविध उपायों से करना चाहिए।

मात्र इस तथ्य के कारण कि आप कई वर्षों तक अविवाहित जीवन यापन कर चुके हैं अथवा आप किञ्चित् शान्ति अथवा शुद्धता का अनुभव कर रहे हैं मूर्खतापूर्वक यह समझने की भूल न करें कि आप कामुकता से अपना पीछा छुड़ाने में सफल हो गये हैं। आप इस भ्रम के शिकार न बनें कि आपने आहार में किञ्चित् समायोजन, प्राणायाम के अभ्यास तथा स्वल्प जप के द्वारा कामवासना का पूर्णतया उन्मूलन कर डाला है और अब करने को कुछ शेष नहीं रहा। प्रलोभन अथवा मार आपको किसी क्षण पराभूत कर सकता है। निरन्तर जागरूकता तथा कठोर साधना की परम आवश्यकता है। परिमित प्रयास से आप पूर्ण ब्रह्मचर्य को प्राप्त नहीं कर सकते हैं। जिस प्रकार एक शक्तिशाली शत्रु को मारने के लिए यन्त्र-तोप (मशीनगन) की आवश्यकता होती है उसी प्रकार इस शक्तिशाली शत्रु काम का विनाश करने के लिए सतत प्रबल तथा प्रभावशाली साधना आवश्यक है। ब्रह्मचर्य में अपनी थोड़ी-सी उपलब्धि से आप अभिमान से न फूलिए। यदि आपकी परीक्षा ली गयी तो आप निराशाजनक रूप से

असफल होंगे। अपनी त्रुटियों से सदा अभिज्ञ रहें तथा उनसे अपना पीछा छुड़ाने के लिए सदा प्रयत्नशील रहें। सर्वोच्च प्रयास आवश्यक है। तभी आपको इस दिशा में प्रत्याशित सफलता प्राप्त होगी।

सिंह, व्याघ्र अथवा हाथी को पालतू बनाना सुकर है, नाग के साथ क्रीड़ा करना भी सुकर है, अग्नि के ऊपर चलना भी सुकर है, हिमालय को उखाड़ लेना सुकर है, युद्ध-क्षेत्र में विजय प्राप्त करना भी सुकर है; किन्तु काम का उन्मूलन करना दुस्साध्य है। इस काम-शक्ति ने ही विकास की प्रारम्भिक अवस्थाओं से ले कर युग-युगान्तरों तक सन्तान-प्रजनन तथा बहुलीकरण की नैसर्गिक प्रवृत्ति को बनाये रखा। अतः इस शक्ति के नियन्त्रण तथा दमन के समस्त प्रयासों के होते हुए भी, यह बलात् प्रकट होने तथा साधक को पराजित करने का प्रयास करती है।

तथापि इससे आपको किञ्चित् निराश नहीं होना चाहिए। ईश्वर, उनके नाम तथा उनकी कृपा में विश्वास रखें। प्रभु की कृपा के बिना मन से कामवासना का पूर्णतया उन्मूलन करना सम्भव नहीं है। यदि आपकी ईश्वर में श्रद्धा है तो आपको अवश्यमेव सफलता प्राप्त होगी। आप पल मात्र में ही काम को नष्ट कर सकते हैं। ईश्वर मूक व्यक्ति को वाचाल तथा पंगु को दुरारोह पर्वत पर आरोहण-योग्य बना देते हैं। मानव-प्रयास मात्र ही पर्याप्त नहीं है। भगवत्कृपा की आवश्यकता है। ईश्वर उसकी सहायता करते हैं जो अपनी सहायता स्वयं करते हैं। यदि आप निःशेष आत्मसमर्पण कर दें तो स्वयं प्रकृति माता आपकी साधना करेंगी।

पुराने संस्कार तथा वासनाएँ चाहे कितने ही बलशाली क्यों न हों नियमित ध्यान तथा मन्त्र-जप, सात्त्विक आहार, सत्सङ्ग; प्राणायाम, शीर्षासन तथा सर्वाङ्गासन का अभ्यास, स्वाध्याय, विचार तथा किसी पवित्र सरिता-तट पर तीन महीनों तक एकान्तवास से पूर्णतः नष्ट हो जायेंगे। धनात्मक ऋणात्मक पर सदा विजयी होता है। जो भी हो, आपको हतोत्साहित नहीं होना चाहिए। ध्यान में गम्भीरतापूर्वक निमग्न हो जाइए, इस मार (काम) को मार डालिए तथा संग्राम में विजयी बनिए। वैभवशाली योगी के रूप में ख्याति प्राप्त कीजिए। आप नित्य-शुद्ध आत्मा हैं। हे विश्वराजन् ! इसका अनुभव कीजिए।

कामावेगों को कठिनाई से नियन्त्रित किया जा सकता है। जब आप कामावेगों को नियन्त्रित करने का प्रयत्न करते हैं तो वे विद्रोह कर बैठते हैं। काम-शक्ति को आध्यात्मिक पथ पर निर्दिष्ट करने के लिए दीर्घकाल तक निरन्तर जप तथा ध्यान की आवश्यकता है। काम-शक्ति का ओज-शक्ति में पूर्ण उदात्तीकरण आवश्यक

है। तभी आप पूर्णतः सुरक्षित रह पायेंगे। तभी आप समाधि में प्रतिष्ठित होंगे, क्योंकि तब रसास्वाद पूर्णतः लुप्त हो जायेगा। कामावेगों के उन्मूलन तथा विचार, वाणी तथा कर्म में पूर्ण शुद्धता की प्राप्ति के लिए परम धैर्य, निरन्तर जागरूकता, अध्यवसाय तथा कठोर साधना की आवश्यकता है।

ब्रह्मचर्य केवल निरन्तर प्रयास द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। यह एक दिन या एक सप्ताह में उपलब्ध नहीं किया जा सकता है। कामवासना निश्चय ही बहुत शक्तिशाली है। यह आपकी प्राणान्तक शत्रु है। किन्तु आपका परम शक्तिशाली मित्र भगवन्नाम है। यह कामवासना को आमूल नष्ट कर डालता है। अतः सदा जप तथा कीर्तन करें : "राम, राम, राम।"

योगाभ्यास, ध्यान इत्यादि कामवासना को अत्यधिक मात्रा में क्षीण कर देंगे; किन्तु एकमात्र आत्मसाक्षात्कार ही कामवासना तथा संस्कारों को पूर्णतया नष्ट तथा विदग्ध कर सकता है। भगवद्गीता ने ठीक ही कहा है : "संयमी (इन्द्रियों द्वारा विषयों को न ग्रहण करने वाले) व्यक्ति के इन्द्रिय-विषय तो निवृत्थ हो जाते हैं; पर राग निवृत्त नहीं होता। किन्तु यह राग भी व्यक्ति के आत्मसाक्षात्कार करने के पश्चात् निवृत्त हो जाता है।"

काम की सहज प्रवृत्ति एक सर्जनात्मक शक्ति है। यदि आप आध्यात्मिक आदर्शों से प्रेरित नहीं हैं, नैसर्गिक काम-प्रवृत्ति का निरोध कठिन है। काम-शक्ति को उच्चतर आध्यात्मिक पथ में निर्दिष्ट कीजिए। इसका उदात्तीकरण होगा। यह दिव्य शक्ति में रूपान्तरित हो जायेगी। तथापि काम का पूर्ण उन्मूलन व्यक्तिगत प्रयास से नहीं हो सकता है। यह केवल भगवत्कृपा से ही निष्पन्न हो सकता है।

३

विभिन्न व्यक्तियों में लालसा की उत्कटता

काम एक अत्यन्त प्रबल इच्छा है। बारम्बार की पुनरावृत्ति अथवा बारम्बार के उपभोग से मृदु इच्छा प्रबल काम का रूप ले लेती है।

व्यापक अर्थ में, काम एक उत्कटेच्छा है। देशभक्तों में देश-सेवा की उत्कटेच्छा होती है। प्रथम कोटि के साधकों में भगवत्साक्षात्कार की उत्कटेच्छा होती है। कुछ व्यक्तियों में उपन्यास-वाचन की प्रबल उत्कटेच्छा होती है। उत्कटेच्छा धर्मग्रन्थों के स्वाध्याय के लिए भी होती है। परन्तु बोलचाल में काम

का अर्थ है कामुकता अथवा प्रबल यौनोपराग। यह यौन अथवा विषय-सुख के लिए कायिक लालसा है। जब मैथुन-कार्य की बहुधा पुनरावृत्ति की जाती है तो कामना बहुत ही प्रखर तथा प्रबल हो जाती है। व्यक्ति की काम-प्रवृत्ति अथवा जनन-प्रवृत्ति अपनी जाति की सुरक्षा हेतु उसके अनजाने में ही उसे मैथुन-कार्य में प्रवृत्त होने के लिए प्रेरित करती है।

काम आत्मपरिरक्षण तथा आत्मबहुलीकरण के द्वारा बाह्मीभूत होने की एक नैसर्गिक प्रवृत्ति है। यह विविधता उत्पन्न करने वाली शक्ति है जो सत्ता के एकीभवन की दिशा में अग्रसारित करने वाली शक्ति की प्रत्यक्ष रूप से विरोधी है।

काम अविद्या का कार्य अथवा उसकी उपज है। यह मन में होने वाला एक ऋणात्मक विकार है। आत्मा नित्य-शुद्ध है। आत्मा विमल, निर्मल अथवा निर्विकार है। प्रभु की लीला को बनाये रखने के लिए अविद्या-शक्ति ने ही काम का रूप धारण कर लिया है। 'चण्डीपाठ' अथवा 'दुर्गासप्तशती' में आप पायेंगे :

या देवी सर्वभूतेषु कामरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥

इसका अर्थ है : "मैं उस देवी को बारम्बार नमस्कार करता हूँ जो इन सभी प्राणियों में कामरूप से स्थित है।"

सृष्टिकर्ता ब्रह्मा को भी यह ज्ञात नहीं है कि काम का यथार्थ अधिष्ठान कहाँ है। भगवद्गीता में उल्लेख है कि इन्द्रियाँ, मन तथा बुद्धि काम के अधिष्ठान हैं। प्राणमय-कोश उसका अन्य अधिष्ठान है। वासना शरीर में सर्वत्र व्याप्त रहती है। प्रत्येक कोशाणु, प्रत्येक परमाणु, प्रत्येक अणु, प्रत्येक विद्युदणु काम से अधिप्रभारित है। काम-रूपी विशाल महासागर में अन्तर्प्रवाह, तिर्यक् प्रवाह, मध्यवर्ती प्रवाह अथवा अन्तःसागरी प्रवाह हैं। आपको उनमें से प्रत्येक को सम्पूर्ण रूप से मिटा देना चाहिए। आपको इन सभी स्थानों से काम को पूर्णतया नष्ट करना चाहिए।

काम एक वृत्ति है जो रजोगुण के प्राधान्य होने पर मनरूपी सरोवर में उठती है। राजसिक भोजन यथा मांस, मत्स्य, अण्डे, राजसिक वस्त्र तथा राजसिक जीवनचर्या, इत्र, उपन्यास-वाचन, चलचित्र, कामुक विषयों की चर्चा, कुसङ्गति, मदिरा, सभी प्रकार के मादक द्रव्य, तम्बाकू—ये सभी काम को उद्दीप्त करते हैं।

बालकों, युवकों तथा वृद्धों में कामवासना

छोटे बालकों तथा बालिकाओं में कामवासना बीजरूप में रहती है। यह उन्हें कोई कष्ट नहीं देती है। जिस प्रकार वृक्ष बीज में अन्तर्हित रहता है उसी प्रकार काम भी बालकों के मन में बीजावस्था में वर्तमान रहता है। यह वृद्ध पुरुषों तथा महिलाओं में दमित रहता है। यह कोई तबाही नहीं कर सकता है। यह केवल उन युवकों तथा युवतियों में, जो तरुणाई में पहुँच चुके हैं, कष्टप्रद बनता है। पुरुष तथा स्त्रियाँ काम के दास बन जाते हैं। वे निस्सहाय बन जाते हैं।

शैशवकाल में पुञाति तथा स्त्री-जाति के बालक तथा बालिकाओं के लिङ्ग में कोई विशेष अन्तर नहीं रहता। जब वे तारुण्य को प्राप्त होते हैं तब उनमें सशक्त परिवर्तन आ जाता है। उनकी भावनाएँ, हाव-भाव, शरीर, चाल, वार्ता, दृष्टि, चेष्टा, वाणी, स्वभाव तथा व्यवहार सर्वथा परिवर्तन हो जाते हैं।

बीज के अन्दर सूक्ष्म रूप से आम का सम्पूर्ण वृक्ष शाखाओं और पत्तियों सहित छिपा हुआ है। इसके प्रकट होने के लिए समय की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार बाल्यावस्था में कामवासना छिपी रहती है, अठारह वर्ष की अवस्था में प्रकट होती है, पचीस वर्ष की आयु में सारे शरीर में व्याप्त हो जाती है, पचीस से पैंतालीस वर्ष तक बड़ा अनर्थ करती है और फिर शनैः-शनैः क्षीण होने लगती है। मनुष्य पचीस से पैंतालीस वर्ष तक की अवस्था में बहुत से अपराध तथा अनिष्ट करते हैं। यह जीवन का सर्वाधिक क्रान्तिक काल होता है।

ज्ञानियों, आध्यात्मिक साधकों तथा गृहस्थों में कामुक विचार

ज्ञानी पुरुष में काम-वासना बिलकुल नष्ट हो जाती है। साधक पुरुष में यह भली प्रकार संयत रहती है। गृहस्थी पुरुष में, यदि इसका संयम नहीं किया जाये तो वह बड़ा अनिष्ट करती है। उसमें यह अपने पूर्ण विकसित रूप में रहती है। वह इसका विरोध नहीं कर सकता। वह निस्सहाय हो कर इसके वश में हो जाता है; क्योंकि उसकी इच्छा-शक्ति दुर्बल होती है और उसमें दृढ़ सङ्कल्प का अभाव होता है।

ज्ञानी के मन में कोई भी कामुक विचार नहीं प्रकट होता। वह जब किसी सुन्दरी युवती, शिशु अथवा वृद्धा महिला को देखता है तो उसके मनोभाव में कोई अन्तर नहीं आता। वह पुरुष अथवा स्त्री के मूल में वर्तमान एक ही शाश्वत, अमर आत्मा का दर्शन करता है। एक पुस्तक, लकड़ी का लट्ठा, प्रस्तर-खण्ड

तथा स्त्री के स्पर्श करने पर उसके मनोभाव में कोई अन्तर नहीं प्रतीत होता है। ज्ञानी में काम का विचार नहीं होता है। ऐसी ही मनःस्थिति ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित व्यक्ति की होनी चाहिए।

साधक में कामुक विचार यदाकदा ही उठते हैं; किन्तु वे नियन्त्रण में रहते हैं। वे कुछ अनिष्ट नहीं कर सकते।

तथापि, एक कामुक गृहस्थ कामपूर्ण विचारों का शिकार बनता है। सांसारिक कामुक व्यक्ति चाहता है कि उसकी पत्नी सदा उसके साथ रहे। यौन-विचार उसमें अङ्कित होता है तथा बहुत ही शक्तिशाली होता है। वह चाहता है कि सब-कुछ उसकी पत्नी ही करे। तभी वह सन्तुष्ट होता है। ऐसा केवल कामवासना के कारण है। अपनी पत्नी के मृत्यु के पश्चात् उसे भोजन में स्वाद नहीं आता, भले ही उसे निपुण रसोइयों ने पकाया हो। ऐसे व्यक्ति आध्यात्मिक पथ के लिए पूर्णतया अनुपयुक्त हैं। जब व्यक्ति को स्त्री की सङ्गति से जुगुप्सा अनुभव होती है और वह उसकी सङ्गति को सहन नहीं कर सकता है तो यह लक्षण उसमें वैराग्य जागृत होने का द्योतक है।

यदि आप स्वर्ण के प्याले में नींबू या इमली का रस भरें तो प्याला खराब नहीं होता। यदि आप पीतल या ताँबे के पात्र में भरेंगे तो रस एकदम खराब हो जायेगा और विषैला बन जायेगा। इसी प्रकार नित्य ध्यानाभ्यास करने वाले मनुष्य के शुद्ध मन में विषयवृत्तियाँ हों तो वे उसको मलिन नहीं करतीं और विकार उत्पन्न नहीं होता। यदि मलिन मन वाले पुरुषों के मन में विषय-वृत्तियाँ हों तो जब वे विषयों के सम्मुख आते हैं, उनके मन में तत्काल उत्तेजना होती है।

अधिकांश लोगों में मैथुन की लालसा बहुत तीव्र होती है। उनमें मैथुन की स्पृहा अत्यधिक होती है। कुछ व्यक्तियों में कामेच्छा यदा-कदा उत्पन्न होती है; किन्तु शीघ्र ही समाप्त हो जाती है। मन में केवल साधारण-सा उद्वेग प्रतीत होता है। आध्यात्मिक साधना की सम्यक् विधि से इसका भी पूर्णतया उन्मूलन किया जा सकता है।

पुरुषों तथा स्त्रियों में कामवासना

यद्यपि स्त्री सौम्य तथा कोमल दिखायी देती है; किन्तु क्रोधावस्था में वह अशिष्ट, रूखी तथा स्पष्ट रूप से पुरुष सदृश बन जाती है। क्रोध, प्रकोप, रोष तथा अमर्ष के प्रभाव में आ कर उसकी नारीसुलभ शालीनता लुप्त हो जाती है।

क्या आपने कभी स्त्रियों को सड़क पर लड़ते हुए देखा है? स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक ईर्ष्यालु होती हैं। उनमें मोह तथा कामवासना अधिक होती है। वे पुरुषों से आठ गुना अधिक कामुक होती हैं। स्त्रियों में सहन-शक्ति अधिक होती है। वे अधिक भावुक होती हैं। पुरुष अधिक विवेकी होते हैं।

यद्यपि स्त्रियाँ अधिक कामुक होती हैं तथापि उनमें संयम-शक्ति पुरुषों की अपेक्षा अधिक होती है। पुरुषों को प्रलोभित करने के पश्चात् वे मौन रहती हैं। वास्तविक अपराधी पुरुष ही है। वह आक्रमणशील होता है। वही सर्वप्रथम 'वर्जित फल' का आस्वादन करता है। वह सक्रिय होता है। कामाधीन होने पर वह अपनी बुद्धि, विवेक तथा समझ खो देता है और स्त्री की गोद में पलने वाला मनोरञ्जक कुत्ता बन जाता है। पुरुष जब एक बार स्त्री द्वारा बिछाये गये जाल-पाश में आ जाता है तब उसके बच निकलने का कोई उपाय नहीं रहता।

स्त्री निष्क्रिय होती है। वह पुरुष को केवल लुभाती तथा बहकाती है। वह पुरुष के हृदय को उत्तप्त तथा उत्तेजित करती है। वह मुसकराती तथा दृष्टिपात करती है और फिर चुप हो जाती है। वह प्रतीक्षा करती है। पुरुष आक्रामक है। वही वास्तविक अपराधी है।

पुरुष ही सबसे बुरा अपराधी है। वही वास्तविक बहकाने वाला है। वह आक्रामक तथा अतिक्रामक है। यदि पुरुष की ऐसी परम नीच प्रकृति न होती तो सभी स्त्रियाँ, मीरा, मदालसा तथा सुलभा होतीं। उसे ही सर्वप्रथम सुधारना तथा नया आकार देना चाहिए। उसमें उतना आत्मसंयम नहीं होता है जितना कि स्त्रियों में होता है। स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा आठ गुना अधिक कामुक होती हैं; किन्तु उनमें कामावेग अथवा काम-प्रवृत्ति पर आठ गुना अधिक संयम-शक्ति होती है। यह पुरुष की कमजोरी है, यद्यपि वह शरीर तथा बुद्धि की दृष्टि से स्त्री की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हो सकता है।

स्त्रियाँ आपकी चाटुकारी करतीं, खुशामद करतीं तथा आपको फुसलाती हैं। वे चापलूसी की कला में प्रवीण होती हैं। उन्होंने आपको अपने रमणीय भावाभिव्यक्ति, व्यवहार, तरुणाई की मनोरमता, नखरीली चितवन, हाव-भाव तथा मुसकान से अपना दास बना रखा है। आपने अपने जीवन का पर्याप्त भाग इन्द्रिय-वासनाओं की मृगमरीचिका का पीछा करने में नष्ट कर डाला है। स्त्रियाँ अल्पकाल तक ही मनोहर प्रतीत होती हैं; किन्तु कुछ समय पश्चात् तत्काल ही वे स्वास्थ्य तथा सुख-शान्ति की विनाशक बन जाती हैं। इन लुभाने वाली स्त्रियों से

सावधान रहें जो आपको अपनी चापलूसी से फँसा लेती हैं। अब कम-से-कम अपने जीवन के शेष दिन गङ्गा जी के पावन तट पर मौन जप तथा ध्यान में व्यतीत करें।

बिच्छू की विष उसकी पूँछ में, नाग का उसके विषदन्त में, मच्छर का उसकी लार में तथा चुगलखोर का उसकी जिह्वा में होता है। स्त्री के नेत्रों में विषाक्त बाण होते हैं। वह अपनी हृदयवेधी चितवन से निकलने वाले विषाक्त बाणों से कामुक युवकों को कामवासना का सन्देश भेजती है तथा उनके हृदय को विद्ध करती है। किन्तु वह उस विवेकी व्यक्ति की कोई हानि नहीं कर सकती है जो सदा सतर्क रहता है तथा जो स्त्री के दोषों को देखता है तथा जो आत्मा के सत्-चित्-आनन्द-स्वरूप को, शुद्ध स्वरूप को जानता है।

नवयौवना कामुक महिलाओं के नेत्रों में जिह्वाएँ तथा तारयन्त्र होते हैं। वे अपनी प्रफुल्ल चितवनों के द्वारा कामुक नवयुवकों के पास अपने प्रेम-बाण तथा प्रेम-सन्देश भेजती हैं और उनके द्वारा उन्हें लुभाती तथा सम्मोहित करती हैं। जिन नवयुवकों में विवेक नहीं है वे इन प्रेम-सन्देशों से उद्विग्न हो जाते हैं और कामवासना के शिकार बनते हैं। यद्यपि उनमें उच्च महाविद्यालयीय शिक्षा होती है तथा वे उच्च पद तथा उपाधियों से सम्पन्न होते हैं तथापि वे महिलाओं के क्रीड़ा-मृग अथवा गोद में पलने वाले मनोरञ्जक कुत्ते बन जाते हैं। कैसी लज्जा की बात है! विवेक, सङ्कल्प-शक्ति तथा बुद्धि पूर्णतया लुप्त हो जाते हैं। साधको! किसी स्त्री से अधिक घनिष्ठता न बढ़ाइए। किसी मोहिनी स्त्री को रिझाने के लिए आपको जीवन के महान् आदर्शों का बलिदान नहीं करना चाहिए। शरीर की संरचना को सोचिए। जब कभी कामवासना आपको कष्ट दे तो किसी स्त्री के शव अथवा नर-कङ्काल के मानसिक चित्र को अपने सम्मुख रखिए। कामवासना को दमन करने की शक्ति आपको शनैः-शनैः प्राप्त होगी। शनैः-शनैः वैराग्योदय होगा। स्त्री के प्रति आकर्षण का कारण मन में वासनाओं की विद्यमानता है। उन्हें मिटा दीजिए। तब कोई आकर्षण नहीं रहेगा। जिन लोगों ने कामिनी तथा काञ्चन को त्याग दिया है, उन्होंने वास्तव में संसार का परित्याग कर दिया है।

४

लिङ्गभेद एक कल्पना

लिङ्ग पुरुष तथा स्त्री-जाति के मध्य वर्तमान विभेद है। यह मानसिक सृष्टि है। यह कल्पना है। यह शरीर जिन पञ्चतत्त्वों से सङ्घटित है, उनमें कोई लिङ्गभेद नहीं है। मानव-शरीर पञ्चतत्त्वों के सम्मिश्रण के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है। फिर यह लिङ्गभेद का भाव क्योंकर आया? लिङ्गभेद का विचार भ्रामक है। यह मन की एक चाल है। यह माया का इन्द्रजाल है। यह एक धारणा है। यौन-विचार बद्धमूल होता है। पुरुष कभी यह नहीं सोच सकता कि वह स्त्री है। स्त्री कभी यह नहीं सोच सकती कि वह पुरुष है।

एक जीवन्मुक्त महात्मा के लिए, यह जगत् एकमात्र ब्रह्म से आपूर्ण है। एक कामुक व्यक्ति के लिए, यह जगत् स्त्रियों से आपूर्ण है। वह यदि, एक काष्ठ-स्तम्भ को कौशेय लबादे से अथवा आकर्षक सजावट वाले अञ्चल-युक्त सुन्दर वस्त्र तथा साये से आवृत कर दें तो उससे ही अनुरक्त हो जाता है। कामवासना एक भीषण अभिशाप है। जब व्यक्ति कामवासना के अधीन होता है तो उत्तेजना तथा कामावेग उसकी समझ तथा बुद्धि को नष्ट कर डालते हैं, उसको अभिभूत कर लेते हैं तथा उसे सर्वथा असहाय बना डालते हैं।

जिस गृहस्थ ने संसार के कष्टों के परिणाम को सम्यक् रूप से समझ लिया है, वह सांसारिक जीवन से अपना पीछा छुड़ाने का प्रयास करता है। इसके विपरीत कामवासना से पूर्ण एक अविवाहित व्यक्ति व्यर्थ में यह सोचता है कि वह पत्नी तथा सन्तान के अभाव के कारण अति-दुःखी है और वह अपना विवाह करने का प्रयास करता है। यह माया है। यह मन की चाल है। सावदान रहें।

एक कामी अविहाहित व्यक्ति सदा यह सोचता रहता है : "मैं कब एक नवयुवती पत्नी के साथ जीवन-यापन कर सकूँगा?" एक वीतराग गृहस्थ, जिसमें विवेकोदय हो चुका है, सदा यह सोचता रहता है : "मैं कब अपनी पत्नी के चंगुल से मुक्त हो कर आत्मचिन्तन के लिए वन को प्रस्थान कर सकूँगा?" आप इन चिन्तनों के अन्तर पर ध्यान दें।

अपने हाथों में मृत्तिका-पात्र लिये हुए तथा गैरिक परिधान धारण किये हुए सहस्रों नवयुवक स्नातक तथा नवयुवक चिकित्सक गम्भीर ध्यान तथा

प्राणायाम-साधना के लिए उत्तरकाशी तथा गङ्गोत्तरी में गुहा की खोज में मेरे पास आते हैं तथा विज्ञान के कुछ युवक शोध-छात्र तथा कुछ राजकुमार सख्त कालर तथा टाई-युक्त रेशमी शूट (वस्त्र) में विवाह के लिए लड़कियों की खोज में पञ्जाब तथा काश्मीर जाते हैं। क्या इस संसार में सुख है अथवा दुःख? यदि सुख है तो ये शिक्षित नवयुवक व्यक्ति वनों को क्यों प्रस्थान करते हैं? यदि संसार में कष्ट है तो ये नवयुवक कामिनी, काञ्चन तथा पद के पीछे क्यों पड़े रहते हैं? माया रहस्यमयी है। मोह रहस्यमय है। जीवन की प्रहेलिका को तथा संसार की प्रहेलिका को समझने का प्रयास कीजिए।

सौन्दर्य एक मानसिक संकल्पना

माया मन की कल्पना के द्वारा तबाही करती है। स्त्री सुन्दर नहीं है; किन्तु कल्पना सुन्दर है। चीनी मधुर नहीं है; किन्तु कल्पना मधुर है। भोजन स्वादिष्ट नहीं है; किन्तु कल्पना स्वादिष्ट है। व्यक्ति दुर्बल नहीं है; किन्तु कल्पना दुर्बल है। माया तथा मन के स्वरूप को समझिए तथा बुद्धिमान बनिए। मन की इस कल्पना का विचार द्वारा निरोध कीजिए तथा ब्रह्म में विश्राम लीजिए जहाँ न कल्पना है और न विचार ही।

सुन्दरता तथा कुरूपता मन की मिथ्या कल्पनाएँ हैं। मन स्वयं एक मिथ्या तथा आभासी उपज है। अथः मन की कल्पनाएँ भी मिथ्या ही होनी चाहिए। वे सब मरुस्थल में मृगमरीचिका के समान हैं। जो वस्तु आपके लिए सुन्दर है, वही दूसरे व्यक्ति के लिए कुरूप है। सुन्दरता तथा कुरूपता शब्द सापेक्ष हैं। सुन्दरता मानसिक सङ्कल्पना मात्र है। यह केवल मानसिक प्रक्षेपण है। सभ्य वयक्ति ही शरीर की सुडौलता, सुष्ठ आकृति, चारु गति, ललित व्यवहार तथा मनोहर रूप के विषय में अधिक बातें करता है। अफ्रीका के हबशी में इन विषयों का कोई विचार नहीं होता है। वास्तविक सौन्दर्य एकमात्र आत्मा में ही है। सौन्दर्य मन में रहता है, पदार्थों में नहीं। आम मधुर नहीं है; आम का विचार मधुर है। यह सब वृत्ति है। यह मन का धोखा है, मन की सङ्कल्पना है, मन की सृष्टि है। वृत्ति को नष्ट कीजिए, सौन्दर्य लुप्त हो जायेगा। पति अपनी कुरूप पत्नी में सौन्दर्य-सम्बन्धी अपने ही विचारों को विस्तारित करता है और कामवासना के द्वारा उसे बहुत सुन्दर समझता है। शेक्सपीयर ने अपनी 'मिड समर नाइट्'स ड्रीम' पुस्तक में इसे ठीक ही व्यक्त किया है : "कामदेव को अन्धे के रूप में

चित्रित किया जाता है। वह जिप्सी महिला के रूप-रङ्ग में हेलेन के सौन्दर्य का दर्शन करता है।"

इन्द्रियाँ तथा मन आपको प्रतिक्षण धोखा देते हैं। वे आपके वास्तविक शत्रु हैं। सौन्दर्य मानसिक सृष्टि की उपज है। सौन्दर्य कल्पाना की उपज है। वह कुरूप स्त्री अपने पति के नेत्रों में ही बहुत सुन्दर प्रतीत होती है। मेरी प्रिय मित्रो! एक वृद्ध महिला की झुर्रीदार त्वचा में सौन्दर्य कहाँ है? आपकी पत्नी के शय्या-ग्रस्त होने पर सौन्दर्य कहाँ होता है? जब आपकी पत्नी कृद्ध होती है तब उसमें सौन्दर्य कहाँ होता है? एक स्त्री के मृतक शरीर में सौन्दर्य कहाँ होता है? मुख का सौन्दर्य प्रतिबिम्ब मात्र है। वास्तविक अक्षय सौन्दर्यों का सौन्दर्य—सौन्दर्यों का निर्झर—आत्मा में ही प्राप्य है। आपने सार-पदार्थ की उपेक्षा की है और काँच के टूटे टुकड़े को पकड़ रखा है। आपने अपने अशुद्ध विचार, अशुद्ध मन, अशुद्ध बुद्धि तथा अशुद्ध जीवनचर्या से क्या ही गम्भीर भूल की है? क्या आपने अपनी भूल को अनुभव किया है? क्या कम-से-कम अब आप अपने नेत्र खोलेंगे?

सुन्दर पत्नी बहुत ही मनोहर होती है। जब वह युवती होती है, जब वह मुस्कराती है, जब वह सुन्दर वस्त्र पहनती है, जब वह गाती तथा पियानो अथवा वायलिन बजाती है, जब वह नृत्यशाला में नृत्य करती है तब बहुत ही रमणीय होती है। किन्तु जब वह क्रुद्ध होती है, जब वह पति से उसके लिए रेशमी साड़ी तथा कनकसूत्र न लाने के लिए झगड़ती है, जब वह तीव्र उदरशूल अथवा इसी प्रकार के रोग से पीड़ित होती है तथा जब वह वृद्धा हो जाती है तब देखने में विकराल बन जाती है।

प्रकृति स्त्री को कुछ वर्षों तक विशेष सौन्दर्य, आकर्षण तथा लालित्य की भेंट प्रदान करती है जिससे वह पुरुषों के हृदयों को अधिकार में कर सके। यह सौन्दर्य केवल ऊपरी होता है। यह शीघ्र क्षीण हो जायेगा, केश श्वेत हो जायेंगे तथा त्वचा शीघ्र झुर्रियों से भर जायेगी। दरजी, बुनकर, बेलबूटे काढ़ने वाला, शृङ्गार करने वाला तथा स्वर्णकार कुछ क्षणों के लिए ही हमें सुन्दर बनाते हैं। व्यक्ति उत्तेजना, प्रेमोन्माद तथा भ्रम में आ कर इस बात को भूल जाता है। यह माया है। इस माया का कभी विश्वास न कीजिए। सावधान रहिए। हे मानव! जाग जाइए। उस सौन्दर्यों के सौन्दर्य का पता लगाइए जो आपके अन्दर है, जो

आपका अन्तर्तम आत्मा है। हे नारी! मीरा की भाँति गाइए और मीरा के 'गिरिधर-नागर' में विलीन हो जाइए।

क्या आपने कभी रुक कर यह विचार किया है कि 'सुन्दर' स्त्रियाँ, जो आपमें काम उद्दीप्त करती हैं, किससे सङ्घटित हैं? अस्थि, मांस, रक्त, मूत्र, विष्ठा, पीप, स्वेद, कफ तथा अन्य मलों की पोटली! क्या आप ऐसी पोटली को अपने विचारों का स्वामी बनने देंगे? क्या आप अपने शाश्वत शान्ति तथा सुख का ऐसे क्षणिक, शोरबे के गन्दे घालमेल से विनिमय करेंगे? यह आपके लिए लज्जा की बात है! क्या आपको इच्छा-शक्ति, बुद्धि तथा विवेक ऐसे लज्जास्पद उद्देश्य के लिए ही प्रदान किये गये थे? क्या आपने सुना तथा देखा नहीं है कि शारीरिक सौन्दर्य ऊपरी होता है तथा प्रत्येक गुजरने वाली दुर्घटना, रोग तथा अवस्था के आश्रित है?

स्त्री के सौन्दर्य का भ्रामक वर्णन

कवियों ने स्त्रियों के सौन्दर्य के वर्णन में अतिशयोक्ति की है। ये विभ्रान्त व्यक्ति हैं जो नवयुवकों को विपथगामी बनाते हैं। 'सम्मोहक नेत्री किशोरियाँ', 'चन्द्रानना', 'गुलाबी कपोल तथा मधुमय अधर'-जैसे वर्णन अयथार्थ तथा काल्पनिक हैं। मृत-शरीर में, वृद्धा स्त्रियों में तथा रुग्ण महिलाओं में सौन्दर्य कहाँ है? स्त्री के क्रोधोन्मत्त होने पर उसमें सौन्दर्य कहाँ होता है? आप इससे अवगत हैं तथापि आप उनके शरीरों से लिपटते हैं। क्या आप पक्के मूर्ख नहीं हैं? यह माया की शक्ति के कारण है। माया तथा मोह की शक्ति रहस्यमयी है। स्त्री का सौन्दर्य मिथ्या, कृत्रिम तथा क्षयशील होता है। सच्चा सौन्दर्य अक्षय तथा शाश्वत होता है। आत्मा सभी सौन्दर्यों का स्रोत है। वह सौन्दर्यों का सौन्दर्य है। उसका सौन्दर्य चिरस्थायी तथा अक्षय होता है। आभूषण, मनोहारी किनारी वाले रेशमी वस्त्र, केश को स्वर्ण की बालों की चिमटी (हेयर पिन) से सँवारना, पुष्प, मुख पर अङ्गराग, ओष्ठों पर ओष्ठ-विलेप, नेत्रों में अभ्यञ्जन के प्रयोग ही स्त्रियों को अस्थायी सजावट तथा चमक-दमक प्रदान करते हैं। उन्हें उनके मुख के अङ्गराग, उनके आभूषणों तथा भड़कीले वस्त्रों से वञ्चित कर दीजिए तथा किनारी-रहित सादे, श्वेत वस्त्र पहनने के लिए कहिए। अब सौन्दर्य कहाँ है? त्वचा का सौन्दर्य भ्रान्ति मात्र है।

कविजन अपनी कल्पनाशील, शृङ्गार-रस की भावदशा में वर्णन करते हैं कि सुन्दरी युवती के ओष्ठों से अमृतस्राव होता है। क्या यह वास्तव में सच है?

आप वास्तव में क्या देखते हैं? भीषण परिदर (पाइरिया)-ग्रस्त दन्तों के कोटरों से दुर्गन्धयुक्त पीप, कण्ठ से गन्दा तथा गर्हित थूक तथा रात्रि में ओष्ठों पर टपकने वाली मलदूषित लार—क्या इन सबको आप मधु तथा अमृत कहते हैं? किन्तु कामार्त, कामासक्त तथा कमोन्मत्त व्यक्ति कामवेग के प्रभाव में आने पर इन सब गन्दे मलोत्सर्ग को निगल जाता है। क्या इससे अधिक घिनावनी कोई वस्तु है? क्या ये कवि ऐसा मिथ्या वर्णन प्रस्तुत करने तथा कामार्त नवयुवकों की इतनी तबाही तथा क्षति पहुँचाने के दोषी नहीं हैं?

चमकदार त्वचा के पीछे निस्त्वचित मांस है। एक युवती स्त्री की मन्दस्मित के पीछे भ्रूभङ्ग तथा क्रोध छिपे हुए हैं। गुलाबी ओष्ठों के पीछे रोगाणु रहते हैं। सौम्यता तथा प्रिय वचन के पीछे कर्ण-कटु शब्द तथा गालियाँ प्रच्छन्न रूप से विद्यमान हैं। जीवन क्षणभंगुर तथा अनिश्चित है। हे कामार्त मानव! हृदय के अन्दर आत्मा के सौन्दर्य का साक्षात्कार कीजिए। शरीर तो व्याधि-मन्दिर है। इस संसार में राग का जाल दीर्घकालीन अति-भोग से सुदृढ़ होता है। इसने अपनी ग्रन्थिल मोटी रज्जु से आपकी ग्रीवा को ग्रथित कर रखा है।

त्वचा-रहित, वस्त्र-रहित, आभूषण-रहित स्त्री कुछ भी नहीं है। जरा एक क्षण के लिए कल्पना कीजिए की उसकी त्वचा पृथक् कर दी गयी है। आपको कौओं तथा गिद्धों को भगाने के लिए एक लाठी ले कर उसके पार्श्व में खड़ा रहना पड़ेगा। शारीरिक सौन्दर्य आभासी, भ्रामक तथा क्षीण होने वाला है। यह चर्मगत है। बाह्याकृति से धोखा न खायें। यह माया का इन्द्रजाल है। मूलस्रोत के पास, आत्मा के पास, सौन्दर्यों के सौन्दर्य के पास, चिरस्थायी सौन्दर्य के पास जाइए।

कामवासना बुद्धि को अन्धा बनाती है

यौन-सुख एक भ्रम है। यह भ्रान्ति-सुख है। यह किसी भी तरह सच्चा सुख नहीं है। यह स्नायविक गुदगुदाहट मात्र है। सभी सांसारिक सुख प्रारम्भ में अमृत-तुल्य होते हैं; किन्तु परिणाम में वे विष बन जाते हैं। भलीभाँति विचार कीजिए। हे सौम्य, मेरे प्रिय पुत्र! आवेगों तथा कामवासना के बहकावे में न आइए। इस संसार में इस माया के द्वारा कोई भी व्यक्ति लाभान्वित नहीं हुआ है। लोग अन्त में रोते हैं। किसी भी प्रौढ़ व्यक्ति से पूछिए कि क्या उसे इस संसार में रञ्चमात्र भी सुख उपलब्ध हुआ है?

शलभ अग्नि अथवा दीपक को पुष्प समझ कर उसकी ओर भागता है और

उसमें जल मरता है। इसी प्रकार, कामी व्यक्ति एक मिथ्या सुन्दर रूप की ओर यह सोच कर दौड़ता है कि उससे उसे सच्चा सुख प्राप्त होगा और कामाग्नि में अपने-आपको स्वाहा कर डालता है।

जिस प्रकार रेशम-कीट अपने बुने हुए कृमिकोष में अपने को उलझा लेता है उसी प्रकार आपने अपनी कामनाओं के जालरन्ध्र में स्वयं को उलझा रखा है। वैराग्य-रूपी छुरी से जालरन्ध्र को विदीर्ण कर डालिए और भक्ति तथा ज्ञान-रूपी दो पङ्खों से शाश्वत शान्ति के लोक में ऊँची उड़ान भरिए।

एक कामुक व्यक्ति वास्तविक अन्धा व्यक्ति है। यद्यपि वह बोधशक्तिसम्पन्न व्यक्ति हो सकता है, कामोत्तेजना से प्रभावित होने पर वह अन्धा बन जाता है। वह जब इस प्रकार के अन्धेपन से आक्रान्त होता है, तब उसकी बुद्धि व्यर्थ सिद्ध होती है। उसकी दशा दयनीय है। सत्सङ्ग, प्रार्थना, जप, जिज्ञासा तथा ध्यान इस भीषण रोग का उन्मूलन करेंगे तथा उसे ज्ञान-चक्षु प्रदान करेंगे।

पञ्चतत्त्वों में लिङ्ग-भावना नहीं होती है। शरीर में मन है और यह शरीर पञ्चतत्त्वों से सङ्घटित है। मन में कल्पना है और यह कल्पना अथवा कामैषणा ही कामवासना है। आप इस मन को जो कामवासना की पोटली मात्र है, मार डालिए। इससे आपने काम तथा सब-कुछ को मार डाला। उस कल्पना को मार डालिए। तब आपमें कामुकता नहीं रहेगी। आपने कामुकता को नष्ट कर दिया है।

लिङ्ग-भाव एक मानसी सृष्टि है। सम्पूर्ण माया तथा अविद्या शरीर-भाव अथवा लिङ्ग-भाव के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है। सम्पूर्ण आध्यात्मिक साधना इस एक भाव को नष्ट करने के लिए ही परिकलित है। इस एक भाव का विनाश ही मोक्ष है।

५

मैथुन के अति-भोग के अनर्थकारी परिणाम

सभी सुखों में सर्वाधिक ओजहीन करने तथा नैतिक पतन लाने वाला है यौन-सुख। विषय-सुख के साथ विविध दोष लगे रहते हैं। इसके साथ विविध प्रकार के पाप, दुःख, दुर्बलताएँ, आसक्तियाँ, दास-मनोवृत्ति, अदृढ़ सङ्कल्प-शक्ति, कठोर श्रम तथा सङ्घर्ष, लालसा तथा मानसिक अशान्ति लगे होते हैं। सांसारिक

व्यक्तियों पर यद्यपि विविध दिशाओं से आघात, पाद-प्रहार, मुष्टि-प्रहार आदि होते हैं; पर उनको कभी भी होश नहीं आता। गलियों में फिरने वाले कुत्ते पर प्रत्येक बार पथराव होने पर भी वह घरों में चक्कर मारना बन्द नहीं करता है।

पश्चिम के प्रख्यात चिकित्सक कहते हैं कि वीर्य-क्षय से, विशेषकर तरुणावस्था में वीर्य-क्षय से विविध प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। वे हैं : शरीर में व्रण, चेहरे पर मुँहासे अथवा विस्फोट, नेत्रों के चतुर्दिक् नीली रेखाएँ, दाढ़ी का अभाव, धँसे हुए नेत्र, रक्तक्षीणता से पीला चेहरा, स्मृति-नाश, दृष्टि की क्षीणता, मूत्र के साथ वीर्य-स्खलन, अण्डकोश की वृद्धि, अण्डकोशों में पीड़ा, दुर्बलता, निद्रालुता, आलस्य, उदासी, हृदय-कम्प, श्वासावरोध या कष्टश्वास, यक्ष्मा, पृष्ठशूल, कटिवात, शिरोवेदना, सन्धि-पीड़ा, दुर्बल वृक्क, निद्रा में मूत्र निकल जाना, मानसिक अस्थिरता, विचार-शक्ति का अभाव, दुःस्वप्न, स्वप्नदोष तथा मानसिक अशान्ति।

वीर्य-शक्ति की क्षति के पश्चात् जो अनर्थकारी उत्तर प्रभाव पड़ता है, उस पर सावधानीपूर्वक ध्यान दें। वीर्य-शक्ति को अनेकानेक बार अकारण ही नष्ट करने से लोग शरीर, मन तथा नैतिक दृष्टि से दुर्बल हो जाते हैं। शरीर तथा मन कर्मठतापूर्वक कार्य करने से इनकार कर देते हैं। शारीरिक तथा मानसिक अकर्मण्यता होती है। आपको अधिक थकान तथा कमजोरी का अनुभव होता है। आपको शक्ति की क्षति-पूर्ति के लिए दुग्धपान तथा फल और कामोद्दीपक अवलेह के सेवन की शरण लेनी होगी। स्मरण रहे कि ये पदार्थ कभी भी पूर्णतया क्षति की प्रतिपूर्ति नहीं कर सकते। एक बार नष्ट हुई तो सदा के लिए नष्ट हुई। आपको नीरस तथा विषण्ण जीवन घसीटना होगा। शारीरिक तथा मानसिक-शक्ति दिन-प्रतिदिन क्षीण होती जाती है।

जिन व्यक्तियों ने अपना वीर्य अत्यधिक नष्ट कर डाला है, वे बहुत ही चिड़चिड़े हो जाते हैं। सामान्य बातें भी उनके मन को अशान्त बना देती हैं। जिन्होंने ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन नहीं किया है, वे क्रोध, ईर्ष्या, आलस्य तथा भय के दास बन जाते हैं। यदि आपने अपनी इन्द्रियों को नियन्त्रित नहीं किया है तो आप ऐसे मूर्खतापूर्ण कार्य करने का साहस कर बैठेंगे जिन्हें बच्चे भी करने का साहस नहीं करेंगे।

जिसने जीवन-शक्ति का अपव्यय किया है वह सहज में चिड़चिड़ा बन जाता है। वह अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठता है तथा सामान्य बातों के लिए विस्फोटक प्रकोप की अवस्था में जा पहुँचता है। प्रकुपित होने पर व्यक्ति अभद्र

व्यवहार करता है। वह नहीं जानता कि वह वस्तुतः कर क्या रहा है; क्योंकि वह अपनी विचार तथा विवेक-शक्ति को खो बैठता है। वह स्वेच्छानुसार कोई भी कार्य कर बैठता है। वह अपने माता-पिता, गुरु तथा सम्मान्य लोगों का भी अपमान करता है। अतः जो साधक सद्व्यवहार के विकास के लिए प्रयत्नशील है उसके लिए यह उचित है कि वह वीर्य की रक्षा अवश्यमेव करे। इस दिव्य शक्ति का परिरक्षण सुदृढ़ सङ्कल्प-शक्ति, सद्व्यवहार, आध्यात्मिक उत्कर्ष तथा अन्ततः श्रेय अथवा मोक्ष को प्राप्त कराता है।

अत्यधिक मैथुन से शक्ति अति-मात्रा में निकल जाती है। नवयुवक इस तरल द्रव वीर्य के महत्त्व का स्पष्ट रूप से अनुभव नहीं करते। वे अमर्यादित मैथुन से इस सक्रिय शक्ति को नष्ट करते हैं। उनकी स्नायुओं को अधिक गुदगुदी होती है। वे मदोन्मत्त हो जाते हैं और क्या ही गम्भीर भूल करते हैं! यह अपराध है और इसके लिए मृत्युदण्ड अपेक्षित है। वे आत्महत्यारे हैं। एक बार नष्ट हो जाने पर इस शक्ति की किसी अन्य साधन से कभी भी क्षतिपूर्ति नहीं की जा सकती। यह संसार में सर्वाधिक बलवती शक्ति है। एक मैथुन-क्रिया मस्तिष्क तथा स्नायु-तन्त्र को पूर्णतया छिन्न-भिन्न कर डालती है। लोग मूर्खतावश यह समझते हैं कि वे खोयी हुई शक्ति को दुग्ध, बादाम तथा मकरध्वज के सेवन से पुनः प्राप्त कर लेंगे। यह एक भूल है। आपको, भले ही आप विवाहित व्यक्ति हैं, इसकी प्रत्येक बूँद के संरक्षण का यथाशक्य प्रयास करना चाहिए। आत्म-साक्षात्कार ही आपका लक्ष्य है।

एक मैथुन में अपव्यय होने वाली शक्ति दश दिन के शारीरिक कार्य में व्यय होने वाली शारीरिक शक्ति अथवा तीन दिन के मानसिक कार्य में प्रयुक्त होने वाली मानसिक शक्ति के तुल्य होती है। ध्यान दीजिए कि यह प्राणाधार द्रव, वीर्य कितना मूल्यवान् है! इस शक्ति का अपव्यय न कीजिए। इसका परिरक्षण बहुत सावधानीपूर्वक कीजिए। इससे आपको अद्भुत ओजस्विता प्राप्त होगी। वीर्य के प्रयुक्त न करने पर वह ओज-शक्ति में रूपान्तरित हो जाता है तथा मस्तिष्क में सञ्चित रहता है। पाश्चात्य चिकित्सकों को इस विशिष्ट विषय की अल्प-जानकारी ही है। आपके अधिकांस रोगों का कारण वीर्य का अत्यधिक अपव्यय ही है।

स्वप्न-दोष तथा स्वैच्छिक मैथुन—एक महत्त्वपूर्ण अन्तर

एक मैथुन-क्रिया स्नायु-तन्त्र को छिन्न-भिन्न कर डालती है। इस क्रिया में

सम्पूर्ण स्नायु-तन्त्र झकझोर उठता अथवा उत्तेजित हो जाता है। इसमें शक्ति की अत्यधिक क्षति होती है। मैथुन में अत्यधिक शक्ति नष्ट होती है; किन्तु जब स्वप्नावस्था में वीर्यपात होता है तब ऐसा नहीं होता। स्वप्नदोष में केवल शिश्न-ग्रन्थियों के रस का निःस्राव होता है। यदि इस प्राणाधार द्रव, वीर्य की क्षति होती भी है तो यह अपक्षय अधिक नहीं होता है। स्वप्नदोष में वास्तविक तत्त्व बाहर नहीं आता है। स्वप्नदोष के समय जो पदार्थ बाहर आता है, वह थोड़े-से वीर्य के साथ शिश्न-ग्रन्थियों का पतला रस मात्र होता है। जब स्वप्नदोष होता है, मन जो आन्तरिक सूक्ष्म शरीर में कार्यरत था, अकस्मात् उत्तेजित दशा में स्थूल शरीर में प्रवेश करता है। यही कारण है कि सहसा वीर्यपात हो जाता है।

स्वप्नदोष से कामवासना उद्दीप्त नहीं होती; परन्तु सच्चे साधक के विषय में स्वैच्छिक मैथुन उसकी आध्यात्मिक उन्नति में अत्यन्त हानिकारक होता है। इस क्रिया से उत्पन्न संस्कार बहुत गहरे होते हैं और ये अवचेतन मन में पहले से ही सन्निहित पूर्ववर्ती संस्कारों की शक्ति को तीव्र करते अथवा सुदृढ़ बनाते तथा कामवासना को उद्दीप्त करते हैं। यह शनैः-शनैः बुझ रही अग्नि में घी डालने के समान है। इस नये संस्कार को मिटाना एक श्रमसाध्य कार्य है। आपको मैथुन का पूर्णतया त्याग कर देना चाहिए। मन आपको असत् परामर्श दे कर नाना प्रकार से धोखा देने का प्रयास करेगा। सावधान रहें। इसकी वाणी को न सुनें। इसके स्थान में अन्तःकरण की वाणी को, आत्मा की वाणी को अथवा विवेक की वाणी को सुनने का प्रयास करें।

रक्तहीन शरीर वाले युवक

मैथुन में अत्यधिक शक्ति नष्ट होती है। स्मरण-शक्ति का ह्रास, असामयिक वृद्धावस्था, नपुंसकता, नाना प्रकार के नेत्र-रोगों तथा विविध स्नायविक रोगों के लिए इस प्राणाधार द्रव की भारी क्षति ही उत्तरदायी मानी जाती है। हृष्ट-पुष्ट तथा ओज-सम्पन्न, फुरतीले तथा द्रुत पग से गिलहरी की भाँति इधर-उधर उछलने-कूदने के स्थान में हमारे अधिकांश नवयुवक इस प्राणाधार द्रव, वीर्य की क्षति के कारण रक्तहीन, निष्प्रभ-मुखों से लड़खड़ाते हुए पैरों से चलते दिखायी पड़ते हैं जो निश्चय ही अत्यधिक शोचनीय बात है। कुछ व्यक्ति तो इतने कामुक तथा दुर्बल हैं कि स्त्री के विचार, दर्शन अथवा स्पर्श मात्र से उनका वीर्यपात हो जाता है। उनकी दशा दयनीय है।

इन दिनों हम क्या देखते हैं? लड़के तथा लड़कियाँ, पुरुष तथा स्त्रियाँ दूषित

विचार, कामवासना तथा स्वल्प विषय-सुख के सागर में निमग्न हैं। यह निश्चय ही अत्यन्त खेदजनक बात है। इनमें से कुछ लड़कों का वृत्तान्त सुन कर वास्तव में दिल दहल जाता है। महाविद्यालयों के अनेक छात्र मेरे पास स्वयं आये तथा अप्राकृतिक साधनों के परिणामस्वरूप वीर्य की अत्यधिक क्षति से उत्पन्न अपने उदास तथा विषादमय दयनीय जीवन के विषय में बताया। कामोत्तेजना तथा कामोन्माद के कारण उनकी विवेक-शक्ति नष्ट हो गयी है। जो शक्ति आप कई सप्ताह तथा महीनों में प्राप्त करते हैं उसे स्वल्प, क्षणिक विषय-सुख के लिए क्यों नष्ट करते हैं!

६

वीर्य का मूल्य

मेरे प्रिय भाइयो! प्राणभूत शक्ति, वीर्य जो आपके जीवन का आधार है, जो प्राणों का प्राण है, जो आपके चमकदार नेत्रों में चमकता है, जो आपके चमकीले कपोलों में विलसित होता है—आपके लिए एक महान् निधि है। इस बात को भलीभाँति स्मरण रखें। वीर्य रक्त का सारतत्त्व है। एक बूँद वीर्य चालीस बूँद रक्त से बनता है। यहाँ ध्यान दें कि वीर्य कितना मूल्यवान है।

वृक्ष पृथ्वी से रस प्राप्त करता है। यह रस समस्त वृक्ष में, उसकी शाखा-प्रशाखाओं, पत्तियों, उसके पुष्पों तथा फलों में परिसञ्चरित होता है। पत्तियों, पुष्पों तथा फलों में जो चमकीला रङ्ग तथा जीवन है, वह इस रस के कारण ही है। इसी भाँति अण्डकोशों की कोशिकाओं द्वारा रक्त से निर्मित किया जाने वाला वीर्य मानव-शरीर तथा इसके विभिन्न अवयवों को रङ्ग तथा तेजस्थिता प्रदान करता है।

आयुर्वेद के अनुसार वीर्य भोजन से बनने वाली अन्तिम धातु है। **रसद् रक्तम् ततो मांसम् मांसान्मेधः प्रजायते; मेधासोस्थि ततोमज्जा मज्जा शुक्रश्य संभवः।** भोजन से रस निर्मित होता है। इससे रक्त, रक्त से मांस, मांस से मेदा, मेदा से अस्थि, अस्थि से मज्जा और मज्जा से वीर्य उत्पन्न होता है। ये ही सप्त-धातुएँ हैं जो प्राण तथा शरीर को अवलम्ब देती हैं। यहाँ ध्यान दें कि वीर्य कितना बहुमूल्य है। यह अन्तिम सार पदार्थ है। यह समस्त सारों का सार है। वीर्य अस्थियों में प्रच्छादित मज्जा से उत्पन्न होता है।

प्रत्येक धातु के तीन प्रभाग हैं। वीर्य स्थूल शरीर, हृदय तथा बुद्धि को पोषित करता है। जो व्यक्ति स्थूल शरीर, हृदय तथा बुद्धि का उपयोग करता है, वही पूर्ण ब्रह्मचर्य रख सकता है। एक पहलवान जो केवल अपने शरीर का ही उपयोग करता है, किन्तु बुद्धि तथा हृदय को अविकसित रखता है, पूर्ण ब्रह्मचर्य रखने की कदापि आशा नहीं कर सकता। वह शरीर का ही ब्रह्मचर्य रख सकता है, मन तथा हृदय का नहीं। वह वीर्य जिसका सम्बन्ध हृदय तथा मन से है, निस्सन्देह बाहर बह निकलेगा। यदि कोई साधक केवल जप तथा ध्यान करता है, यदि वह हृदय को विकसित नहीं करता है और यदि वह शारीरिक व्यायाम नहीं करता तो वह केवल मानसिक ब्रह्मचर्य रख सकेगा। वीर्य का वह अंश, जो हृदय तथा शरीर के पोषण में व्यय होता है, बाहर बह निकलेगा। किन्तु एक उन्नत योगी जो गम्भीर ध्यान में प्रवेश करता है, यदि शारीरिक व्यायाम न भी करे तो भी पूर्ण ब्रह्मचर्य रख सकेगा।

वीर्य भोजन अथवा रक्त का सारतत्त्व है। आधुनिक आयुर्विज्ञान के अनुसार एक वीर्य बूँद वीर्य चालीस बूँद रक्त से बनता है। आयुर्वेद के अनुसार वीर्य की एक बूँद रक्त की अस्सी बूँदों से बनती है। अण्डकोश में स्थित दो वृषणों अथवा अण्डों को स्रावी ग्रन्थियाँ कहते हैं। अण्डकोश की ये कोशिकाएँ रक्त से वीर्य स्रावित करने के एक विशेष गुण से सम्पन्न हैं। जिस प्रकार मधुमक्षिकाएँ बूँद-बूँद करके मधुकोश में मधु एकत्रित करती हैं उसी प्रकार इन अण्डकोशों की कोशिकाएँ रक्त से एक-एक बूँद वीर्य एकत्रित करती हैं। तत्पश्चात् यह तरल द्रव दो वाहिनियों अथरा नलिकाओं द्वारा रैतस आशयक में ले जाया जाता है। उत्तेजना अथवा उद्दीपन की अवस्था में यह निषेचन-प्रणाली नामक एक विशेष वाहिनी द्वारा मूत्र-द्वार में फेंक दिया जाता है जहाँ वह पुरःस्थ-रस के साथ मिश्रित हो जाता है।

वीर्य सूक्ष्म रूप में शरीर के सभी कोशाणुओं में पाया जाता है। जिस प्रकार ईख में शर्करा तथा दुग्ध में नवनीत सर्वत्र व्याप्त होता है, उसी प्रकार वीर्य समग्र शरीर में व्याप्त रहता है। जिस प्रकार नवनीत निकाल लेने पर छाछ पतली रह जाती है उसी प्रकार वीर्य का अपव्यय होने से वह पतला पड़ जाता है। जितना ही अधिक वीर्य का अपक्षय होता है उतनी ही अधिक दुर्बलता आती है। योगशास्त्र में कहा है : **"मरणं बिन्दुपतनात् जीवनं बिन्दुरक्षणात्।"**—वीर्य का

नाश ही मृत्यु है और वीर्य की रक्षा ही जीवन है। यह मनुष्य की गुप्त निधि है। यह मुखमण्डल को ब्रह्म तेज तथा बुद्धि को बल प्रदान करती है।

आधुनिक चिकित्सकों की राय

यूरोप के प्रतिष्ठित भैषजिक व्यक्ति भी भारतीय योगियों के कथन का समर्थन करते हैं। डा॰ निकोल कहते हैं : "यह एक भैषजिक तथा दैहिक तथ्य है कि शरीर के सर्वोत्तम रक्त से स्त्री तथा पुरुष दोनों ही जातियों में प्रजनन-तत्त्व बनते हैं। शुद्ध तथा व्यवस्थित जीवन में यह तत्त्व पुनः अवशोषित हो जाता है। यह सूक्ष्मतम मस्तिष्क, स्नायु तथा मांसपेशीय ऊतकों का निर्माण करने के लिए तैयार हो कर पुनः परिसञ्चारण में जाता है। मनुष्य का यह वीर्य वापस ले जाने तथा उसके शरीर में विसारित होने पर उस व्यक्ति को निर्भीक, बलवान्, साहसी तथा वीर बनाता है। यदि इसका अपव्यय किया गया तो वह उसको स्त्रैण, दुर्बल तथा कृशकलेवर, कामोत्तेजनशील तथा उसके शरीर के अङ्गों के कार्यव्यापार को विकृत तथा स्नायुतन्त्र को असन्तोषजनक करता तथा उसे मृगी तथा अन्य अनेक रोगों और मृत्यु का शिकार बना देता है। जननेन्द्रिय के व्यवहार की निवृत्ति से शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक बल में असाधारण वृद्धि होती है।"

यदि व्यक्ति में शुक्र-स्राव अनवरत होता है तो वह या तो निष्क्रमण करेगा या पुनरवशोषित होगा। परम धीर तथा अध्यवसायी वैज्ञानिक अनुसन्धानों के परिणामस्वरूप यह पता चला है कि जब कभी भी रेतःस्राव को सुरक्षित रखा जाता तथा इस प्रकार उसका शरीर में पुनरवशोषण किया जाता है तो वह रक्त को समृद्ध तथा मस्तिष्क को बलवान् बनाता है। डा॰ डिओ लुई का विचार है कि शारीरिक बल, मानसिक ओज तथा बौद्धिक कुशाग्रता के लिए इस तत्त्व (वीर्य) का संरक्षण परमावश्यक है। एक अन्य लेखक डा॰ ई॰ पी॰ मिलर लिखते हैं : "शुक्र-स्राव का सभी स्वैच्छिक अथवा अस्वैच्छिक अपव्यय जीवन-शक्ति का प्रत्यक्ष अपव्यय है। यह प्रायः सभी स्वीकार करते हैं कि रक्त के सर्वोत्तम तत्त्व शुक्र-स्राव की संरचना में प्रवेश कर जाते हैं। यदि ये निष्कर्ष ठीक हैं तो इसका यह अर्थ हुआ कि व्यक्ति के कल्याण के लिए ब्रह्मचर्य-जीवन परमावश्यक है।"

मन, प्राण तथा वीर्य

मन, प्राण तथा वीर्य एक ही शृङ्खला की तीन कड़ियाँ हैं। ये जीवात्मा-रूपी

प्रासाद के तीन स्तम्भ हैं। इनमें से एक स्तम्भ—मन, प्राण अथवा वीर्य—को नष्ट करें तो सम्पूर्ण भवन ध्वस्त हो जायेगा।

मन, प्राण तथा वीर्य एक ही हैं। मन पर नियन्त्रण द्वारा आप प्राण तथा वीर्य को नियन्त्रित कर सकते हैं। प्राण पर नियन्त्रण द्वारा आप मन तथा वीर्य को नियन्त्रित कर सकते हैं। वीर्य पर नियन्त्रण द्वारा आप मन तथा प्राण को नियन्त्रित कर सकते हैं।

मन, प्राण तथा वीर्य एक ही तार से जुड़े हुए हैं। यदि मन को नियन्त्रित कर लिया गया तो प्राण तथा वीर्य स्वयं नियन्त्रित हो जाते हैं। जो व्यक्ति प्राण (श्वास) को रोक देता है अथवा उसका निरोध करता है, वह मन की क्रिया तथा वीर्य की गति को भी नियन्त्रित कर देता है। पुनः, यदि वीर्य को नियन्त्रित कर लिया जाता है तथा उसे शुद्ध विचार तथा विपरीतकरणीय-मुद्रा—यथा सर्वाङ्गासन तथा शीर्षासन—तथा प्राणायाम के अभ्यास से ऊपर की ओर मस्तिष्क में प्रवाहित किया जाता है तो मन तथा प्राण स्वयमेव नियन्त्रित हो जाते हैं।

मन दो वस्तुओं अर्थात् प्राण के स्पन्दन तथा वासनाओं से गतिशील अथवा क्रियाशील बनता है। जहाँ मन अन्तर्लीन होता है, वहाँ प्राण निरुद्ध होता है; और जहाँ प्राण स्थिर होता है वहाँ मन भी अन्तर्लीन होता है। मन तथा प्राण व्यक्ति तथा उसकी छाया की भाँति अन्तरङ्ग साथी हैं। यदि मन तथा प्राण को नियन्त्रित न किया जाये तो सभी इन्द्रियाँ—ज्ञानेन्द्रियाँ तथा कर्मेन्द्रियाँ—स्व-स्व कार्य में व्यस्त रहती हैं।

जब व्यक्ति कामुकता से उत्तेजित होता है, तब प्राण चलायमान हो जाता है। उस समय सम्पूर्ण शरीर मन के आदेशों का वैसा ही पालन करता है जैसा एक सैनिक अपने सेनापति के आदेशों का पालन करता है। प्राण वीर्य को गति देता है। वीर्य चलायमान हो जाता है। वीर्य नीचे की ओर उसी प्रकार स्खलित हो जाता है जिस प्रकार वायु के प्रबल झोंके से वृक्षों से फल, फूल तथा पत्ते गिर जाते हैं अथवा मेघ से फूट कर वर्षा का जल नीचे गिरने लगता है।

यदि वीर्य नष्ट हो गया तो प्राण अस्थिर हो जाता है। प्राण क्षुब्ध हो जाता है। मनुष्य अधीर हो जाता है। तब मन भी समुचित रूप से कार्य नहीं कर सकता है। मनुष्य चलचित्त हो जाता है और उसमें मनोवैकल्य आ जाता है।

जब प्राण को स्थिर कर दिया जाता है, तो मन भी स्थिर हो जाता है। यदि

वीर्य स्थिर होता है, तो मन भी स्थिर होता है। यदि दृष्टि स्थिर होती है, तो मन भी स्थिर होता है। अतः प्राण, वीर्य तथा दृष्टि को नियन्त्रित करें।

ईश्वर रस है—**"रसो वै सः।"** रस वीर्य है। रस या वीर्य को प्राप्त कर ही आप नित्यानन्द को प्राप्त कर सकते हैं—**"रसोह्येवायं लब्ध्वा आनन्दी भवति।"**

जीवन के इस प्राणभूत सत्त्व के महत्त्व तथा उपयोगिता को पूर्ण रूप से समझें। वीर्य परम शक्ति है। वीर्य परम धन है। वीर्य ईश्वर है। वीर्य सीता है। वीर्य राधा है। वीर्य दुर्गा है। वीर्य चलायमान ईश्वर है। वीर्य सक्रिय सङ्कल्प-शक्ति है। वीर्य आत्मबल है। वीर्य भगवान् की विभूति है। भगवान् गीता में कहत हैं : **"पौरुषं नृषु**—मनुष्यों में मैं पुरुषत्व हूँ।" वीर्य जीवन, विचार, बुद्धि तथा चेतना का सत्त्व है। अतः, प्रिय पाठको! वीर्य की बहुत ही सावधानी से रक्षा कीजिए।

द्वितीय खण्ड
ब्रह्मचर्य की महिमा

७

ब्रह्मचर्य का अर्थ

ब्रह्मचर्य का शब्दार्थ है वह आचार जिससे ब्रह्म अथवा आत्मा का साक्षात्कार प्राप्त होता है। इसका अर्थ है वीर्य पर अधिकार, वेदों का अध्ययन तथा भगवच्चिन्तन। ब्रह्मचर्य का पारिभाषिक अर्थ है आत्मसंयम, विशेष रूप से जननेन्द्रिय पर अधिकार अथवा पूर्ण नियन्त्रण अथवा विचार, वाणी तथा कर्म में कामुकता से मुक्ति। पूर्ण जितेन्द्रियता केवल मैथुन से ही नहीं अपितु स्व-रत्यात्मक प्रकटीकरण, हस्तमैथुन, समलिङ्गकामी क्रियाएँ तथा यौन-विकृत आचरणों से अलग रहना है। इसके अतिरिक्त इसमें काम-विषयक कल्पनाओं तथा कामोद्दीपक दिवास्वप्न में निरति से चिरस्थायी निवृत्ति का भी समावेश होना चाहिए। सभी प्रकार की यौन-विकृतियों तथा हस्तमैथुन, गुदा-मैथुन आदि विविध प्रकार की बुरी आदतों का पूर्ण रूप से मूलोच्छेदन करना चाहिए। वे स्नायु-तन्त्र में पूर्ण खराबी तथा अपरिमेय दुःख उत्पन्न करते हैं।

ब्रह्मचर्य विचार, वाणी तथा कर्म की पवित्रता है। ब्रह्मचर्य अविवाहित जीवन तथा इन्द्रियनिग्रह है। ब्रह्मचर्य अविवाहित जीवन यापन का व्रत है। ब्रह्मचर्य केवल कुआँरापन नहीं है। इसमें जननेन्द्रिय का ही नहीं, वरन् विचार, वाणी तथा कर्म से अन्य समस्त इन्द्रियों का निग्रह समाविष्ट है। यह ब्रह्मचर्य की व्यापक व्याख्या है। निर्वाणधाम का द्वार अखण्ड-ब्रह्मचर्य है। पूर्ण ब्रह्मचर्य स्वर्गिक आनन्द-राज्य के द्वार खोलने की सर्वकुञ्जी है। परम शान्ति के धाम का मार्ग ब्रह्मचर्य से ही प्रारम्भ होता है।

कामवासना तथा कामुक विचारों से सर्वथा मुक्त रहना ही ब्रह्मचर्य है। यथार्थ ब्रह्मचारी स्त्री, कागज, काष्ठ अथवा पाषाण को स्पर्श करने में कुछ भी भेद अनुभव नहीं करता है। ब्रह्मचर्य पुरुष तथा स्त्री दोनों के लिए आवश्यक है।

भीष्म, हनुमान्, लक्ष्मण, मीराबाई, सुलभा तथा गार्गी—ये सभी ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित थे।

केवल पाशविक मनोविकार पर नियन्त्रण ब्रह्मचर्य नहीं है। यह अपूर्ण ब्रह्मचर्य है। आपको अपनी सभी इन्द्रियों पर नियन्त्रण करना है—कान जो अश्लील कहानियाँ सुनना चाहते हैं, कामुक नेत्र जो कामोत्तेजक पदार्थों को देखना चाहते हैं, जिह्वा जो कामोद्दीपक पदार्थों का स्वाद लेना चाहती है तथा त्वचा जो कामोत्तेजक पदार्थों का स्पर्श करना चाहती है।

कामुक दृष्टि से देखना नेत्रों का व्यभिचार है; कामोत्तेजक विषय को सुनना कानों का व्यभिचार है, तथा कामोद्दीपक बातें करना जिह्वा का व्यभिचार है।

ब्रह्मचर्य के आठ विच्छेद

आपको सावधानीपूर्वक आठ प्रकार के उपभोगों से बचना चाहिए। ये हैं : दर्शन अथवा स्त्रियों को कामुक अभिप्राय से देखना, स्पर्शन अथवा उन्हें स्पर्श करना, केलि अथवा सविलास क्रीड़ा करना, कीर्तन अथवा अपने से विपरीत लिङ्गी के गुणों की प्रशंसा करना, गुह्य भाषण अथवा एकान्त में संलाप करना, सङ्कल्प अथवा दृढ़ निश्चय करना, अध्यवसाय अथवा तुष्टिकरण की कामना से अपने से विपरीत लिङ्गी के निकट जाना तथा क्रिया-निवृत्ति अथवा वास्तविक सम्भोग-क्रिया। ये आठ प्रकार के उपभोग अखण्ड ब्रह्मचर्य के अभ्यास में एक प्रकार से आठ विच्छेद हैं। आपको बड़ी सावधानी, सच्चे प्रयास तथा सजग अवधान से इन आठ अन्तरायों से बचना चाहिए। जो व्यक्ति इन सभी विच्छेदों से मुक्त है, वही सच्चा ब्रह्मचारी कहा जा सकता है। एक सच्चे ब्रह्मचारी को इन सब आठ विच्छेदों का निष्ठुरतापूर्वक परिहार करना चाहिए।

ब्रह्मचारी को कामुक दृष्टि से किसी स्त्री को नहीं देखना चाहिए। उसे बुरी भावना से किसी स्त्री को स्पर्श करने अथवा उसके निकट जाने की इच्छा नहीं करनी चाहिए। उसे उसके साथ खेलना, मजाक करना अथवा बातचीत नहीं करना चाहिए। उसे न तो अपने मन में और न अपने मित्रों के समक्ष किसी स्त्री के गुणों की प्रशंसा करनी चाहिए। उसे स्त्री से एकान्त में वार्ता नहीं करनी चाहिए और न उसके सम्बन्ध में चिन्तन ही करना चाहिए। उसे स्त्री से यौन-सुख की विषय-वासना नहीं रखनी चाहिए। ब्रह्मचारी को मैथुन से अवश्यमेव बचना

चाहिए। यदि वह उपर्युक्त नियमों में से किसी को भी भङ्ग करता है तो वह ब्रह्मचर्य-व्रत का उल्लङ्घन करता है।

यद्यपि प्रथमोक्त सात प्रकार के मैथुन वीर्य की वास्तविक क्षति नहीं पहुँचाते, तथापि वीर्य रक्त से पृथक् हो जाता है और अवसर प्राप्त होते ही स्वप्न में अथवा अन्य किसी विधि से निकल जाने का प्रयास करता है। प्रथम सात प्रकार के मैथुनों में व्यक्ति मन से ही उपभोग करता है।

साधकों को काम-विषयक चर्चा में लिप्त नहीं होना चाहिए। उन्हें स्त्री के विषय में चिन्तन नहीं करना चाहिए। यदि स्त्री का विचार प्रकट हो तो अपने इष्ट-देवता की मूर्ति अपने मन में लायें। मन्त्र का जोर से जप करें।

कामुक दृष्टि, कामुक विचार, स्वप्नदोष—ये सभी ब्रह्मचर्य-भङ्ग अथवा ब्रह्मचर्य से पतन हैं। आपकी दृष्टि शुद्ध हो। दृष्टिदोष त्याग दें। कामुक-दृष्टि स्वयं में ब्रह्मचर्य-भङ्ग है। इससे अन्तःस्राव होता है। वीर्य अपने तन्त्र से पृथक् हो जाता है।

सभी स्त्रियों में माँ काली का दर्शन करें। उदात्त दिव्य विचारों का पोषण करें। जप तथा ध्यान नियमित रूप से करें। आप ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित हो जायेंगे।

शारीरिक ब्रह्मचर्य तथा मानसिक ब्रह्मचर्य

यदि आप ब्रह्मचारी होना चाहते हैं तो आपको मन से शुद्ध होना बहुत आवश्यक है। मानसिक ब्रह्मचर्य अधिक महत्त्वपूर्ण है। आप शारीरिक ब्रह्मचर्य में सफल हो सकते हैं; किन्तु आपको मानसिक ब्रह्मचर्य में भी सफल होना चाहिए। मन की उस स्थिति को, जिसमें कोई कामुक विचार मन में प्रवेश नहीं करता, मानसिक ब्रह्मचर्य कहलाता है। यदि विचार अपवित्र होंगे तो कामावेग बहुत प्रबल होगा। ब्रह्मचर्य सम्पूर्ण जीवन चर्या को व्वस्थित करने पर निर्भर करता है।

यदि आप कामुक विचारों पर नियन्त्रण नहीं रख सकते तो कम-से-कम स्थूल शरीर पर तो नियन्त्रण रखिए। प्रथमतः शारीरिक ब्रह्मचर्य का अतिनियमनिष्ठा से अभ्यास करना चाहिए। जब कामावेग आपको कष्ट दे तो शरीर पर नियन्त्रण रखिए। मानसिक ब्रह्मचर्य शनैः-शनैः प्रव्यक्त होगा।

विषय-सुख में वास्तव में निरत होने की अपेक्षा कम-से-कम कर्मेन्द्रियों पर नियन्त्रण अवश्यमेव अच्छा है। यदि आप अपने जप तथा ध्यान में डटे रहें तो

शनैः-शनैः विचार भी शुद्ध हो जायेंगे और अन्ततोगत्वा मन पर भी अपरोक्ष नियन्त्रण हो जायेगा।

मैथुन अथवा यौन-सम्पर्क सभी बुरे विचारों को पुनरुज्जीवित करता तथा उन्हें जीवन का नया पट्टा प्रदान करता है। अतः प्रथमतः शरीर का नियन्त्रण करना चाहिए। प्रथम, शारीरिक ब्रह्मचर्य को सन्धारण करना चाहिए। तभी आप मानसिक शुद्धता अथवा मानसिक ब्रह्मचर्य में सफल हो जायेंगे।

आप भले ही महीनों अथवा वर्षों तक मैथुन को बन्द कर देने में समर्थ हों; किन्तु स्त्रियों के प्रति कोई कामवासना अथवा यौनाकर्षण नहीं होना चाहिए। जब आप किसी स्त्री को देखें अथवा जब आप स्त्रियों के सङ्गति में हों तब आपमें कोई असद्विचार भी नहीं उठना चाहिए। आप इस दिशा में सफल हो जाते हैं तो आप पूर्ण ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित हो गये। आपने खतरे का क्षेत्र पार कर लिया।

विचार वास्तविक कर्म है। एक दुर्वासना जारकर्म के समान है। वासना कर्म से भी अधिक है। किन्तु किसी व्यक्ति को वास्तव में मार डालने तथा व्यक्ति को मार डालने को सोचने में, वास्तविक मैथुन करने तथा किसी महिला के साथ सम्भोग करने को सोचने में बहुत बड़ा अन्तर है। दर्शनानुसार व्यक्ति को मार डालने को सोचना अथवा मैथुन करने को सोचना वास्तविक कर्म है।

यदि मन में एक भी अशुद्ध कामुक विचार है तो आप पूर्ण मानसिक ब्रह्मचर्य की आशा नहीं रख सकते। तब आप ऊर्ध्वरेता अथवा ऐसा व्यक्ति नहीं कहला सकते जिसमें वीर्य-शक्ति ऊर्ध्वदिशा की ओर मस्तिष्क में प्रवाहित होती है जहाँ वह ओज-शक्ति के रूप में सञ्चित रहती है। एक भी अशुद्ध विचार रहने पर वीर्य की नीचे की ओर प्रवाहित होने की प्रवृत्ति होती है।

प्रलोभनों तथा बीमारों में भी मानसिक ब्रह्मचर्य की स्थिति को बनाये रखना चाहिए। तभी आप सुरक्षित रह सकेंगे। रोग-काल में तथा आपके इन्द्रिय-विषयों के सम्पर्क में आने के समय में भी इन्द्रियाँ विद्रोह करना प्रारम्भ कर देती हैं।

यदि आपके मन में कामुक-प्रकृति के विचार उठते हैं तो यह प्रच्छन्न कामवासना के कारण है। धूर्त तथा कूटनीतिक मन स्त्री को देखने तथा उससे वार्तालाप के द्वारा मूक तुष्टिकरण चाहता है। चोरी-छिपे अथवा अनजाने मानसिक मैथुन घटित होता है। आपको घसीटने वाली शक्ति प्रच्छन्न कामवासना है।

काम-शक्ति का पूर्णरूप से उदात्तीकरण नहीं हुआ है। प्राणमयकोश को नवीन रूप नहीं दिया गया है तथा उसका पूर्णतः शोधन नहीं किया गया है। यही कारण है कि आपके मन में अशुद्ध विचार प्रवेश करते हैं। जप तथा ध्यान अधिक करें। समाज की किसी भी रूप में निस्स्वार्थ सेवा करें। आपको शीघ्र ही शुद्धता उपलब्ध होगी।

आप शुद्धता अथवा ब्रह्मचर्य-रूपी जल तथा दिव्य प्रेम-रूपी साबुन से अपने मन को स्वच्छ करना सीखें। आप साबुन तथा जल से केवल शरीर का प्रक्षालन करने से अन्तर में शुद्ध बनने की कैसे आशा कर सकते हैं? आन्तरिक शुद्धता बाह्य शुद्धता से अधिक महत्त्वपूर्ण है।

ब्रह्मचर्यमय जीवन अविच्छिन्न बनाये रखें। इसमें ही आपकी आध्यात्मिक उन्नति तथा साक्षात्कार निहित है। पापमय कर्म की पुनरावृत्ति करके इस भयानक शत्रु कामुकता को जीवन का नया पट्टा न दें।

मन को पूर्णतः व्यस्थ रखें। आन्तरिक आध्यात्मिक जीवन को इन्द्रिय-विषयों का गम्भीर चिन्तन वास्तविक इन्द्रिय-तुष्टि की अपेक्षा अधिक क्षति पहुँचाता है। यदि साधना के द्वारा मन को शुद्ध नहीं किया गया तो बाह्य इन्द्रियों का दमन मात्र आकांक्षित परिणाम नहीं लायेगा। यद्यपि बाह्य इन्द्रियाँ दमित हो जाती हैं तथापि उनके आन्तरिक प्रतिरूप, जो फिर भी ओजस्वी तथा सशक्त होते हैं, मन से प्रतिशोध लेते तथा अत्यधिक मानसिक विक्षोभ तथा निरंकुश कल्पनाओं को जन्म देते हैं।

मन ही वास्तव में सभी कार्य करता है। आपके मन में एक इच्छा उत्पन्न होती है और तब आप विचार करते हैं। तदनन्तर आप कार्य करने के लिए आगे बढ़ते हैं। मन के सङ्कल्प को कार्यान्वित किया जाता है। प्रथम सङ्कल्प या विचार उत्पन्न होता है और तत्पश्चात् कार्य आता है। अतः, कामुक विचारों को मन में प्रवेश न करने दें।

कोई भी स्थान किसी भी समय रिक्त नहीं रहता। यह प्रकृति का नियम है। यदि एक वस्तु किसी स्थान से हटा दी जाती है तो तत्काल अन्य वस्तु उसका स्थान ग्रहण करने के लिए आ जाती है। यही नियम आन्तरिक मानसिक जगत् के विषय में भी लागू होता है। अतः कुविचारों का स्थान लेने के लिए मन में उदात्त दिव्य विचारों को आश्रय देना आवश्यक है। आपके विचारों के अनुरूप

ही आपका गठन होता है। यह मनोविज्ञान का एक अपरिवर्तनीय नियम है। दिव्य विचारों को मन में आश्रय देने से दुष्ट मन धीरे-धीरे ईश्वरीय बन जाता है।

एक सामान्य शिकायत

लोगों की सदा यह शिकायत रहती है कि गम्भीर प्रयत्न तथा सच्चा अभ्यास करने के बावजूद भी उन्हें ब्रह्मचर्य में पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं होती है। वे अनावश्यक रूप से सन्त्रस्त तथा निरुत्साहित हो जाते हैं। यह एक भूल है। आध्यात्मिक क्षेत्र में भी एक मापी-यन्त्र है। यह बहुत ही सूक्ष्म है। आध्यात्मिकता-मापी-यन्त्र चित्तशुद्धि के विकास की लघुतम मात्रा भी बतलाता अथवा व्यक्त करता है। शुद्धता की मात्रा को समझने के लिए आपको विशुद्ध बुद्धि की आवश्यकता है। प्रबल साधना, ज्वलन्त वैराग्य तथा ज्वलन्त मुमुक्षुत्व उच्चतम कोटि की शुद्धि शीघ्र प्राप्त कराते हैं।

यदि कोई व्यक्ति प्रतिदिन आधा घण्टा भी गायत्री अथवा प्रणव का जप करता है तो आध्यात्मिकता-मापी-यन्त्र उसके ब्रह्मचर्य की सूक्ष्म मात्रा तत्काल बतलाता है। आप अपनी मलिन बुद्धि के कारण इसे नहीं देख पाते हैं। एक या दो वर्ष तक नियमित रूप से साधना कीजिए और तब अपने मन की तत्कालीन अवस्था की उसके पूर्ववर्ती वर्ष की अवस्था से तुलना कीजिए। आपको निश्चय ही बहुत बड़ा परिवर्तन मिलेगा। आप पूर्वापेक्षा अधिक शान्ति, अधिक पवित्रता तथा अधिक नैतिक शक्ति अथवा बल अनुभव करेंगे। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। क्योंकि प्राचीन दुष्ट संस्कार बहुत ही प्रबल होते हैं; अतः मानसिक शुद्धता में कुछ समय लग जाता है। आपको हतोत्साह नहीं होना चाहिए। कभी निराश न हों। आपको अनादिकाल के संस्कारों के विरुद्ध सङ्घर्ष करना है। अतः इसके लिए अत्यधिक प्रयास की आवश्यकता है।

८

ब्रह्मचर्य की महिमा

स्वरों से रहित कोई भाषा नहीं हो सकती है। आप स्थूल पट तथा भित्ति के बिना चित्र नहीं बना सकते हैं। आप कागज के बिना कुछ लिख नहीं सकते हैं। ठीक इसी प्रकार आप ब्रह्मचर्य के बिना स्वास्थ्य तथा आध्यात्मिक जीवन नहीं प्राप्त कर सकते हैं। ब्रह्मचर्य भौतिक प्रगति तथा मानसिक उन्नति लाता है।

ब्रह्मचर्य नैतिकता का आधार है। यह शाश्वत जीवन का आधार है। ब्रह्मचर्य वसन्त-ऋतु का पुष्प है जिसकी पंखुड़ियों से अमरत्व टपकता है। यह आत्मा में शान्तिमय जीवन का आधार है। यह ऋषियों, जिज्ञासुओं तथा योग के साधकों की बहुअभीप्सित ब्रह्मनिष्ठा का सुदृढ़ आश्रय है। यह आन्तरिक असुरों—काम, क्रोध, लोभ—के विरुद्ध संग्राम करने के लिए रक्षा-कवच है। यह पारलौकिक आनन्द के प्रवेश-द्वार का कार्य करता है। यह मोक्ष-द्वार को उद्घाटित करता है। यह नित्य-सुख, अविच्छिन्न तथा अक्षय आनन्द-प्रदायक है। ऋषि, देवता, गन्धर्व तथा किन्नर भी सच्चे ब्रह्मचारी के चरणों की सेवा करते हैं। ईश्वर भी सच्चे ब्रह्मचारी की चरण-रज अपने मस्तक पर धारण करते हैं। सुषुम्ना-नाड़ी का द्वार खोलने तथा कुण्डलिनी को जागृत करने के लिए ब्रह्मचर्य ही एकमात्र कुञ्जी है। यह श्री, यश, सुकृत तथा मानप्रतिष्ठा लाता है। आठों सिद्धियाँ तथा नवों निधियाँ सच्चे ब्रह्मचारी के चरणों में लोटती हैं। वे उसकी आज्ञा का पालन करने के लिए सदा तत्पर रहती हैं। यमराज भी ब्रह्मचारी से दूर भागता है। सच्चे ब्रह्मचारी की महामनस्कता, वैभव तथा महिमा का वर्णन कौन कर सकता है!

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत। वेदों की घोषणा है की ब्रह्मचर्य तथा तप से देवताओं ने काल को भी जीत लिया है। हनुमान् महावीर कैसे बने? उन्होंने अपने इस ब्रह्मचर्य-रूपी शस्त्र के द्वारा ही अद्वितीय बल तथा शौर्य प्राप्त किया। पाण्डवों तथा कौरवों के पितामह महान् भीष्म ने ब्रह्मचर्य से ही मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। आदर्श ब्रह्मचारी लक्ष्मण ने ही रावण के पुत्र अपरिमेय शक्तिशाली तथा त्रिलोक-विजेता मेघनाथ को धराशायी किया था। भगवान् राम भी उसका सामना नहीं कर सकते थे। लक्ष्मण ही ब्रह्मचर्य के बल से अजेय मेघनाथ को परास्त कर सके थे। सम्राट् पृथ्वीराज के शौर्य तथा महत्ता का कारण ब्रह्मचर्य का बल ही था। त्रिलोक में ऐसा कुछ भी नहीं है जो ब्रह्मचारी के लिए अप्राप्य हो। प्राचीनकाल के ऋषि ब्रह्मचर्य के महत्त्व से भलीभाँति परिचित थे। यही कारण है कि उन्होंने सुन्दर काव्यों में ब्रह्मचर्य की महिमा का गान किया है।

जिस प्रकार तेल वर्तिका में ऊपर आ कर देदीप्यमान् प्रकाश के साथ जलता है उसी तरह वीर्य भी योग-साधना के द्वारा ऊर्ध्व दिशा की ओर प्रवाहित होता है तथा तेज अथवा ओज में रूपान्तरित होता है। ब्रह्मचारी का मुखमण्डल ब्राह्म-आभा से चमकता है। ब्रह्मचर्य-रूपी शुभ्र प्रकाश मानव-शरीर-रूपी गृह में चमकता है। यह जीवन के पूर्ण विकसित पुष्प के समान है जिसके चतुर्दिक्

शक्ति, धैर्य, ज्ञान, पवित्रता तथा धृति-रूपी भ्रमर इधर-उधर गुञ्जार करते हुए मँडराते हैं। दूसरे शब्दों में इसे इस तरह कह सकते हैं कि ब्रह्मचर्य-पालन करने वाला व्यक्ति उपर्युक्त गुणों से सम्पन्न हो जाता है। शास्त्रों में बलपूर्वक कहा गया है :

"आयुस्तेजो बलं वीर्यं प्रज्ञा श्रीश्च यशस्तथा।
पुण्यञ्च सत्प्रियत्वञ्च वर्धते ब्रह्मचर्यया॥

—ब्रह्मचर्य के अभ्यास से आयु, तेज, बल, पराक्रम, बुद्धि, धन, यश, पुण्य तथा सत्यप्रियता का वृद्धि होती है।"

स्वास्थ्य तथा दीर्घायु का रहस्य

शुद्ध वायु, शुद्ध जल, पौष्टिक भोजन, शारीरिक व्यायाम, मैदान के खेल, तीव्र गति से टहलना, नौका खेना, तैरना, टेनिस आदि जैसे हलके खेल—ये सभी सुस्वास्थ्य, शक्ति तथा उच्च कोटि की ओजस्विता बनाये रखने में सहायक हैं। स्वास्थ्य तथा बल प्राप्त करने के लिए निश्चय ही अनेक साधन हैं। निस्सन्देह ये साधन अपरिहार्य रूप से आवश्यक हैं; किन्तु ब्रह्मचर्य इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। ब्रह्मचर्य के अभाव में आपके सभी व्यायाम नगण्य हैं। स्वास्थ्य तथा सुख के राज्य का द्वार खोलने के लिए ब्रह्मचर्य सर्वकुञ्जी है। यह आनन्द तथा विशुद्ध सुख-शान्ति-रूपी प्रासाद की आधारशिला है। यह सच्चे पौरुष को बनाये रखने की एकमात्र औषध है।

वीर्य का रक्षा ही स्वास्थ्य तथा दीर्घायु और शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक धरातल की सभी सफलताओं का रहस्य है। जिस व्यक्ति में थोड़ा-सा भी ब्रह्मचर्य है, वह किसी भी रोग के सङ्कट को बड़ी सुगमता से पार कर जाता है। यदि किसी सामान्य व्यक्ति को स्वास्थ्य-लाभ करने में एक माह लगता है तो यह व्यक्ति एक सप्ताह में ही पूर्ण स्वस्थ हो जाता है।

श्रुतियाँ मनुष्य की पूर्ण आयु सौ वर्ष घोषित करती हैं। इसे आप ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित हो कर प्राप्त कर सकते हैं। लोगों के ऐसे भी उदाहरण हैं जिन्होंने अपने लम्पट तथा अनैतिक आचरण के होते हुए भी दीर्घायु तथा बौद्धिक शक्ति प्राप्त की है; किन्तु यदि उनमें सच्चारित्र्य तथा ब्रह्मचर्य भी होता तो वे और भी अधिक शक्तिशाली तथा प्रतिभाशाली हुए होते।

जब धन्वन्तरि अपने शिष्यों को आयुर्वेद की सविस्तर शिक्षा दे चुके थे तो

उनके शिष्यों ने इस चिकित्सा-शास्त्र के मूल-सिद्धान्त के विषय की जिज्ञासा की। गुरु ने उत्तर दिया—"मैं आपको कहता हूँ कि ब्रह्मचर्य वास्तव में एक बहुमूल्य रत्न है। यह एक सर्वाधिक प्रभावशाली औषध है, वास्तव में अमृत है जो रोग, जरा तथा मृत्यु को विनष्ट करता है। शान्ति, तेज, स्मृति, ज्ञान, स्वास्थ्य तथा आत्मसाक्षात्कार की प्राप्ति के लिए व्यक्ति को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए जो परम धर्म है। ब्रह्मचर्य सर्वोत्तम ज्ञान है। ब्रह्मचर्य सर्वश्रेष्ठ बल है। यह आत्मा वास्तव में ब्रह्मचर्य-स्वरूप है और यह ब्रह्मचर्य में ही निवास करता है। मैं प्रथम ब्रह्मचर्य को नमस्कार करके ही असाध्य रोगों का उपचार करता हूँ। हाँ, ब्रह्मचर्य सभी अशुभ लक्षणों को मिटा सकता है।"

ब्रह्मचर्य के पालन से सुस्वास्थ्य, मनोबल, मानसिक शान्ति तथा दीर्घायु प्राप्त होती है। यह मन तथा स्नायुओं को अनुप्राणित करता, शारीरिक तथा मानसिक शक्ति के संरक्षण में सहायता करता तथा स्मरण-शक्ति, सङ्कल्प-बल तथा मेधा-शक्ति की वृद्धि करता है। यह प्रचुर मात्रा में बल, ओज तथा जीवन-शक्ति प्रदान करता है। इससे बल तथा धैर्य की प्राप्ति होती है।

नेत्र मन का वातायन है। यदि मन शुद्ध तथा शान्त है तो नेत्र भी शान्त तथा स्थिर होंगे। जो व्यक्ति ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित है उसके नेत्र कान्तिमान्, वाणी मधुर तथा रूप सुन्दर होंगे।

ब्रह्मचर्य एकाग्रता को प्रोत्साहन देता है

ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित होने से ओज की प्राप्ति होती है। पूर्ण शारीरिक तथा मानसिक ब्रह्मचर्य की प्राप्ति द्वारा योगी सिद्धि प्राप्त करता है। यह दिव्य ज्ञान तथा अन्य सिद्धियों को प्राप्त करने में उसकी सहायता करता है। शुचिता (ब्रह्मचर्य) होने पर मन की वृत्तियों का अपक्षय नहीं होता है। मन को एकाग्र करना सहज हो जाता है। एकाग्रता तथा शुचिता साथ-साथ रहते हैं। यद्यपि ज्ञानी व्यक्ति इने-गिने शब्द ही बोलता है; किन्तु इसका श्रोताओं के मन पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है। इसका कारण उसकी ओज-शक्ति है जो वीर्य के परिरक्षण तथा उसके रूपान्तरण द्वारा सुरक्षित रखी जाती है।

विचार, वाणी तथा कर्म से सच्चा ब्रह्मचारी में असाधारण विचार-शक्ति होती है। वह संसार को हिला सकता है। यदि आप पूर्ण ब्रह्मचर्य का विकास करते हैं तो विचार-शक्ति तथा धारणा-शक्ति विकसित होगी। विचार-शक्ति वह शक्ति है

जिसकी सहायता से विचार किया जाता है तथा धारणा-शक्ति वह शक्ति है जिससे सद्वस्तु मन में धारण की जाती है। यदि व्यक्ति अपनी निम्न प्रकृति के समक्ष झुकने से निरन्तर इनकार करता है तथा पूर्ण ब्रह्मचारी बना रहता है तो वीर्य-शक्ति मस्तिष्क की ओर मुड़ जाती है तथा ओज-शक्ति के रूप में वहाँ सञ्चित रहती है। इसके द्वारा ज्ञान-शक्ति असाधारण मात्रा में तीव्र होती है। ब्रह्मचर्य से बुद्धि कुशाग्र तथा निर्मल होती है। ब्रह्मचर्य तीव्र स्मरण-शक्ति की अपरिमित मात्रा में वृद्धि करता है। पूर्ण ब्रह्मचारी की स्मरण-शक्ति वृद्धावस्था में भी सूक्ष्म तथा तीव्र होती है।

जिस व्यक्ति में ब्रह्मचर्य की शक्ति है वह अपरिमित शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक कार्य सम्पन्न कर सकता है। उसके मुखमण्डल पर चुम्बकीय आभा होती है। वह अल्प शब्द बोल कर अथवा अपनी उपस्थिति मात्र से लोगों को प्रभावित कर सकता है। वह क्रोध को वश में कर सकता है तथा सम्पूर्ण जगत् को हिला सकता है। महात्मा गान्धी को देखिए। उन्होंने इसे अहिंसा, सत्य तथा ब्रह्मचर्य के निरन्तर तथा अवधानपूर्ण अभ्यास द्वारा प्राप्त किया था। उन्होंने केवल इस शक्ति द्वारा संसार को प्रभावित किया। आप एकमात्र ब्रह्मचर्य के द्वारा ही इस जीवन में शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक उन्नति कर सकते हैं।

यहाँ यह बात दोहराने योग्य है कि एक सच्चा ब्रह्मचारी अत्यधिक शक्ति, विमल मस्तिष्क, विशाल सङ्कल्प-शक्ति, सुस्पष्ट समझ, तीव्र स्मरण-शक्ति तथा सद्विचार-शक्ति से सम्पन्न होता है। स्वामी दयानन्द ने एक महाराजा के वाहन को रोक दिया था। उन्होंने अपने हाथों से एक खड्ग को तोड़ डाला। यह उनकी ब्रह्मचर्य-शक्ति के कारण ही हुआ। सभी आध्यात्मिक आचार्य सच्चे ब्रह्मचारी थे। यीशु, शङ्कर, ज्ञानदेव तथा समर्थ रामदास—ये सभी ब्रह्मचारी थे।

मेरे प्रिय मित्रो! क्या अब आपने ब्रह्मचर्य के महत्त्व को पूर्ण रूप से समझ लिया है? प्रिय भाइयो! क्या अब आपने ब्रह्मचर्य के वास्तविक अर्थ तथा उसकी महिमा को स्वीकार कर लिया है? यदि विविध साधनों से तथा बड़ी कठिनाई झेलने तथा प्रचुर मूल्य चुकता करने के पश्चात् प्राप्त की जाने वाली शक्ति प्रतिदिन यों ही नष्ट की जाये तो आप क्योंकर हृष्ट-पुष्ट तथा स्वस्थ रहने की आशा कर सकते हैं! यदि पुरुष तथा महिलाएँ, बालक तथा बालिकाएँ ब्रह्मचर्य-व्रत का यथासम्भव पालन नहीं करते तो उनका हृष्ट-पुष्ट तथा स्वस्थ रहना असम्भव है।

विद्युदणुओं में भी कुंवारे विद्युदणु तथा विवाहित विद्युदणु होते हैं। विवाहित विद्युदणु जोड़ों में प्रकट होते हैं। कुंवारे विद्युदणु अकेले रहते हैं। ये कुंवारे विद्युदणु ही चुम्बकीय शक्ति उत्पन्न करते हैं। ब्रह्मचर्य की शक्ति विद्युदणुओं में भी दृष्टिगोचर होती है। मित्रो ! क्या आप इन विद्युदणुओं से कुछ पाठ सीखेंगे ? क्या आप ब्रह्मचर्य का अभ्यास करेंगे तथा बल और आध्यात्मिक शक्ति का विकाश करेंगे ? प्रकृति आपकी सर्वोत्तम गुरु तथा आध्यात्मिक पथप्रदर्शिका है।

ब्रह्मचर्य के द्वारा ऐहिक जीवन की विपत्तियों को पराभूत करें तथा स्वास्थ्य, शक्ति, मानसिक शान्ति, तितिक्षा, शौर्य, भौतिक उन्नति, मानसिक विकास और अमरता प्राप्त करें। जिस व्यक्ति का कामशक्ति पर पूर्ण नियन्त्रण है वह उन शक्तियों को प्राप्त कर लेता है जो अन्य साधनों से अप्राप्य हैं। अतः अपनी शक्ति का अपव्यय विषय-सुखों में न करें। अपनी शक्ति को सुरक्षित रखें। सत्कर्म करें तथा ध्यानाभ्यास करें। इससे आप शीघ्र ही अतिमानव बन जायेंगे। आप भगवान् के साथ वार्तालाप करेंगे तथा दिव्यता प्राप्त करेंगे।

९

आध्यात्मिक जीवन में ब्रह्मचर्य का महत्त्व

ब्रह्मचर्य एक दिव्य शब्द है। यह योग का सार है। अविद्या के कारण यह विस्मृत हो चला है। ब्रह्मचर्य के महत्त्व पर हमारे महर्षियों ने बहुत बल दिया था। यह वह परम योग है जिस पर भगवान् कृष्ण गीता में बार-बार बल देते हैं। छठे अध्याय के चौदहवें श्लोक में यह स्पष्ट कहा गया है कि ध्यान के लिए ब्रह्मचर्यव्रत आवश्यक है—**"ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।"** सतरहवें अध्याय के चौदहवें श्लोक में वह कहते हैं कि शारीरिक तप के आवश्यक गुणों में से ब्रह्मचर्य एक है। आठवें अध्याय के ग्यारहवें श्लोक में एक अन्य कथन है कि योगी जन वेदवेत्ताओं के बतलाये हुए ध्येय को प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। यह कथन कठोपनिषद् में भी प्राप्त है।

महर्षि पतञ्जलि के राजयोग में भी 'यम' प्रथम सोपान है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह का अभ्यास यम है। इनमें ब्रह्मचर्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

ज्ञानयोग में भी 'यम' साधक के लिए आधार है।

महाभारत के शान्तिपर्व में पुनः आपको मिलेगा—"धर्म की कई शाखाएँ हैं; परन्तु 'दम' उन सबका आधार है।"

जो व्यक्ति लौकिक अथवा आध्यात्मिक जीवन में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं, उनके लिए ब्रह्मचर्य एक अत्यावश्यक विषय है। ब्रह्मचर्य के अभाव में मनुष्य सांसारिक कार्यकलाप अथवा आध्यात्मिक साधना के लिए सर्वथा अनुपयुक्त है।

विविध धर्मसङ्घों में ब्रह्मचर्य

प्रत्येक धर्म में युगों तक ब्रह्मचर्य पर अत्यधिक बल दिया जाता रहा है। लोक-साहित्य में आद्योपान्त यह विचार छाया हुआ है कि दिव्य दृष्टि तथा लोकोत्तर झाँकी का यदि एकमात्र नहीं तो भी विशेषकर ब्रह्मचारी ही अधिकारी है। वेस्टरमैक इस व्यख्या के पक्षपाती हैं कि 'वीर्यपात पवित्रतानाशक है।' रियो निग्रो जनजाति के शामनों (तान्त्रिक चिकित्सकों) के लिए ब्रह्मचारी रहने का विधान है; क्योंकि उनका ऐसा विश्वास है कि यदि औषधि विवाहित व्यक्ति द्वारा दी जाये तो वह निष्प्रभाव सिद्ध होगी।

लम्बीचस का कथन है कि यदि व्यक्ति यौन-सम्बन्ध (मैथुन) के कारण अपवित्र है तो देवतागण उसके आवाहन को नहीं सुनते हैं। इसलामधर्म में मक्का की तीर्थयात्रा के समय व्यक्ति से पूर्ण ब्रह्मचर्य की अपेक्षा की जाती है। यह (ब्रह्मचर्य) यहूदी-भक्तमण्डली के लिए सिनाई में ईश-दर्शन तथा मन्दिर में प्रवेश से पूर्व अपेक्षित है। प्राचीन भारत, मिस्र तथा यूनान में यह नियम था कि उपासक को पूजा-काल तथा पूजा से पूर्व मैथुन से अवश्य अलग रहना चाहिए। ईसाईधर्म में भी, ब्रह्मचर्य बपतिस्मा (दीक्षा) तथा यूखारिस्त (परम प्रसाद) की तैयारी में अपेक्षित है।

श्रेष्ठतम प्रकार का ईसाई ब्रह्मचारी ही होता था। ईसाई-धर्मोपदेशक ब्रह्मचर्य की प्रशंसा किया करते थे। उनकी दृष्टि में विवाह उन लोगों के लिए गौण हितावह था जो ब्रह्मचर्य-पालन में असमर्थ थे। यूनानी गिरजाघर के बिशप (धर्माध्यक्ष) सदा ब्रह्मचारी हुआ करते हैं; क्योंकि वे मठवासियों में से चुने जाते हैं।

कोई भी साधु किसी स्त्री के हाथ अथवा बाल पकड़ते समय दूषित विचार से उसके शरीर को स्पर्श करने के लिए नीचे झुकता है अथवा उसके शरीर के किसी-न-किसी अङ्ग का स्पर्श करता है तो वह अपने धर्मसङ्घ पर कलङ्क तथा

अप्रतिष्ठा लाता है। वर्तमान दीक्षा का सङ्कल्प आजीवन सभी प्रकार के मैथुनों से अलग रहना है।

जैन लोग अपने मुनियों पर यह नियम बलात् लादते हैं कि वे सभी प्रकार के यौन-सम्बन्धों से अलग रहें, स्त्री-सम्बन्धी विषयों की चर्चा न करें तथा स्त्री की आकृति का चिन्तन न करें। कामुकता की इन शब्दों में निन्दा की गयी है : "करोड़ों दुर्गुणों में कामुकता सबसे बुरा दुर्गुण है।"

इस नियम के सहायक अन्य नियम भी हैं तथा अशुचि प्रकार के सभी कर्मों का, विशेषकर ऐसे कर्म अथवा शब्द का निषेध जो प्रमुख नियम के भङ्ग करने की दिशा में ले जाता हो अथवा जिससे ऐसा विचार उत्पन्न हो कि नियम का कठोरता से पालन नहीं किया जा रहा था।

भिक्षु जिस स्थान में कोई स्त्री उपस्थित हो, वहाँ न सोये अथवा यदि कोई वयस्क व्यक्ति उपस्थित न हो तो स्त्री को पाँच-छः शब्दों से अधिक शब्दों में पवित्र सिद्धान्त का इपदेश न करे अथवा यदि विशेष रूप से प्रतिनियुक्त न किया गया हो तो सङ्घिनियों को प्रबोधित न करे अथवा स्त्री के साथ एक ही मार्ग से यात्रा न करे। भिक्षा के लिए फेरी करते समय वह समुचित रूप से वस्त्र धारण करे तथा नीची दृष्टि किये हुए चले। वह निर्दिष्ट परिस्थितियों के अतिरिक्त किसी स्त्री से, यदि वह उससे सम्बन्धित नहीं है, तो वस्त्र स्वीकार न करे। दूषित विचार से स्त्री को स्पर्श करना अथवा उसके साथ बातचीत करना तो दूर रहा, वह उसके साथ एकान्त में बैठे भी नहीं।

बौद्धों का 'भिक्षु-सङ्घ' परिमोख के २२७ नियमों द्वारा व्यवस्थित होता था। इनमें प्रथम चार विशेष महत्त्व के थे। इन चारों में से किसी भी एक नियम का भङ्ग सङ्घ से निष्कासन से सम्बन्ध था। अथः वे पराजिक अथवा पराजय-सम्बन्धी कार्यों के नियम कहलाते थे।

प्रथम नियम का कथन है : "कोई भी भिक्षु—जिसने आत्मप्रशिक्षण की पद्धति तथा जीवन-नियम को अपनाया है और तत्पश्चात् प्रशिक्षण से अलग नहीं हुआ है अथवा नियम के पालन में अपनी असमर्थता घोषित नहीं की है—किसी प्राणी यहाँ तक कि पशु के साथ भी मैथुन करता है तो वह पराजित हो गया है, वह अब सङ्घ में नहीं रहा।" 'प्रशिक्षण से अलग होना' वेश को त्याग करने, सङ्घ से अलग होने तथा सांसारिक जीवन में वापस जाने के लिए एक पारिभाषिक शब्द था। यह कदम सङ्घ का कोई भी सदस्य किसी समय उठाने को स्वतन्त्र था।

कहा जाता है कि 'चिरकुमारी-सङ्घ' का प्रवर्तन नूमा ने किया था। वे तीस वर्ष तक अविवाहित रहती थीं। ब्रह्मचर्य-व्रत के भङ्ग का दण्ड जीवित दफनाना था। ये कुमारियाँ अपने असाधारण प्रभाव तथा वैयक्तिक मान-मर्यादा के कारण प्रतिष्ठित थीं। उनके साथ वैसा ही सम्मानसूचक व्यवहार किया जाता था जैसा सम्मान सामान्यतता राजपरिवार के लोगों को दिया जाता था; इस भाँति जनपथ पर एक कर्मचारी अधिकारचिह्न लिये हुए उनके आगे-आगे भागता था तथा सर्वोच्च दण्डाधिकारी उनको मार्ग देता था। उन्हें कभी-कभी वाहन में सवार होने के विशेष सुविधा प्राप्त थी। सार्वजनिक क्रीड़ाओं में उनके लिए सम्मान्य स्थान नियत रहता था। मृत्यूपरान्त उन्हें सम्राटों के समान ही नगर-सीमा में ही दफनाने दिया जाता था; क्योंकि वे विधि से परे होती थीं। उन्हें कृपादान का राजकीय विशेषाधिकार प्राप्त था; क्योंकि यदि प्राणदण्ड के लिए ले जाया जाता हुआ कोई अपराधी उन्हें मार्ग में मिल जाता तो उसे मुक्त कर दिया जाता था।

दार्जिलिंग में तिब्बती लोगों की एक विशाल नयी बस्ती में कुली का काम करने वाले सैकड़ों व्यक्ति भूतपूर्व लामा हैं जो ब्रह्मचर्य-व्रत भङ्ग करने से सम्बद्ध कठोर दण्ड से बचने के लिए अकेले अथवा अपने जार अथवा जारिणी के साथ तिब्बत से भाग आये हैं। अपराधी की भर्त्सना की जाती है और यदि कोई अपराधी पकड़ा गया तो भारी अर्थदण्ड तथा अवमानना के साथ सङ्घ से निष्कासन के अतिरिक्त वह खुले आम शारीरिक दण्ड का भागी होता है।

पेरू की 'वर्जिन्स आफ द सन' (सूर्यकुमारियाँ), जो एक प्रकार की पुजारिनें होती थीं, के दुराचार का पता यदि चल जाता तो उन्हें जीवित दफनाने का दण्ड दिया जाता था।

ब्रह्मचर्य—आध्यात्मिक जीवन का आधार

ब्रह्मचर्य आध्यात्मिक जीवन के लिए परमावश्यक है। यह अति-वाञ्छनीय है। यह परम महत्त्वपूर्ण है। पूर्ण ब्रह्मचर्य के अभाव में आप वास्तविक आध्यात्मिक प्रगति नहीं कर सकते हैं।

इन्द्रिय-निग्रह अथवा ब्रह्मचर्य वह आधारशिला है जिस पर मोक्ष की पीठिका स्थित है। यदि आधारशिला सुदृढ़ नहीं है तो भारी वर्षा में अधिरचना धराशायी हो जायेगा। इसी भाँति, यदि आप ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित नहीं हैं, यदि आपका मन

कुविचारों से प्रमथित है तो आपका पतन हो जायेगा। आप योग की निश्रयिणी के शिखर पर अथवा उच्चतम निर्विकल्प-समाधि तक नहीं पहुँच सकेंगे।

यदि आप ब्रह्मचर्य में सुप्रतिष्ठित नहीं हैं तो आपके आत्मसाक्षात्कार अथवा आत्म-ज्ञान प्राप्त करने की कोई भी आशा नहीं है। ब्रह्मचर्य शाश्वत आनन्द के लोक का द्वार खोलने के लिए सर्वकुञ्जी है। ब्रह्मचर्य योग का आधार ही है। जिस प्रकार जीर्ण-शीर्ण नींव पर निर्मित भवन का धराशायी होना अवश्यम्भावी है उसी प्रकार यदि आपने समुचित नींव नहीं डाली है अर्थात् पूर्ण ब्रह्मचर्य की प्राप्ति नहीं की है तो आप ध्यान से च्युत हो जायेंगे। आप भले ही बारह वर्षों तक ध्यान करते रहें; पर यदि आपने अपने हृदय की अन्तरतम गुहा में चिरकाल से स्थित सूक्ष्म कामवासना अथवा तृष्णा के बीज को विनष्ट नहीं किया है तो आपको समाधि में कोई सफलता प्राप्त नहीं होगी।

काया-सिद्धि प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य एक आधार है। इसके लिए पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन आवश्यक है। यह परम आवश्यक है। योगाभ्यास से वीर्य ओज-शक्ति में रूपान्तरित हो जाता है। योगी का शरीर सिद्ध होता है। उसकी चेष्टाओं में रमणीयता तथा शालीनता होती है। वह यथेच्छ काल तक जीवित रह सकता है। इसे इच्छा-मृत्यु भी कहते हैं।

आध्यात्मिक साधक का वरण किया हुआ साधना-पथ—कर्मयोग, उपासना, राजयोग, हठयोग अथवा वेदान्त—कोई भी हो, उसमें कोई अन्तर नहीं पड़ता; पर उसके लिए ब्रह्मचर्य-साधना एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अर्हता है। सभी साधकों से पूर्ण इन्द्रिय-निग्रह की साधना की अपेक्षा की जाती है। एक सच्चा ब्रह्मचारी ही भक्ति का विकास कर सकता है। एक सच्चा ब्रह्मचारी ही योगाभ्यास कर सकता है। एक सच्चा ब्रह्मचारी ही ज्ञान प्राप्त कर सकता है। ब्रह्मचर्य के अभाव में कोई भी आध्यात्मिक प्रगति सम्भव नहीं है।

कामुकता व्यक्ति की आध्यात्मिक क्षमता पर घातक प्रहार करती है। जब तक आप कामुकता पर नियन्त्रण नहीं कर लेते और ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित नहीं हो जाते तब तक आपके लिए भगवत्-सायुज्य की दिशा में ले जाने वाले अध्यात्म-पथ में प्रवेश पाने की कोई सम्भावना नहीं है। जब तक आपकी नासिका को कामुकता की गन्ध मधुर प्रतीत होती है तब तक आप अपने मन में उदात्त दिव्य विचारों को प्रश्रय नहीं दे सकते हैं। जिस व्यक्ति में काम-भावना बद्धमूल है, वह शतकोटि जन्मों में भी वेदान्त को हृदयङ्गम करने तथा ब्रह्मसाक्षात्कार करने का भी स्वप्न

भी नहीं देख सकता। जहाँ काम-वासना ने अपना डेरा डाल रखा हो, वहाँ सत्य निवास नहीं कर सकता है।

अति-सम्भोग अध्यात्म-पथ पर एक महान् अन्तराय है। यह आध्यात्मिक साधना पर निश्चय ही रोक लगाता है। उदात्त विचारों को मन में प्रश्रय दे कर नियमित ध्यान के द्वारा काम-वासना के आवेग पर नियन्त्रण करना चाहिए। काम-शक्ति का पूर्ण उदात्तीकरण करना चाहिए। तभी साधक पूर्ण सुरक्षित रह सकता है। कामवासना का पूर्ण विनाश ही चरम आध्यात्मिक आदर्श है।

यौनाकर्षण, कामुक विचार तथा कामावेग—ये तीन भगवत्साक्षात्कार के मार्ग की महान् बाधाएँ हैं। यदि कामावेग नष्ट भी हो जाये तो भी यौनाकर्षण दीर्घ काल तक बना रहता है और साधक को उत्पीड़ित करता रहता है। यौनाकर्षण बहुत ही शक्तिशाली होती है। यौनाकर्षण व्यक्ति को इस लोक के बन्धन में डालता है। पुरुष अथवा स्त्री के शरीर का प्रत्येक कोशाणु काम-तत्त्व से प्रभारित होता है। मन तथा इन्द्रियाँ काम-रस से आपूरित होते हैं। पुरुष स्त्रियों की ओर दृष्टिपात किये बिना, उनसे वार्तालाप किये बिना रह नहीं सकता। उसे स्त्री की सङ्गति से सुख प्राप्त होता है। स्त्री भी पुरुष की ओर दृष्टिपात किये बिना, उनसे वार्तालाप किये बिना नहीं रह सकती। उसे पुरुष की सङ्गति से सुख प्राप्त होता है। यही कारण है कि पुरुष अथवा स्त्री के लिए यौनाकर्षण को नष्ट करना अत्यधिक दुस्साध्य होता है। यौनाकर्षण भगवत्कृपा के बिना नष्ट नहीं किया जा सकता। कोई भी मानवीय प्रयास इस यौनाकर्षण की प्रबल शक्ति को पूर्णतः उन्मूलित नहीं कर सकता।

नेत्रेन्द्रिय बहुत ही अनिष्ट करती है। कामुक दृष्टि को, नेत्र के व्यभिचार को नष्ट कीजिए। सभी मुखाकृतियों में भगवान् के दर्शन करने का प्रयास कीजिए। वैराग्य, विवेक तथा जिज्ञासा की धारा बारम्बार उत्पन्न कीजिए। अन्ततः आप ब्रह्म अथवा शाश्वत सत्ता में प्रतिष्ठित हो जायेंगे। उदात्त दिव्य विचारों को पुनः-पुनः उत्पन्न कीजिए तथा अपने जप तथा ध्यान में वृद्धि कीजिए। कामुक विचार नष्ट हो जायेंगे।

यदि आप काम के दास बनते हैं तो कला तथा विज्ञान के ज्ञान से क्या लाभ; उपाधियों तथा प्रतिष्ठा से क्या लाभ; भगवन्नाम के जप, ध्यान तथा 'मैं कौन हूँ' की जिज्ञासा से क्या लाभ? प्रथम इस प्रबल आवेग को इन्द्रिय-निग्रह के कठोर तप द्वारा नियन्त्रित कीजिए। उन्नत ध्यान आरम्भ करने से पूर्व कम-से-कम

अतिनियमनिष्ठ शारीरिक ब्रह्मचर्य का पालन कीजिए। तत्पश्चात् मानसिक ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित होने का प्रयास कीजिए।

आप सभी के बीच में एक प्रच्छन्न शेक्सपीयर अथवा कालिदास, एक प्रच्छन्न वर्ड्सवर्थ अथवा वाल्मीकि, एक सम्भवनीय सन्त, एक जैवियर, भीष्मपितामह, हनुमान् अथवा लक्ष्मण जैसा अखण्ड ब्रह्मचारी, एक विश्वामित्र अथवा वसिष्ठ, डा॰ जे॰ सी॰ बोस अथवा रमण जैसा महान् वैज्ञानिक, ज्ञानदेव अथवा गोरखनाथ जैसा योगी, शङ्कर तथा रामानुज जैसा दार्शनिक, तुलसीदास, रामदास अथवा एकनाथ जैसा भक्त हो सकता है।

अतः आप ब्रह्मचर्य के द्वारा अपनी प्रच्छन्न क्षमताओं तथा सभी प्रकार की ऊर्जाओं को जाग्रत कीजिए तथा शीघ्र भगवच्चेतना प्राप्त कर ऐहिक जीवन की विपत्तियों तथा इस (जीवन)-के सहगामी जन्म-मृत्यु तथा शोक-रूपी अनिष्टों को पार कर जाइए।

वह ब्रह्मचारी धन्य है जिससे आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत ले लिया है। वह ब्रह्मचारी और भी अधिक धन्य है जो कामवासना को नष्ट करने तथा पूर्ण ब्रह्मचर्य प्राप्त करने के लिए सच्चायीपूर्वक सङ्घर्षरत है। वह ब्रह्मचारी तो सर्वाधिक धन्य है जिसने काम-वासना का पूर्णतया उन्मूलन कर डाला है तथा आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लिया है। ऐसे उन्नत ब्रह्मचारियों की जय हो! वे इस पृथ्वी पर साक्षात् देवता हैं। उनके आशीर्वाद आप सबको प्राप्त हों!

१०

गृहस्थों के लिए ब्रह्मचर्य

यह बात पूर्णतः असन्दिग्ध है कि ब्रह्मचर्यमय जीवन यशस्कर तथा आश्चर्यकर है। फिर भी, गार्हस्थ्य-जीवन में संयमपूर्ण जीवन आध्यात्मिक विकास के लिए उतना ही लाभकर तथा सहायक होता है। दोनों के अपने-अपने लाभ हैं। आपको इन दोनों में से किसी भी एक पथ पर चलने के लिए बड़े मनोबल की आवश्यकता है।

वर्णाश्रम धर्म तो आजकल वस्तुतः लुप्त हो चला है। प्रत्येक व्यक्ति वैश्य अथवा बनिया बन गया है और वैध तथा अवैध किसी भी तरह से, याचना, ऋण अथवा स्तैन्य से धन-सञ्चय के लोभ में संलग्न है। प्रायः सभी ब्राह्मण तथा

क्षत्रिय वैश्य बन चले हैं। आजकल सच्चे ब्राह्मण तथा क्षत्रिय नहीं रह गये हैं। वे येन-केन-प्रकारेण रुपया चाहते हैं। वे अपने वर्ण अथवा आश्रम-धर्म का पालन करने का प्रयास नहीं करते हैं। मनुष्य के पतन का यही मूलभूत कारण है। यदि गृहस्थ अपने आश्रम के कर्तव्यों को अतिनियमनिष्ठा से निभाते है, यदि वह आदर्श गृहस्थ है तो उसे संन्यास लेने की आवश्यकता नहीं है। गृहस्थ अपने कर्तव्य-पालन में विफल हो रहे हैं। यही कारण है कि वर्तमान समय में संन्यासियों की संख्या में वृद्धि हो रही है। एक आदर्श गृहस्थ का जीवन उतना ही कठिन तथा कठोर है जितना कि एक आदर्श संन्यासी का जीवन। प्रवृत्ति-मार्ग अथवा कर्मयोग का मार्ग उतना ही कठिन तथा कठोर है जितना कि निवृत्ति-मार्ग अथवा संन्यास का पथ है।

यदि व्यक्ति अपने गार्हस्थ्य-जीवन में ब्रह्मचर्यमय जीवन यापन करता है तथा सन्तान के लिए ही नियमित समय पर सम्भोग करता है तो वह स्वस्थ, मेधावी, बलवान्, सुरूप तथा आत्मत्यागी सन्तान का प्रजनन कर सकता है। प्राचीन भारत के तपस्वी तथा ऋषिजन विवाहित होने पर इस उत्कृष्ट नियम का बड़ी ही सावधानीपूर्वक अनुसरण किया करते थे तथा अपने व्यवहार तथा उपदेश द्वारा शिक्षा दिया करते थे कि गृहस्थ होते हुए भी किस प्रकार ब्रह्मचारी का जीवन यापन किया जाये। हमारे पूर्वज मातृभूमि की रक्षा तथा राष्ट्र के अन्य उत्कर्षकारी कार्यों के लिए सन्तान उत्पन्न करने में निस्सन्देह ऋषियों का अनुसरण करते थे। जिन्होंने श्रीमद्भागवत का स्वाध्याय किया है वे मनु-पुत्री देवहूति तथा उनके पति कर्दम ऋषि के जीवन से परिचित होंगे। कर्दम ऋषि ने देवहूति को पुत्र-रत्न देने के लिए उनके साथ एक बार सहवास किया जिससे उनसे सांख्यदर्शन के प्रवर्तक कपिल मुनि का जन्म हुआ। पराशर ने वेदान्तदर्शन के प्रवर्तक श्री व्यास को जन्म देने के लिए मत्स्यगन्धा के साथ सहवास किया।

प्राचीन काल के महर्षिजन विवाहित होते थे; किन्तु वे रागमय तथा कामुक जीवन यापन नहीं करते थे। उनका गार्हस्थ्य-जीवन धर्मपरायण जीवन ही होता था। यदि आप उनका अक्षरशः अनुकरण नहीं कर सकते तो आपको उनके जीवन को मर्यादा के रूप में, एक अनुकरणीय आदर्श के रूप में अपने सम्मुख रखना चाहिए तथा सन्मार्ग पर चलना चाहिए। गृहस्थाश्रम एक कामुक तथा लम्पट जीवन नहीं है। यह निस्स्वार्थ सेवा का, शुद्ध तथा सरल धर्म का, दानशीलता का, साधुता का, स्वावलम्बन का तथा लोकहित और लोक-संग्रह का

अतिनियमनिष्ठ जीवन है। यदि आप ऐसा जीवन व्यतीत कर सकते हैं तो गृहस्थी का जीवन उतना ही अच्छा है जितना कि संन्यासी का जीवन।

विवाहित जीवन में ब्रह्मचर्य क्या है?

सुव्यवस्थित, संयत विवाहित जीवन यापन करें। गृहस्थ के रूप में भी आप गार्हस्थ्य-धर्म के सिद्धान्तों में लगे रह कर आत्मसंयम तथा भगवान् की नियमित उपासना द्वारा ब्रह्मचारी बने रह सकते हैं। विवाह आपको आपके आध्यात्मिक पथ में किसी भी रूप में अधोगामी न बनाये। आपको अध्यात्म-अग्नि को सदा प्रज्वलित रखना चाहिए। आपको अपनी धर्मपत्नी को भी आध्यात्मिक जीवन की वास्तविक महिमा को समझाना चाहिए। यदि आप दोनों कुछ काल तक ब्रह्मचर्य का पालन करें और तत्पश्चात् असंयम से बचे रहें तो आपकी धर्मपत्नी हृष्ट-पुष्ट संतान का प्रजनन करेंगी जो देश के गौरव होंगे। सुरक्षित रखी हुई शक्ति का उच्चतर आध्यात्मिक उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जा सकता है। बारम्बार के प्रसव की रोकथाम से आपकी धर्मपत्नी का स्वास्थ्य भी सुरक्षित रहेगा।

गृहस्थ-आश्रम में ब्रह्मचर्य का अर्थ मैथुन पर पूर्ण संयम रखना है। गृहस्थों को यौन-सुख के विचार के बिना, केवल वंश-परम्परा बनाये रखने हेतु माह में एक बार उचित समय पर अपनी पत्नी के साथ सहवास करने की अनुमति है। यह भी ब्रह्मचर्य-व्रत है। वे भी ब्रह्मचारिणी हैं।

गृहस्थों को अपनी पत्नियों को भी उपवास रखने तथा जप, ध्यान और उन सभी अन्य साधनाओं को करने के लिए कहना चाहिए जिनसे ब्रह्मचर्य-पालन में उन्हें सहायता प्राप्त होती है। उन्हें अपनी धर्मपत्नियों को भी गीता, उपनिषद्, भागवत तथा रामायण के स्वाध्याय तथा आहार-सम्बन्धी नियमों के सम्बन्ध में प्रशिक्षित करना चाहिए।

यदि आप ब्रह्मचर्य पालन करना चाहते हैं तो आप अपनी पत्नी को अपनी भगिनी समझें तथा अनुभव करें। पति-पत्नी की भावना को नष्ट कर डालें तथा भ्राता तथा भगिनी की भावना विकसित करें। आप दोनों ही शुद्ध तथा प्रगाढ़ प्रेम विकसित करेंगे; क्योंकि कामुकता की अशुद्धि दूर हो जायेगी। अपनी पत्नी के साथ सदा आध्यात्मिक विषयों की ही चर्चा करें। उनसे महाभारत तथा भागवत के आख्यान कहें। अवकाश के दिनों में उनके पास बैठें तथा धार्मिक पुस्तकें पढ़ कर सुनायें। शनैः-शनैः उनका मन परिवर्तित हो जायेगा। उन्हें आध्यात्मिक

साधनाओं में रुचि तथा प्रसन्नता होगी। यदि आप सांसारिक कष्टों से मुक्त होना तथा शाश्वत आत्मानन्द भोगना चाहते हैं तो इसे कार्यान्वित करें।

आजकल के युवक बाहर जाते समय अपनी पत्नियों को सदा अपने साथ ले जाने में पाश्चात्यों का अनुकरण करते हैं। इस व्यवहार से पुरुषों में स्त्रियों की सङ्गति में सदा-सर्वदा रहने का दृढ़ स्वभाव पड़ जाता है; फिर अल्पकाल के वियोग से उन्हें अत्यधिक पीड़ा तथा व्यथा होती है। कई लोगों को पत्नी के मृत्यु से बड़ा आघात लगता है। इसके अतिरिक्त उनके लिए एक माह के ब्रह्मचर्य-व्रत का सङ्कल्प लेना अतीव कठिन हो जाता है। हे अभागे दुर्बल लोगो, आध्यात्मिक दिवालियो! अपनी जीवन-सङ्गिनियों से जितना अधिक हो सके, दूर रहने का प्रयास कीजिए। उनके साथ कम बातचीत कीजिए। गम्भीर रहिए। उनके साथ हास-परिहास न कीजिए। सायङ्काल को भ्रमणार्थ अकेले जाइए। आपके बुद्धिमान् पूर्वजों ने क्या किया? पाश्चात्यों में जो अच्छाइयाँ हैं, उन्हें ही आत्मसात् करें। लोक-व्यवहार, जीवन-पद्धति, पहनावा तथा खान-पान का निकृष्ट अनुकरण अनिष्टिकारक है।

जब पत्नी माँ बन जाती है

जब आपके एक पुत्र उत्पन्न हो जाता है तो पत्नी आपकी माता बन जाती है; क्योंकि आप स्वयं पुत्र के रूप में उत्पन्न हुए हैं। पुत्र अपने पिता की शक्ति मात्र है। आप अपनी मानसिक अभिवृत्ति को बदल दें। अपनी पत्नी की जगज्जननी के रूप में सेवा करें। आध्यात्मिक साधना आरम्भ करें। कामवासना को नष्ट कर डालें। आप अपनी पत्नी को काली अथवा जगज्जननी मान कर, प्रातःकाल बिस्तर से उठते ही उसके चरण-स्पर्श करें तथा उसको साष्टाङ्ग प्रणाम करें। आप इस कार्य में लज्जा का अनुभव न करें। इस व्यवहार से आपके मन से 'पत्नी'-भाव दूर हो जायेगा। यदि आप शारीरिक रूप से साष्टाङ्ग प्रणाम न कर सकें तो कम-से-कम मानसिक रूप से ही करें।

सन्तानोत्पत्ति के पश्चात् व्यक्ति को कामुकता त्याग देनी चाहिए। उसे ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए। उसे अपनी पत्नी को अपनी माता मानना चाहिए। यदि एक बार इस विचार को मन में प्रमुख स्थान दे दिया तो वह, बच्चे की मृत्यु हो जाने पर भी अपने मानसिक दृष्टिकोण को क्योंकर बदल सकता है और अपनी पत्नी के विषय में कामुक दृष्टि से सोच सकता है। यह गृहस्थ के लिए एक महान् साधना है। यदि सन्तान न उत्पन्न हो तो द्वितीय पत्नी के साथ विवाह

करना उचित नहीं है। तब पति तथा पत्नी को ब्रह्मचर्य पालन करते हुए आध्यात्मिक पथ पर संयुक्त रूप से आगे बढ़ना चाहिए।

आध्यात्मिक सहभागिता का जीवन यापन

मनु का कथन है : "प्रथम सन्तान धर्म से तथा शेष सन्तानें काम से उत्पन्न होती हैं। विषय-सुख के लिए रतिक्रिया न्यायसङ्गत नहीं है।" जो पिपासु साधक आत्मसाक्षात्कार के मार्ग के पथिक हैं और जो चालीस वर्ष से अधिक आयु वाले गृहस्थ हैं उन्हें अपने पति अथवा पत्नी के साथ सम्भोग करना त्याग देना चाहिए; क्योंकि यौन-संसर्ग सभी असद् भावनाओं को पुनरुज्जीवित कर देता है और उन्हें जीवन का नया पट्टा प्रदान करता है। विवाह को अब एक सुव्यवस्थित धार्मिक गृहस्थ जीवन यापन द्वारा अपनी प्रकृति के पूर्ण दिव्यीकरण तथा जीवन-लक्ष्य—भगवत्साक्षात्कार—की प्राप्ति के लिए दो आत्माओं का ईश्वर-विहित सम्बन्ध समझना चाहिए। यदि पति तथा पत्नी आशु आध्यात्मिक प्रगति तथा इस जीवन में ही आत्मसाक्षात्कार करना चाहते हैं तो उन्हें पूर्ण शारीरिक ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। आध्यात्मिक मार्ग में अधूरे प्रयास को कोई स्थान नहीं है।

क्या आप चालीस वर्ष से अधिक वय के गृहस्थ हैं? तब तो आपको अब पूर्ण ब्रह्मचारी बन जाना चाहिए। आपकी पत्नी को भी एकादशी के दिन व्रत रखना चाहिए। अब ऐसा न कहें—"स्वामी जी, मैं क्या कर सकता हूँ। मैं एक गृहस्थ हूँ।" यह झूठा बहाना है। आप एक कामुक गृहस्थ के रूप में कब तक रहना चाहते हैं? क्या जीवनावसानपर्यन्त रहेंगे? क्या जीवन का खाने, सोने तथा प्रजनन करने से अधिक उदात्त कोई लक्ष्य नहीं है? क्या आप आत्मा के शाश्वत आनन्द का उपभोग करना नहीं चाहते हैं? आप सांसारिक सुखों का पर्याप्त आनन्द ले चुके हैं तथा गृहस्थ-जीवन की अवस्था को पार कर चुके हैं। यदि आप युवक होते तो मैं आपको छोड़ सकता था; किन्तु अब नहीं। अब संसार में रहते हुए वानप्रस्थ तथा मानसिक संन्यास की अवस्था के लिए तैयार हो जायें। सर्वप्रथम अपने हृदय को रँगें। यह निस्सन्देह एक उदात्त जीवन होगा। अपने को तैयार कर लें। मन को अनुशासित करें। वास्तविक संन्यास मानसिक अनासक्ति है। वास्तविक संन्यास वासनाओं, 'मैं-पन,' 'मेरा-पन,' स्वार्थपरता तथा सन्तान, शरीर, पत्नी और सम्पत्ति के मोह का विनाश है। आपको हिमालय की गुहाओं में जाने की आवश्यकता नहीं है। मन की उपर्युक्त स्थिति को प्राप्त करें।

अपने परिवार तथा बच्चों के साथ संसार में शान्ति तथा समृद्धि में रहें। संसार में रहें; किन्तु संसार से बाहर रहें। सांसारिकता त्याग दें। यही सच्चा संन्यास है। मैं वास्तव में यही चाहता हूँ। तब आप राजाओं के राजा बन जायेंगे। मैं कई वर्षों से खूब चिल्ला-चिल्ला कर इस प्रकार कह रहा हूँ; किन्तु बहुत ही कम व्यक्ति मेरे उपदेशों का अनुसरण करते हैं।

प्रवृत्ति-मार्ग का अनुसरण करने वाले व्यक्ति के लिए साध्वी पत्नी एक मूल्यवान् रत्न तथा प्रभु की असीम कृपा का मूर्त रूप है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सामञ्जस्य दम्पति के लिए प्रभु की दुर्लभ देन है। प्रत्येक जीवन-सङ्गी को दूसरे का सभी अर्थों में सच्चा साथी होना चाहिए। गृहस्थाश्रम ईश्वरत्व में विकास की निश्रयिणी का सुरक्षित डण्डा है। शास्त्रविहित नियम का पालन करें तथा अनन्त आनन्द का उपभोग करें। सच्चा मिलन आध्यात्मिक आधार पर ही स्थापित हो सकता है। आपमें से दोनों ही उभयनिष्ठ जीवन-लक्ष्य—भगवत्साक्षात्कार को प्राप्त करने के आकांक्षी बनें। जब आपके चतुर्दिक् रहने वाले दम्पति भौतिकता की तथा अपनी वैयक्तिक हैसियत से एक-दूसरे को नीचे घसीटने की होड़ में लगे हैं, आप दोनों को आध्यात्मिक साधना में शीघ्र उन्नति करने की स्पर्धा करनी चाहिए। यह क्या ही अनूठी स्पर्धा है! जीवन-सङ्गी के साथ ऐसी प्रतिस्पर्धा क्या ही ईश्वरानुग्रह है!

११

स्त्रियाँ तथा ब्रह्मचर्य

एक साधक लिखता है—"मैं जानना चाहता हूँ कि क्या वीर्य की उत्पत्ति तथा उसके क्षय का सिद्धान्त जो पुरुषों पर लागू होता है वह स्त्रियों के विषय में भी लागू होता है? क्या वे भी वास्तव में उतना ही प्रभावित होती हैं जितना कि पुरुष?" प्रश्न महत्त्वपूर्ण तथा प्रासङ्गिक है। हाँ, अत्यधिक मैथुन से पुरुषों की भाँति ही स्त्रियों के शरीर को क्लान्ति होती है तथा उनकी जीवन-शक्ति का अपक्षय होता है। इससे शरीर पर निश्चय ही अत्यधिक स्नायविक तनाव पड़ता है।

जनन-ग्रन्थि अथवा पुरुषों के वृषणों की तत्स्थानी डिम्बग्रन्थि वीर्य के प्रकार की बहुमूल्य जीवन-शक्ति उत्पन्न तथा विकसित करती तथा परिपक्व बनाती है।

इसे डिम्ब कहते हैं। यद्यपि यह डिम्ब वास्तव में स्त्री के शरीर से बाहर नहीं जाता है जैसा कि पुरुष के वीर्य का स्खलन होता है, तथापि मैथुन-क्रिया के कारण डिम्ब-ग्रन्थि को छोड़ कर भ्रूण का रूप लेने के लिए गर्भाधान के प्रक्रम में लग जाता है। और सभी यह भली-भाँति जानते हैं कि गर्भ धारण करने से शक्ति का कितना अपक्षय होता है और कैसी पीड़ा होती है। इस शक्ति के बार-बार के रिक्तीकरण तथा प्रसव-पीड़ा के कारण स्वस्थ महिलाओं का स्वास्थ्य भी चकनाचूर हो जाता है। यह उनके बल, सौन्दर्य तथा मनोहरता के अतिरिक्त उनके यौवन और मानसिक शक्ति को भी नष्ट कर डालता है। उनके नेत्रों में आभा तथा चमक नहीं रह जाते जो कि आन्तरिक शक्ति के द्योतक हैं।

मैथुन-क्रिया की शीघ्र ऐन्द्रिक उत्तेजना स्नायु-तन्त्र को चकनाचूर कर देती है तथा उनमें दुर्बलता भी उत्पन्न करती है। स्त्रियों के शरीर अधिक सुकुमार तथा अति-संवेदनशील होने के कारण उन पर पुरुषों की अपेक्षा प्रायः अधिक कुप्रभाव पड़ता है।

स्त्रियों को अपनी बहुमूल्य जीवन-शक्ति का परिरक्षण करना चाहिए। डिम्ब-ग्रन्थियों द्वारा स्रावित डिम्ब तथा अन्तःस्राव (हार्मोन) स्त्रियों के अधिकतम शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।

स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करना चाहिए। वे भी मीराबाई की भाँति नैष्ठिक ब्रह्मचारिणियाँ रह कर अपने-आपको भगवान् की सेवा और भक्ति में अर्पित कर सकती हैं अथवा वे गार्गी तथा सुलभा की तरह ब्रह्मविचार कर सकती हैं। इस मार्ग को अपनाने वाली स्त्रियों को 'ब्रह्मविचारिणी' की संज्ञा दी जाती है।

गृहस्थधर्मिणियों को पतिव्रता-धर्म का पालन करना तथा सावित्री, अनसूया को अपना आदर्श मानना चाहिए। उन्हें अपने पति को भगवान् कृष्ण के रूप में देखना चाहिए तथा भगवद्दर्शन करना चाहिए जैसा कि लैला मजनू को देखती थी। वे भी आसनों, प्राणायामों आदि सभी क्रियाओं का अभ्यास कर सकती हैं। उन्हें अपने घरों में प्रतिदिन सशक्त संकीर्तन, जप तथा प्रार्थना करनी चाहिए। वे भक्ति के द्वारा अपनी कामवासनाओं को सहज में ही नष्ट कर सकती हैं; क्यों की वे स्वभाव से ही भक्तिपरायण होती हैं।

प्राचीन काल में अनेक स्त्रियों ने चमत्कारिक कार्य किये तथा संसार को सतीत्व की शक्ति प्रदर्शित की। नलयिनी ने अपने पति के जीवन की रक्षा के

लिए अपने सतीत्व-बल से सूर्य को उदय होने से ही रोक दिया था। अनसूया ने त्रिमूर्तियों—ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर—को शिशुओं में रूपान्तरित कर दिया जब उन्होंने उनसे निर्वाण-भिक्षा की याचना की। उन्होंने केवल अपने सतीत्व की बल पर ही इन तीनों महान् देवताओं को शिशुओं में बदला था। सावित्री ने अपने सतीत्व के बल से यमराज के पाश से अपने पति सत्यवान् के प्राण वापस लाये थे। सतीत्व अथवा ब्रह्मचर्य की ऐसी ही महिमा है। जो स्त्रियाँ सतीत्वमय गार्हस्थ्य जीवन यापन करती हैं वे भी अनसूया, नलयिनी अथवा सावित्रीतुल्य बन सकती हैं।

ब्रह्मचारिणियाँ—प्राचीन तथा आधुनिक

प्राचीन काल में भारत में ब्रह्मचारिणियाँ होती थीं। वे ब्रह्मवादिनी थीं, ब्रह्म पर प्रवचन करती थीं। वे गृहस्थधर्मिणी का जीवनयापन करना नहीं चाहती थीं। वे अपने कुटीरों में ऋषियों तथा मुनियों की सेवा करती थीं और ब्रह्म-विचार किया करती थीं। राजा जानश्रुति ने अपनी पुत्री को रैक्व ऋषि की सेवा में अर्पण कर दी थी। इसका उल्लेख आपको छान्दोग्योपनिषद् में मिलेगा।

सुलभा एक परम विदुषी महिला थी। उसका जन्म एक राजपरिवार में हुआ था। वह ब्रह्मचारिणी थी। वह मोक्ष-धर्म में दीक्षित थी। वह तपश्चर्या करती थी। वह स्व-आचरित जीवनचर्या-सम्बन्धी अनुष्ठानों में अडिग थी। वह अपने व्रतों में अटल थी। औचित्य का विचार किये बिना वह कभी एक भी शब्द नहीं बोलती थी। वह एक योगिनी थी। वह संन्यासिनी का जीवन-यापन करती थी। वह जनक की राज-सभा में उनके समक्ष उपस्थित हुई और उनके साथ उसने ब्रह्मविद्या-सम्बन्धी बड़ी परिचर्चा की।

गार्गी भी एक ब्रह्मचारिणी थी। वह भी एक सुसंस्कृत महिला थी। उसने भी याज्ञवल्क्य के साथ ब्रह्मविद्या पर लम्बा शास्त्रार्थ किया। उनका यह संवाद बृहदारण्यकोपनिषद् में आया है।

यूरोप में भी बहुत-सी स्त्रियाँ थीं जो ब्रह्मचारिणी थीं तथा जिन्होंने अपना जीवन कठोर तपश्चर्या, प्रार्थना तथा ध्यान के लिए पूर्णतया समर्पित कर दिया था। उनके अपने आश्रम थे। भारत में अब भी ऐसी शिक्षित महिलाएँ हैं जो ब्रह्मचारिणी का जीवन-यापन कर रही हैं। वे विवाह करना नहीं चाहतीं। यह उनके पूर्व-जन्म के सुसंस्कारों के प्राबल्य के कारण है। वे विद्यालयों में

बालिकाओं को शिक्षा देती हैं। वे निर्धन बालिकाओं को व्यक्तिगत रूप से निःशुल्क शिक्षा देती हैं तथा उन्हें सिलायी तथा अन्य घरेलू कार्यों का प्रशिक्षण देती हैं। वे धार्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय तथा प्रातः-सायं ध्यानाभ्यास करती हैं। वे कीर्तन करती हैं तथा प्रतिदिन आध्यात्मिक दैनन्दिनी लिखती हैं। वे महिलाओं में सत्सङ्ग तथा कीर्तन कराती हैं तथा बालिकाओं को आसनों और प्राणायामों का प्रशिक्षण देती हैं। वे गीता तथा उपनिषद् पर प्रवचन करती हैं, अँगरेजी, संस्कृत तथा हिन्दी में धार्मिक विषयों पर व्याख्यान देती हैं तथा अवकाश के दिनों और महत्त्वपूर्ण अवसरों पर आध्यात्मिक जन-जागरण के लिए बड़े पैमाने पर महिलाओं का सम्मेलन आयोजित करती हैं।

कभी-कभी वे गाँवों में जाती हैं तथा निर्धन लोगों में बिना मूल्य के औषधियाँ वितरित करती हैं। वे प्रथमोपचार, समचिकित्सा (होमियोपैथी), विषमचिकित्सा (एलोपैथी) तथा जीवरसायनिक-पद्धति के ज्ञान से सन्नध हैं। वे रोगियों के उपचार करने में प्रशिक्षित हैं। एक उच्च शिक्षा प्राप्त ब्रह्मचारिणी है जो संस्कृत, अँगरेजी तथा हिन्दी में सुनिष्णात है तथा कन्याओं की एक संस्था की प्रधान है। वह निर्धन बालिकाओं के लिए अपने व्यय से एक निःशुल्क अराजकीय विद्यालय भी चलाती है। यह निःसन्देह एक बहुत ही महती सेवा है।

ऐसी कन्याएँ तथा महिलाएँ वास्तव में भारत के लिए वरदान हैं। वे पवित्र तथा आत्मत्यागमय जीवन-यापन करती हैं। वे इहलोक में परमानन्द, समृद्धि तथा कीर्ति का उपभोग करती तथा परलोक में परम शान्ति का अमरपद प्राप्त करती हैं। भारत को इस प्रकार की और अधिक ब्रह्मचारिणियों की आवश्यकता है जो अपनी जीवन सेवा, ध्यान तथा प्रार्थना के लिए समर्पित कर सकें।

उत्तर प्रदेश में एक महारानी थी। वह सादा वस्त्र धारण करती, साधुओं तथा निर्धनों की सेवा करती तथा सदा संन्यासियों के सान्निध्य में रहती थी। उसे शास्त्रों का अगाध ज्ञान था तथा वह नियमित रूप से ध्यान तथा प्रार्थना किया करती थी। वह लगातार कई महीनों तक मौन रखती तथा कुछ समय एकान्त में व्यतीत करती थी। इसके साथ वह राज्य पर शासन भी करती थी।

एक सुशिक्षित महिला है जो एम॰ बी॰ बी॰ एस॰ है। उसके पतिदेव उच्च पद पर आसीन हैं। वह रोगियों का निःशुल्क उपचार करती है। वह रोगियों का निरीक्षण करने के लिए उनके घर जाने का कोई शुल्क नहीं लेती है। वह समाज की बहुत अच्छी सेवा करती है। वह नौकरी के पीछे नहीं भागती-फिरती। उसमें

लोभ नहीं है। वह अपनी चित्त-शुद्धि के लिए चिकित्सा-सेवा करती है। वह निर्धनों की चिकित्सा-सेवा को भगवत्पूजा मानती है। वह घर की देखभाल करती तथा अपने पतिदेव की सेवा भी करती है। वह धर्मग्रन्थों का स्वाध्याय करती है तथा कुछ समय ध्यान, पूजा तथा प्रार्थना में लगाती है। वह प्रशस्य तथा पवित्र जीवन-यापन करने वाली एक आदर्श महिला है।

उच्छृङ्खल जीवन स्वतन्त्रता नहीं है

संसार को इस प्रकार की आदर्श महिलाओं की नितान्त आवश्यकता है। मेरी कामना है कि संसार ऐसी प्रशस्य महिलाओं से भरपूर रहे! मैं स्त्रियों की निन्दा नहीं करता हूँ। मैं उन्हें शिक्षा तथा स्वतन्त्रता देने का विरोध नहीं करता हूँ। मैं उनके प्रति परम श्रद्धा रखता हूँ। मैं उनकी देवियों के रूप में पूजा करता हूँ। किन्तु मैं स्त्रियों के लिए किसी ऐसी स्वतन्त्रता के पक्ष में नहीं हूँ, जो उनका अधःपतन करे। मैं ऐसी शिक्षा तथा संस्कृति के पक्ष में हूँ जो उन्हें अमर तथा प्रशस्य बनाये, जो उन्हें सुलभा, मीरा तथा मैत्रेयी की भाँति, सावित्रि तथा दमयन्ती की भाँति आदर्श नारी बनाये। मैं यही चाहता हूँ। यही प्रत्येक व्यक्ति चाहेगा।

उच्छृङ्खल जीवन पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं है। भारत की कुछ स्त्रियों ने इस मिथ्या स्वतन्त्रता का लाभ उठा कर अपना सर्वनाश कर लिया है। तथाकथित शिक्षित महिलाएँ आज जिस स्वतन्त्रता का उपभोग कर रही हैं, उनकी कोई सीमा नहीं है। इस स्वतन्त्रता ने अनेक घरों का सत्यानाश कर डाला है। इसने समाज में अव्यवस्था उत्पन्न कर दी है। इसने अनेक सम्मान्य परिवारों को लज्जित किया है। लड़कियों ने स्वतन्त्रता की अपनी अतोषणीय तृष्णा में पड़ कर सीमा का अतिक्रमण किया और अमूल्य सम्पत्ति खो डाली जिसे अतीतकाल की महिलाओं ने निष्कलंक बनाये रखा था।

पुरुषों के साथ मुक्त रूप से संसर्ग रखने से स्त्री अपनी गरिमा, शालीनता, नारीसुलभ लालित्य तथा अपने शरीर और चरित्र की पवित्रता खो बैठती है। जो स्त्री पुरुषों के साथ मुक्त रूप से मिलती-जुलती है वह अपने सतीत्व को अधिक समय तक बनाये नहीं रख सकती है। इसके कुछ अपवाद हो सकते हैं और रहे भी हैं। जो स्त्री लोक-जीवन में पुरुषों से मुक्त रूप से मिलती-जुलती है तथापि शुद्ध भी रहती है, वह निश्चय ही अतिमानवीय स्त्री होगी। अपने स्वभावगत काम-वासना वाली सामान्य स्त्री तो शीघ्र ही झुक जायेगी। मानवप्रकृति अपनी पूर्ति करेगी।

यदि नारी का सतीत्व नष्ट हो गया तो उसके जीवन में अवशेष क्या रहा ? भले ही वह स्त्री समृद्ध हो तथा समाज के उच्च वर्ग के साथ उसका मेल-जोल हो; पर यदि उसमें सतीत्व नहीं तो वह प्राणधारी शव मात्र है। स्वच्छन्द मिलने-जुलने का अनर्थकारी परिणाम होता है। जब जीर्ण-शीर्ण वस्त्र धारण करने तथा एकान्त में कन्द-मूल खा कर जीवन-निर्वाह करने वाले ऋषि तथा योगी भी यदि सावधान नहीं रहते तो प्रकृति की अशुभ शक्तियों द्वारा अधःपतित हो जाते हैं तो उन स्त्रियों के विषय में क्या कहना जो नित्य स्वादिष्ट भोजन तथा मिष्टान्न खाती हैं, जो गोटे के अञ्चल वाले सुवासित मखमली तथा कौशेय वस्त्र धारण करती हैं, इनमें अधिक मिलने-जुलने का व्यसन है, जो आत्मसंयममय जीवन-यापन नहीं करती हैं, जिनमें धार्मिक प्रशिक्षण तथा अनुशासन नहीं है तथा जिन्हें आभ्यन्तर जीवन तथा मोक्ष-धर्म का कोई बोध नहीं है। सुधी पाठक ! मैं इस विषय को आपके स्वयं के चिन्तन, मनन, पर्यालोचन तथा समीक्षा के लिए आप पर छोड़ देता हूँ।

स्त्रियों को ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए जिससे उनकी तथा उनके परिवार की अपकीर्ति अथवा अपयश हो तथा उनके चरित्र पर कलंक लगे। चरित्रहीन पुरुष अथवा स्त्री जीवित ही मृतक-तुल्य समझे जाते हैं। समाज में व्यवहार करते समय उन्हें बहुत ही सावधान तथा सतर्क रहना चाहिए। उन्हें अत्यधिक बातें करने, मिलने-जुलने, ठहाका लगाने तथा मूर्खों की तरह हँसने से बचना चाहिए। उन्हें सदा गम्भीर गति से चलना चाहिए। कभी कूल्हे मटकाते हुए नहीं चलना चाहिए। उन्हें प्रेम के हाव-भाव से पुरुषों की ओर नहीं देखना चाहिए। उनके वस्त्र बहुत चुस्त तथा अंग उद्घाटित करने वाले नहीं होने चाहिए। उन्हें बनाव-शृंगार त्याग देना चाहिए।

आध्यात्मिक जीवन के लिए आह्वान

हे देवियो ! भूषाचार तथा कामवासना में अपना जीवन नष्ट न करें। अपने नेत्र-खोलें। धर्म-मार्ग पर चलें। अपने पतिव्रत-धर्म को बनाये रखें। अपने पतिदेव में भगवद्दर्शन करें। गीता, उपनिषद्, भागवत तथा रामायण का स्वाध्याय करें। अच्छी गृहस्थधर्मिणियाँ तथा ब्रह्मचारिणियाँ बनें। अनेक गौराङ्गों को जन्म दें। संसार का भाग्य पूर्णतया आपके हाथ में है। संसार की सर्वकुंजी आपके पास है। स्वर्गिक आनन्द के द्वार को खोलें। अपने घर में वैकुण्ठ लायें।

अपने बच्चों को अध्यात्मपथ का प्रशिक्षण दें। जब वे अल्पव्यस्क हों, तभी उनमें अध्यात्म का बीज वपन करें।

संसार की देवियो ! क्या आप उच्चतर जीवन के लिए, भव्य, उदात्त तथा एकमात्र आत्ममय सच्चे जीवन के लिए प्रयास नहीं करेंगी ? क्या इस भूतल पर जीवन की क्षुद्र भौतिक आवश्यकताओं से सन्तुष्ट हो जाना ही आपके लिए पर्याप्त है ? क्या आपको स्मरण है कि मैत्रेयी ने याज्ञवल्क्य से क्या कहा था ? उसने अपने पति से कहा था—"जिससे मैं अमर नहीं हो सकती, उस इस सारी पृथ्वी के धन को ले कर मैं करूँगी ?" इस संसार की कितनी स्त्रियाँ इतनी निर्भीक हैं जो स्त्रियों के औपनिषदिक आदर्श के इस विवेकपूर्ण कथन को निश्चयपूर्वक कह सकें ?

अपने को संसार के बन्धन में बाँधना संसार की माताओं तथा बहनों का जन्मसिद्ध अधिकार नहीं है। परिवार, बच्चों तथा सम्बन्धियों में उलझे रहना साहसी तथा विवेकी स्त्रियों का आदर्श नहीं है। संसार की प्रत्येक माता को आध्यात्मिक जीवन के सच्चे प्रकाश तथा वैभव के प्रति अपने को, अपनी सन्तति को, अपने परिवार तथा अपने पतिदेव को प्रबुद्ध करने के अपने उत्तरदायित्व को अनुभव करना चाहिए। मदालसा क्या ही यशस्विनी माता थी ! क्या उसने अपने बच्चों को स्नातकोत्तर परीक्षा तक अध्ययन करने और तदुपरान्त कोई काम ढूँढ़ने के लिए कहा था ? **शुद्धोऽसि, बुद्धोऽसि, निरञ्जनोऽसि, संसारमाया परिवर्जितोऽसि**—तुम शुद्ध हो, तुम चैतन्य हो, तुम निष्कल्मष हो, तुम संसार की माया से मुक्त हो।" ऐसी अद्वैत की शिक्षा मदालसा ने अपने बच्चों को पालने में झुलाते समय दी थी। वर्तमान जगत् की कितनी माताओं को अपने बच्चों को ऐसे गम्भीर ज्ञान की शिक्षा देने का सद्भाग्य प्राप्त है ! इसके विपरीत वर्तमान काल की माताएँ तो यदि उनके बच्चों में आध्यात्मिक प्रवृत्ति सूक्ष्म रूप में भी पायी गयी तो उसे कुचल देने का प्रयास करेंगी। यह क्या ही खेदपूर्ण तथा दयनीय अवस्था है ! माताओं तथा बहनों ! यह क्या ही खेदपूर्ण तथा दयनीय अवस्था है ! माताओं तथा बहनो ! जाग जायें। अपनी प्रगाढ़ निद्रा से जाग जायें। अपने उत्तरदायित्व को समझें। अपने को आध्यात्मिक बनायें। अपने बच्चों को आध्यात्मिक बनायें। अपने पतिदेव को भी आध्यात्मिक बनायें; क्योंकि आप परिवार की निर्माता हैं। स्मरण रखें कि चुड़ाला ने किस प्रकार अपने पतिदेव को प्रबुद्ध किया था। आप राष्ट्र-निर्माता हैं। आप संसार की

निर्माणकर्ता हैं। अतः अपना अध्यात्मीकरण करें। अपने में सुलभा, मैत्रेयी तथा गार्गी की भावना को अक्षुण्ण बनाये रखें। कायर न बनें। अपने मांसल घरों से, भ्रान्ति के घरों से, मिथ्याभिमान के घरों से बाहर आ जायें।

आप सब सच्ची संन्यासिनी बनें और सच्ची कीर्ति तथा महत्ता लायें; क्योंकि यही सच्ची निर्भीकता तथा साहस है, यही सच्चा ज्ञान तथा समझ है। यदि किसी महिला में आध्यात्मिक अग्नि नहीं है, यदि वह आत्ममय उच्चतर जीवन से अनभिज्ञ है तो वह महिला महिला नहीं है। स्त्री का कर्तव्य परिवार तक ही सीमित नहीं है, उसका कर्तव्य परिवार से परे जाना भी है। उसका कर्तव्य साड़ियों, चूड़ियों, जाकेट, पाउडर तथा इत्र में नहीं है और न उसका कर्तव्य अपने बच्चों को काम दिलाना ही है। उसके कर्तव्य का सम्बन्ध आत्मा से, ब्रह्म से भी है। ऐसी महिला भगवान् की सच्ची प्रतीक है। वह सम्मान्य है, वह पूज्य है।

१२

ब्रह्मचर्य तथा शिक्षा-पाठ्यक्रम

यदि आप वर्तमान शिक्षा-प्रणाली की हमारी प्राचीन गुरुकुल-प्रणाली से तुलना करें तो आपको इन दोनों में बड़ा अन्तर मिलेगा। पहली बात तो यह है कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली अत्यधिक व्ययपरक है। सम्प्रति शिक्षा के नैतिक पक्ष की पूर्णतया उपेक्षा की गयी है। गुरुकुल में प्रत्येक विद्यार्थी अकल्मष होता था। प्रत्येक विद्यार्थी पूर्ण नैतिक शिक्षा में दीक्षित होता था। यह प्राचीन संस्कृति की प्रमुख विशेषता थी। प्रत्येक छात्र को प्राणायाम, मन्त्रयोग, आसन, नीति-संहिता, गीता, रामायण, महाभारत तथा उपनिषदों का ज्ञान होता था। प्रत्येक छात्र विनम्रता, आत्मसंयम, आज्ञाकारिता, सेवा तथा आत्म-त्याग की भावना, सद्व्यवहार, शिष्टता, शालीनता तथा अन्तिम किन्तु उतनी ही महत्त्वपूर्ण आत्मज्ञानोपलब्धि की कामना से सम्पन्न होता था।

भारत की वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में एक प्राणघातक त्रुटि

वर्तमानकालीन महाविद्यालय के विद्यार्थियों में उपर्युक्त सद्गुणों का सर्वथा अभाव है। आत्मनियन्त्रण तो वे जानते ही नहीं। विलासमय जीवन तथा असंयम उनमें कौमारावस्था से ही आरम्भ हो जाते हैं। अहंकार, धृष्टता तथा आज्ञोल्लंघन उनमें बद्धमूल होते हैं। वे पक्के नास्तिक तथा अत्यधिक विषयी बन गये हैं।

बहुतों को तो अपने को आस्तिक कहने में लज्जा प्रतीत होती है। उनको ब्रह्मचर्य तथा आत्मनियन्त्रण का ज्ञान नहीं है। भूषाचारी वेश, अवांछनीय भोजन, कुसंग, नाट्यगृहों तथा चलचित्रगृहों में प्रायिक उपस्थिति तथा पाश्चत्य आचार-व्यवहार के प्रयोग ने उन्हें निर्बल तथा कामी बना दिया है। ब्रह्मविद्या, आत्मज्ञान, वैराग्य, मोक्ष-सम्पदा, आत्मिक शान्ति तथा आनन्द से वे सर्वथा अपरिचित हैं।

भूषाचार, बनाव-ठनाव, भोगवाद, स्वादुलोलुपता तथा विलासिता ने उनके मन पर अपना अधिकार कर लिया है। महाविद्यालयों के कुछ छात्रों का जीवन-वृत्त सुनने में अत्यन्त दयनीय है। प्राचीन गुरुकुल में छात्रगण स्वस्थ, हृष्ट-पुष्ट तथा दीर्घजीवी हुआ करते थे। वास्तव में ऐसा पता चलता है कि भारत-भर में छात्रों के स्वास्थ्य का ह्रास हुआ है। इसके अतिरिक्त जिन अवगुणों तथा असद् व्यवहारों से उनका स्वास्थ्य नष्ट हो रहा है, उनमें वृद्धि हो रही है। आधुनिक विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में नैतिक संस्कृति की शिक्षा नहीं दी जाती है। वर्तमान प्रणाली में शिक्षा के नैतिक पक्ष की पूर्ण उपेक्षा की गयी है।

आधुनिक सभ्यता ने हमारे बालक-बालिकाओं को अशक्त बना डाला है। वे कृत्रिम जीवन-यापन करते हैं। बच्चे ही बच्चे उत्पन्न कर रहे हैं। कुलाचार परिभ्रष्ट हो चला है। चलचित्र एक अभिशाप बन गया है। यह कामवासना तथा मनोविकार को उद्दीप्त करता है। आजकल चल-चित्रों में महाभारत तथा रामायण के आख्यानों का प्रदर्शन करते समय भी उनमें अभद्र दृश्य तथा अश्लील नाटकों का अभिनय किया जाता है। मैं एक बार पुनः बलपूर्वक दोहराता हूँ कि भारत की वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में पूर्ण तथा सशक्त सुधार की तत्काल आवश्यकता है।

शिक्षा की कोई भी प्रणाली जो ब्रह्मचर्य के सिद्धान्तों पर आधारित नहीं है तथा जिसके पाठ्यक्रम में संस्कृत-साहित्य का अध्ययन अनिवार्य नहीं है, हिन्दुओं के लिए उपयोगी न होगी। उसकी विफलता अवश्यम्भावी है। उन्हें उपयुक्त शिक्षा-पद्धति देने का जिन पर उत्तरदायित्व है, वे इस महत्त्वपूर्ण विषय से अनभिज्ञ हैं और यही कारण है कि शिक्षा में अनेक निष्फल प्रयोग हो रहे हैं।

कुछ महाविद्यालयों के प्राध्यापक भूषाचारी पहनावा पहनने के लिए छात्रों पर बल देते हैं। यही नहीं, वे स्वच्छ किन्तु सादे वस्त्र पहनने वालों का नापसन्द भी करते हैं। यह बड़े खेद की बात है। स्वच्छता एक वस्तु है, फैशन अन्य वस्तु। तथाकथित 'फैशन' सांसारिकता तथा विषयासक्ति में मूलबद्ध हो जाता है।

जीवन में स्वच्छता शारीरिक तथा आध्यात्मिक विकास के लिए परमावश्यक है। लड़के तथा लड़कियाँ अज्ञानतावश, शारीरिक अङ्गों के दुरुपयोग के कारण, जिससे जीवन शक्ति का निश्चित अपक्षय होता है, मौन रूप से कष्ट झेलते हैं। यह उनके सामान्य मानसिक तथा शारीरिक विकास में गतिरोध उत्पन्न करता है। जब मानव-शरीर अपने स्वाभाविक स्रावों से वंचित कर दिया जाता है तब स्नायविक ऊर्जा में भी तदनुरूप ह्रास अवश्य होता है। यही कारण है कि उन अंगों में कार्य-सम्बन्धी रोग विकसित होते हैं। विनष्ट व्यक्तियों की संख्या वृद्धि पर है।

नवयुवक रक्तक्षीणता, स्मरणशक्ति के ह्रास तथा दुर्बलता से पीड़ित होते हैं। उन्हें अपना अध्ययन बन्द कर देना पड़ता है। रोग बढ़ते जा रहे हैं। औषधालाओं में सहस्रों प्रकार के अन्तःक्षेप (इंजेक्शन) आ गये हैं। सहस्रों डाक्टरों ने अपनी-अपनी निदानशालाएँ तथा दुकानें खोल दी हैं। तथापि दुःख प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। लोगों को अपने उद्यमों तथा व्यवसायों में सफलता प्राप्त नहीं होती है। इसका क्या कारण है? कारण ढूँढ़ने के लिए दूर जाने की आवश्यकता नहीं है। यह दुर्व्यसनों तथा अमर्यादित मैथुन के द्वारा वीर्य की क्षति है। यह दूषित मन तथा दूषित शरीर के कारण ही है।

अध्यापकों तथा माता-पिताओं के कर्तव्य

छात्रों को सदाचार के पथ का प्रशिक्षण देने तथा उनके चरित्र का समुचित रूप से निर्माण करने के महान् कर्तव्य का दुर्वह भार विद्यालयों तथा महाविद्यालयों के अध्यापकों पर है। ब्रह्मचर्य में चरित्र-निर्माण अथवा चरित्र का सम्यक् गठन अन्तर्विष्ट है। लोग कहते हैं कि ज्ञान शक्ति है, किन्तु मैं अपने व्यावहारिक अनुभव से पूर्ण विश्वास के साथ यह बेखटके बलपूर्वक कहता हूँ कि चरित्र शक्ति है तथा चरित्र ज्ञान से भी अधिक श्रेष्ठ है।

आपमें से प्रत्येक व्यक्ति को अपने चरित्र का सम्यक निर्माण करने के लिए यथाशक्य प्रयास करना चाहिए। आपका समग्र जीवन तथा जीवन में आपकी सफलता आपके चरित्र-गठन पर ही पूर्णतया निर्भर है। इस संसार के सभी महापुरुषों ने अपनी महत्ता एकमात्र चरित्र के द्वारा ही प्राप्त की है। संसार के वैभवशाली महामनीषियों ने यश, प्रतिष्ठा तथा सम्मान की विजयश्री चरित्र के द्वारा उपलब्ध की है।

अध्यापकों को स्वयं पूर्ण नैतिक तथा शुद्ध होना चाहिए। उन्हें नैतिक पूर्णता

से सम्पन्न होना चाहिए अन्यथा '**अन्धेनैवं नीयमाना यथान्धाः**' की उक्ति चरितार्थ होगी। प्रत्येक अध्यापक को अध्यापन-व्यवसाय अपनाने से पूर्व शिक्षा-क्षेत्र में अपने पद के महान् उत्तरदायित्व को अनुभव करना चाहिए। शुष्क भाषण देने की कला में बौद्धिक उपलब्धि ही पर्याप्त नहीं होगी। एकमात्र यह एक ही कला प्राध्यापक को सुशोभित नहीं करेगी।

जब छात्र प्रौढ़ावस्था को प्राप्त होते हैं तब उनके स्थूल शरीर में कुछ विकास तथा परिवर्तन होने लगते हैं। वाणी बदल जाती है। नये आवेग तथा भाव प्रकट होने लगते हैं। स्वभावतः उनमें जिज्ञासा उठती है। वे गलियों में फिरने वाले लड़कों से परामर्श लेते हैं। उन्हें कुमन्त्रणा मिलती है। वे अपनी दुर्वृत्तियों के द्वारा अपना स्वास्थ्य नष्ट कर डालते हैं। उन्हें यौन-स्वास्थ्य, आरोग्य-शास्त्र तथा ब्रह्मचर्य, दीर्घायु-प्राप्ति के उपाय तथा कामवासना के नियन्त्रण की विधि का स्पष्ट ज्ञान प्रदान करना चाहिए। माता-पिता को चाहिए कि वे अपना बच्चों को महाभारत तथा रामायण से ब्रह्मचर्य तथा सदाचार-सम्बन्धी विविध कहानियाँ सुनायें।

माता-पिता को चाहिए कि वे अपने बच्चों को ब्रह्मचर्य-विषय की शिक्षा बहुधा देते रहें। यह उनका अत्यावश्यक कर्तव्य है। जब बालकों तथा बालिकाओं में तारुण्य के लक्षण दृष्टिगोचर हों तो उनके साथ स्पष्ट बात करना परमावश्यक है। इधर-उधर की बातें करने से कोई लाभ नहीं है। यौन-सम्बन्धी विषयों को गुप्त नहीं रखना चाहिए। यदि माता-पिता अपने बच्चों से इस विषय की वार्ता करने में संकोच अनुभव करते हैं तो यह उनकी अयथार्थ शालीनता होगी। इस विषय में चुप्पी साधने से किशोरों का कुतूहल उद्दीप्त ही होगा। यदि वे इन सब बातों को समय पर स्पष्ट रूप से जान जाते हैं तो वे निश्चय ही कुसंग से अपथगामी नहीं बनेंगे और न उनमें दुर्व्यसनों का विकास होगा।

आध्यापकों तथा माता-पिताओं को बालक तथा बालिकाओं को समुचित शिक्षा देनी चाहिए कि वे किस प्रकार ब्रह्मचर्यमय शुद्ध जीवन यापन करें। उन्हें शालीनता तथा संकोच के अपने मिथ्या भाव से अपना पीछा छुड़ाना चाहिए। वे ही बालक तथा बालिकाओं की अज्ञानता के लिए बहुत-कुछ उत्तरदायी हैं। किसी अन्य बात की अपेक्षा इन विषयों की अज्ञानता के कारण अधिक क्षति हुई है। आप अज्ञानता का, इस मिथ्या शालीनता का कि लिङ्ग तथा लैङ्गिक कार्य-व्यापार की परिचर्चा नहीं करनी चाहिए, मूल्य चुका रहे हैं। अध्यापकों तथा

माता-पिताओं को किशोरों के आचार-व्यवहार का सतत अवलोकन करना तथा उनके मन में ब्रह्मचर्य के पवित्र जीवन के परम महत्त्व को तथा अपवित्र जीवन के संकटों को बैठा देना चाहिए। उनमें ब्रह्मचर्य-विषय की पुस्तिकाएँ मुक्त रूप में वितरित करनी चाहिए।

विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में चित्रदर्शी द्वारा ब्रह्मचर्य-विषय, प्राचीनकाल के ब्रह्मचारियों के जीवन तथा महाभारत और रामायण की कहानियों का नियमित रूप से प्रदर्शन करना चाहिए। इससे विद्यार्थियों के नैतिक मापदण्ड को उन्नत बनाने तथा इसके लिए उन्हें उत्प्रेरित करने में बड़ी सहायता मिलेगी।

हे शिक्षकों तथा प्राध्यपको! अब जग जाइए। विद्यार्थियों को ब्रह्मचर्य, सदाचार तथा नैतिकता के पथ का प्रशिक्षण दीजिए। उन्हें सच्चे ब्रह्मचारी बनाइए। इस दिव्य कार्य की उपेक्षा न कीजिए। यह गुरुतर कार्य आपका नैतिक उत्तरदायित्व है। यह आपका योग है। यदि आप इस कार्य को यथोचित गम्भीरतापूर्वक करें तो इससे आपको आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हो सकता है। निष्ठावान् तथा निष्कपट रहें। अब अपने नेत्र खोलें। बालकों तथा बालिकाओं को ब्रह्मचर्य का महत्त्व समझाइए तथा उन विविध विधियों का प्रशिक्षण दीजिए जिनसे वे वीर्य का, अपने में प्रच्छन्न आत्मशक्ति का परिरक्षण कर सकें।

जिन अध्यापकों ने प्रथम अपने-आपको अनुशासित कर लिया है, उन्हें चाहिए कि वे अपने विद्यार्थियों के साथ एकान्तिक वार्ता करें तथा उन्हें ब्रह्मचर्य के विषय में नियमित रूप से व्यावहारिक शिक्षाएँ प्रदान करें। श्रद्धेय एच॰ पी॰ पैकेन्हैम वाल्श, जो कुछ दशकों पूर्व एस॰ पी॰ जी॰ महाविद्यालय, त्रिचिनापल्ली के प्रधानाचार्य थे और बाद में एक धर्माचार्य (बिशप) बने, अपने विद्यार्थियों के साथ ब्रह्मचर्य तथा आत्मसंयम-विषय पर नियमित चर्चा किया करते थे।

संसार का भावी भाग्य अध्यापकों तथा विद्यार्थियों पर पूर्णतया निर्भर है। यदि अध्यापक अपने विद्यार्थियों को उचित दिशा में, धर्मपरायणता के पथ की शिक्षा दें तो संसार आदर्श नागरिकों, योगियों तथा जीवन्मुक्तों से परिपूर्ण हो जायेगा जो सर्वत्र प्रकाश, शान्ति, आनन्द तथा सुख का प्रसार करेंगे।

धन्य है वह जो अपने छात्रों को सच्चा ब्रह्मचारी बनाने के लिए वास्तव में प्रयास करता है और उससे अधिक धन्य है वह जो सच्चा ब्रह्मचारी बनने का प्रयास करता है। उन सब पर भगवान् कृष्ण का आशीर्वाद हो! अध्यापकों, प्राध्यापकों तथा छात्रों की जय हो!

१३

कुछ आदर्श ब्रह्मचारी

हनुमान्

हनुमान् वायुदेवता पवन से अञ्जना के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। उनका हनुमान् नाम हनुरुह नामक नगर पर रखा गया था जिस पर उनके मामा शासन करते थे। हनुमान् का शरीर वज्रवत् दृढ़ था; अतः अंजना ने उनका नाम वज्रांग रखा। अनेक वीरोचित असाधारण कार्य करने के कारण वह महावीर के नाम से भी प्रसिद्ध हुए। बलभीम तथा मारुति उनके अन्य नाम हैं।

विश्व में हनुमान् के समान महान् वीर न अभी तक हुआ है और न भविष्य में होगा। अपने जीवन-काल में उन्होंने अनेक चमत्कार तथा बल और पराक्रम के अतिमानवीय असाधारण कार्य किये। उन्होंने अपने पीछे ऐसा नाम छोड़ा है जो जब तक इस संसार का अस्तित्व रहेगा तब तक लाखों के मन पर अपना सशक्त प्रभावख डालता रहेगा।

हनुमान् सप्त-चिरंजीवियों में से एक हैं। वह एकमात्र ऐसे विलक्षण विद्वान् हैं जिन्हें नौ व्याकरणों का ज्ञान है। उन्होंने सूर्यदेव से शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त किया। वह ब्रह्मचर्य के मूर्तरूप हैं। वह ज्ञानियों में सर्वश्रेष्ठ ज्ञानी, बलवानों में सर्वश्रेष्ठ बली तथा वीरों में सर्वश्रेष्ठ वीर हैं। वह रुद्र की शक्ति हैं। जो हनुमान् का ध्यान तथा उनके नाम का जप करता है उसे जीवन में बल, सामर्थ्य, गौरव, वैभव तथा सफलता प्राप्त होती है। वह भारत के सभी भागों में, विशेष कर महाराष्ट्र में पूजे जाते हैं।

हनुमान् में स्वेच्छानुसार रूप धारण करने की सिद्धि थी। वह अपने शरीर को अति-बृहत् और अँगूठे के नख के बराबर लघु बना सकते थे। उनमें अलौकिक बल था। वह राक्षसों के लिए आतंक थे। वह चारों वेदों तथा अन्य शास्त्रों में सुनिष्णात थे। उनके सम्पर्क में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति उनके पराक्रम, बुद्धि, शास्त्रज्ञान तथा अतिमानवीय बल से आकर्षित हो जाता था। उनमें असाधारण युद्ध-कौशल था।

हनुमान् श्रीराम के प्रवर दूत, सैनिक तथा सेवक थे। वह भगवान् राम के उपासक तथा भक्त थे। राम उनके लिए जीवन-सर्वस्व थे। वह राम की सेवा के

लिए जीते थे, राम में जीते थे तथा राम के लिए जीते थे। वह सुग्रीव के मन्त्री तथा घनिष्ठ मित्र थे।

हनुमान् का जन्म परम मांगलिक दिवस मंगलवार को चान्द्रमास चैत्र की अष्टमी को प्रातःकाल हुआ था। उन्होंने अपने जन्म से ही अपने असाधारण बल का परिचय दिया तथा अनेक चमत्कार किये। वे अपनी शैशवावस्था में सूर्य को खा जाने के लिए छलाँग लगा कर उन तक पहुँच गये और उन्हें पकड़ लिया। इससे समस्त देवता अत्यधिक व्याकुल हुए। वे कर-बद्ध हो शिशु के पास आये। उन्होंने सूर्य को मुक्त कर देने के लिए उनसे विनीत प्रार्थना की। शिशु ने उनकी प्रार्थना पर सूर्य को छोड़ दिया।

हनुमान् के एक अपराध के लिए एक ऋषि ने उन्हें शाप दिया कि वह जब तक श्रीराम के दर्शन तथा भक्तिपूर्वक उनकी सेवा नहीं करेंगे तब तक उन्हें अपनी महती शक्ति तथा पराक्रम की स्मृति नहीं रहेगी। हनुमान् की श्रीराम के साथ प्रथम भेंट किष्किन्धा में हुई जब श्रीराम तथा लक्ष्मण सीता की खोज में वहाँ आये थे जिन्हें रावण हर कर ले गया था। हनुमान् ने ज्यों-ही श्रीराम को देखा, उन्हें अपनी शक्ति तथा पराक्रम का स्मरण हो आया।

हनुमान् ने सम्पूर्ण लंका जला डाली तथा राम को सीता का समाचार दिया। राम तथा रावण के मध्य हुए महायुद्ध में हनुमान् ने राक्षस-सेना के अनेक वीरों का संहार किया। उन्होंने अनेक अलौकिक कार्य किये। विशाल पर्वत को उठा कर ले जाना तथा अन्य बड़े-बड़े कार्यों का करना हनुमान् के लिए कुछ भी नहीं था। यह सब ब्रह्मचर्य-शक्ति के कारण ही था।

महायुद्ध समाप्त होने पर विभीषण लंका के राजसिंहासन पर प्रतिष्ठित हुए। वनवास की अवधि पूर्ण हो गयी। श्रीराम, लक्ष्मण, सीता तथा हनुमान् पुष्पक विमान पर बैठ कर समय पर अयोध्या पहुँच गये। श्रीराम का राज्याभिषेक-समारोह बड़े हर्षोल्लास तथा धूमधाम से किया गया। सीता ने हनुमान् को एक मुक्ताहार भेंट किया।

महाभाग राम-भक्त हनुमान् की जय हो ! महावीर, निर्भीक योद्धा तथा ज्ञानवान् ब्रह्मचारी आञ्जनेय की जय हो, जय हो जिनके समान संसार में अभी तक न कोई हुआ है और न भविष्य में कोई होगा !

हम सब उनके आदर्श ब्रह्मचर्यमय जीवन से प्रेरणा प्राप्त करें ! आप सबको उनका आशीर्वाद प्राप्त हो ! आइए, हम उनकी महिमा का गान करें :

जय सियाराम जय जय सियाराम
जय हनुमान् जय जय हनुमान्।
जय सियाराम जय जय सियाराम
जय हनुमान् जय जय हनुमान्॥

श्री लक्ष्मण

लक्ष्मण दशरथ की द्वितीय रानी सुमित्रा के पुत्र तथा श्रीराम के अनुज थे। वह आदिशेष के अवतार थे। वह राम के सुख-दुःख में निरन्तर साथी थे। राम और लक्ष्मण एक-साथ रहते, खाते-पीते, खेलते तथा पढ़ते थे। उनमें से कोई भी एक-दूसरे का वियोग सहन नहीं कर सकता था। लक्ष्मण श्रीराम के प्रिय सेवक भी थे। वह राम की आज्ञाओं का अक्षरशः पालन करते थे। वह पूर्ण रूप से राम की आज्ञा में रहते थे।

लक्ष्मण में शुद्ध तथा निष्कलंक भ्रातृप्रेम था। उनके जीवन का उद्देश्य अपने अग्रज भ्राता की सेवा करना था। अपने भाई की आज्ञाओं का पालन उनके जीवन का आदर्श-वाक्य था। वह राम की अनुमति प्राप्त किये बिना कुछ भी नहीं करते थे। वह श्रीराम को अपना ईश्वर, गुरु, पिता तथा माता मानते थे।

वह हृदय से बिलकुल निःस्वार्थ थे। उन्होंने केवल अपने भाई की संगति के लिए स्वेच्छा से राजसी जीवन की सभी सुख-सुविधाएँ त्याग दीं। वह सभी सम्भाव्य उपायों से राम का हित-साधन करते थे। उन्होंने राम के हित को अपना हित बना लिया था। उन्होंने भ्रातृप्रेम की वेदी पर अपने प्रत्येक विचार का बलिदान कर दिया। श्रीराम उनके जीवन-सर्वस्व थे। वह राम के लिए किसी भी वस्तु का, यहाँ तक कि अपने जीवन का परित्याग कर सकते थे। उन्होंने श्रीराम तथा सीता के वनवास-काल में उनका अनुगमन करने के लिए क्षणमात्र में अपनी माता, पत्नी तथा राजसी सुख-सुविधाओं को त्याग दिया। क्या ही उदारचेता आत्मा थी ! कितने महान् त्यागी थे वह ! यह अपने भ्राता की सेवा मात्र के लिए जीवन-यापन करने वाली निस्पृह, उदारधी तथा भक्त आत्मा का समस्त विश्व-इतिहास में अभूतपूर्व उदाहरण है। इसी कारण से रामायण के पाठकगण लक्ष्मण की उनके पवित्र तथा अद्वितीय भ्रातृप्रेम के लिए प्रशंसा करते हैं। कुछ लोग भरत की प्रशंसा करते हैं तो अन्य लोग हनुमान् की सराहना करते हैं; किन्तु लक्ष्मण किसी रूप में भरत अथवा हनुमान् से हीन नहीं थे।

यद्यपि लक्ष्मण वन के संकटों से भलीभाँति अवगत थे; तथापि उन्होंने चौदह वर्ष की दीर्घावधि तक श्रीराम का अनुसरण किया। यद्यपि विश्वामित्र को उनकी सहायता की आवश्यकता नहीं थी, तथापि वह धनुष-बाण ले कर राम के साथ गये। यह सब-कुछ उन्होंने अपने भ्राता श्रीराम के प्रति अपनी निष्ठा तथा प्रेम के कारण किया।

श्रीराम भी लक्ष्मण के प्रति प्रगाढ़ प्रेम रखते थे। जब लक्ष्मण मेघनाद के सांघातिक बाण से आहत हो मूर्च्छित हो कर गिर पड़े तो राम का हृदय विदीर्ण हो गया। वह विलाप करने लगे। उन्होंने निश्चय किया कि अपने प्रिय भाई को खो कर वह अयोध्या वापस नहीं लौटेंगे। उन्होंने कहा—"भले ही सीता जैसी धर्मपत्नी मिल जाये, किन्तु लक्ष्मण की भाँति सच्चा, निष्ठावान् भाई अलभ्य है। अपने भाई के बिना यह संसार मेरे लिए असार है।"

लक्ष्मण मन, वाणी तथा कर्म से पवित्र थे। उन्होंने वनवास की चौदह वर्ष की अवधि में आदर्श ब्रह्मचारी का जीवन यापन किया। उन्होंने सीता के मुख अथवा शरीर पर कभी दृष्टिपात नहीं किया। उनके नेत्र सीता जी के चरण-कमलों की ओर ही केन्द्रित रहते थे। जब सुग्रीव सीता के उन उत्तरीय वस्त्रों तथा आभूषणों को लाये जिन्हें सीता ने अपहरण के समय बन्दरों को पर्वत पर बैठे देखकर ऊपर से गिरा दिया था तब राम ने उन्हें लक्ष्मण को दिखाया और पूछा कि क्या वह उन्हें पहचानते है ?लक्ष्मण ने कहा :

"नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले।
नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्॥
(किष्किन्धाकाण्ड, षष्ठ सर्ग, २२)

—मैं न तो केयूर को पहचानता हूँ और न कुण्डल को ही। मैं तो नूपुरों को ही पहचानता हूँ; क्योंकि मैं नित्य ही उनकी चरण-वन्दना करता था।" देखिए, लक्ष्मण सीता को कैसे माता अथवा देवी के रूप में पूज्य मानते थे।

रावण के पुत्र मेघनाद ने देवराज इन्द्र पर भी विजय प्राप्त कर ली थी। इस विजय के कारण मेघानाद इन्द्रजित के नाम से भी ज्ञात था। उसे एक वरदान प्राप्त था कि जो व्यक्ति कम-से-कम पूरे चौदह वर्ष सभी प्रकार के विषयोपभोग से अलग रहा हो, उसके अतिरिक्त अन्य सभी के लिए अपराजेय रहेगा। वह अविजेय था। किन्तु लक्ष्मण ने अपने ब्रह्मचर्य-बल से उसका संहार किया।

हे लक्ष्मण! हम सदा ही आपकी महिमा का गान करते हुए मुहुर्मुहुः कहेंगे : **"राम लक्ष्मण जानकी, जय बोलो हनुमान् की।"** आप हमारे प्रिय भगवान् राम से, अपने प्रिय भ्राता तथा स्वामी से हमारा भी परिचय करा दीजिए। भगवान् राम के साथ वार्तालाप करने में हमारी भी सहायता कीजिए। हे लक्ष्मण! अज्ञानान्धकार में भटक रहे इन नये साधकों पर सदा दयालु बने रहिए। हमें सफलता का रहस्य बतलाइए तथा आजीवन निष्ठावान् ब्रह्मचारी बने रहने में हमारी सहायता कीजिए। हे सुमित्रा-वत्स तथा श्रीराम की आँखों के तारे लक्ष्मण! मैं पुनः आपकी वन्दना करता हूँ।

भीष्म

भीष्म के पिता शान्तनु थे जो हस्तिनापुर के राजा थे। उनकी माता गंगा देवी थीं। उनका पूर्व-नाम देवव्रत था। वह वसुदेवता के अवतार थे।

एक दिन शान्तनु यमुना नदी के तट के निकटवर्ती एक वन में आखेट के लिए गये। वहाँ उनकी भेंट एक रूपवती कुमारी से हुई। उन्होंने उससे पूछा—"तुम कौन हो? तुम यहाँ क्या कर रही हो?" उसने उत्तर दिया—"मैं निषादराद दाशराज की पुत्री हूँ। मेरा नाम सत्यवती है। मैं उनकी आज्ञा से यहाँ यात्रियों को नदी पार कराने के लिए नौका चलाती हूँ।"

महाराज शान्तनु उससे विवाह करना चाहते थे। दाशराज के पास जा कर उन्होंने उसकी अनुमति माँगी। निषादराज ने कहा—"मैं आपके साथ अपनी पुत्री का विवाह करने को सहर्ष तैयार हूँ; किन्तु विवाह से पूर्व आपको एक वचन देना होगा।"

राजा ने पूछा—"दाशराज! वह क्या है? मेरे अधिकार में जो है उसे मैं अवश्य पूरा करूँगा।" निषादराज ने कहा—"मेरी पुत्री के गर्भ से उत्पन्न पुत्र आपका उत्तराधिकारी बने।"

शान्तनु निषादराज को यह वचन नहीं देना चाहते थे; क्योंकि इससे उनके शूरवीर तथा बुद्धिमान् पुत्र देवव्रत को, जिससे उन्हें अत्यधिक प्रेम था, राजसिंहासन का परित्याग करना पड़ता। तब वह युवराज नहीं रह सकते। किन्तु वह उस कन्या के लिए कामाग्नि से विदग्ध हो रहे थे'। वह बड़े धर्मसंकट में थे। वह पीले पड़ गये और राजकाज में उनकी रुचि न रही। उन्होंने अपने विश्वासपात्र मुख्य आमात्य से अपने हृदय की बात खोल दी; किन्तु वह इस

विषय में कुछ मन्त्रणा न दे सका। शान्तनु अपने पुत्र देवव्रत से उस कन्या के प्रति अपने प्रेम को गुप्त रखने का प्रयास करते रहे।

देवव्रत धीमान् तथा बहुत बलवान् थे। उन्हें कुछ सन्देह हुआ। उन्होंने सोचा कि उनके पिता दुःखी हैं। उन्होंने अपने पिता से कहा—"परम प्रिय पिता जी! आप सम्पन्न हैं। आपको सब-कुछ प्राप्त है। आपको चिन्ता करने का कोई कारण नहीं है। आप अब उदास क्यों हैं? आप अपना ओज तथा बल खो रहे हैं। आप कृपया अपनी व्यथा का कारण बतलाइए। मैं उसे यथाशक्ति दूर करने को सदा तैयार हूँ।"

राजा ने उत्तर दिया—"वत्स देवव्रत! तुम मेरे इकलौते पुत्र हो। यदि तुम पर कोई विपत्ति आयी तो मैं पुत्रहीन हो जाऊँगा। मैं स्वर्ग से वंचित रह जाऊँगा। तुम सौ पुत्रों के तुल्य है। इसी से मैं पुनः विवाह नहीं करना चाहता। किन्तु ऋषियों के कथनानुसार एक पुत्र सन्तानहीनता के ही तुल्य है। ये ही विचार मेरे मन को चिन्ताग्रस्त बनाये रखते हैं।"

तदनन्तर देवव्रत वृद्ध मन्त्री तथा कई सम्मान्य क्षत्रिय सामन्तों के साथ दासराज के पास गये तथा अपने पिता की ओर से उससे प्रार्थना की और अपने पिता के लिए उसकी कन्या विवाह में माँगी।

निषादराज ने उत्तर दिया—"हे सौम्य राजकुमार! मैंने पहले ही आपके पिता को उस शर्त के विषय में बतला दिया है जिस पर मैं अपनी कन्या को उन्हें विवाह में दे सकता हूँ।"

देवव्रत ने कहा—"निषादराज! मैं अब यह सच्ची प्रतीज्ञा करता हूँ कि इस कन्या के गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा, वही मेरे पिता के राजसिंहासन का उत्तराधिकारी होगा। तुम जो-कुछ चाहते हो मैं वैसा ही करूँगा।"

निषादराज ने कहा—"मैं आपके भद्र चरित्र तथा उच्च आदर्श की बहुत कदर करता हूँ; किन्तु मेरे मन में एक बड़ा भारी संशय यह है कि आपके पुत्र मेरी पुत्री के लड़के को अपने इच्छानुसार किसी भी समय निष्कासित कर सकते हैं।"

देवव्रत ने प्रार्थना की—"हे सत्य! मुझमें सदा निवास कीजिए। आइए और मेरी सम्पूर्ण सत्ता में व्याप्त हो जाइए। मैं अभी इन लोगों की उपस्थिति में जो अखण्ड ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा करने जा रहा हूँ, उसमें अडिग बने रहने की अन्तःशक्ति प्रदान कीजिए।" तत्पश्चात् उन्होंने दृढ़ निश्चय के साथ निषादराज से

कहा—"हे दाशराज! मेरी यह बात ध्यानपूर्वक सुनो! आज से मैं आजीवन पूर्ण नैष्ठिक ब्रह्मचर्य-जीवन यापन करूँगा। संसार की सभी स्त्रियाँ मेरी माताएँ हैं। मैं हस्तिनापुर के राजा की परम समर्पित राजभक्त प्रजा हूँ। पुत्रहीन के रूप में मरने पर भी मुझे शाश्वत आनन्द तथा परम अमरत्व का धाम प्राप्त होगा।"

उस समय अन्तरिक्ष से अप्सराओं, देवताओं तथा ऋषियों ने उन पर पुष्प-वृष्टि की और बोल उठे—"ये भयंकर प्रतिज्ञा करने वाले राजकुमार भीष्म हैं।"

निषादराज ने कहा—"राजकुमार! मैं अब अपनी कन्या आपके पिता को विवाह में देने को पूर्णतया तैयार हूँ।"

तत्पश्चात् निषादराज तथा उसकी पुत्री देवव्रत के साथ शान्तनु के राजमहल में गये। वृद्ध मन्त्री ने राजा को सब घटना कह सुनायी। वहाँ सभा-भवन में एकत्रित सभी राजाओं ने देवव्रत के असाधारण आत्मबलिदान तथा आत्म-त्याग की भावना की बड़ी प्रशंसा की। उन्होंने कहा—"देवव्रत वास्तव में भीष्म हैं।" तब से देवव्रत का नाम भीष्म पड़ गया। राजा शान्तनु अपने पुत्र के प्रशस्त व्यवहार से अत्यधिक प्रसन्न हुए तथा उन्हें स्वेच्छा-मृत्यु का वरदान दिया। उन्होंने कहा—"देवगण तुम्हारी रक्षा करें! जब तक तुम जीवित रहना चाहोगे तब तक मृत्यु तुम्हारे निकट नहीं आ सकती।"

क्या ही उन्नत आत्मा! यह उदात्त उदाहरण विश्व-इतिहास में अभूतपूर्व है। इस भूतल पर भीष्म के अतिरिक्त अन्य किसी ने भी ऐसी कुमारावस्था में पुत्रोचित कर्तव्य के लिए इतना महान् आत्मत्याग नहीं किया है। भीष्म के पुत्रोचित कर्तव्य तथा धर्मपरायणता की तुलना भगवान् राम के पुत्रोचित कर्तव्य तथा धर्मपरायणता से भली-भाँति की जा सकती है।

भीष्म अपने सिद्धान्तों में बहुत ही अडिग थे। उनमें स्वार्थपरता का अल्पतम पुट न था। वह आत्मत्याग तथा आत्मबलिदान के मूर्तरूप थे। उन्हें जिन कठोर विपत्तियों का सामना करना पड़ा उन सबमें उनकी सहिष्णुता तथा उनका धैर्य आश्चर्यकर तथा अभूतपूर्व था। वह शौर्य तथा साहस में अद्वितीय थे। सभी लोग उनका सम्मान करते थे। सभी क्षत्रिय सामन्त उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते थे। वह एक महान् योगी तथा ऋषि थे। वह शरीर-चेतना से ऊपर उठे हुए थे। वह अपने सच्चिदान्द-स्वरूप में अवस्थित थे। यही कारण था कि शरीर-भर में तीक्ष्ण बाँणों से विद्ध होने पर भी वह शान्त तथा अनुद्विग्न बने रहे। तीक्ष्ण शर-शय्या पर जो उनके लिए पुष्प-शय्या के समान ही कोमल थी, लेटे हुए

उन्होंने युधिष्ठिर को राजनीति, दार्शनिक, धार्मिक, सामाजिक तथा नैतिक विषयों का उत्कृष्ट उपदेश दिया। क्या आपने कभी विश्व-इतिहास में भीष्म के अतिरिक्त किसी ऐसे व्यक्ति का नाम सुना है जो अपनी मृत्यु-शय्या से गम्भीर तथा उदात्त उपदेश दे सका हो? भीष्म ने अपना जीवन परार्थ उत्सर्ग कर दिया। वह दूसरों की सेवा करने तथा उन्हें उन्नत बनाने के लिए जीवित रहे। परम संकल्प-शक्ति वाले उन्नतात्मा भीष्म का उदात्त जीवन शान्तिपर्व में उनके उपदेशों का पाठ करने वाले हृदयों में अब भी उत्कृष्ट गुणों की प्रेरणा भरता है। भीष्म की मृत्यु हुए बहुत समय व्यतीत हो चुका; किन्तु शान्तिपर्व में उनकी वाणी तथा उनका आदर्श और उन्नत जीवन प्रगाढ़ निद्रा में पड़े हुए लोगों को कर्म, धर्मपरायणता, कर्तव्य तथा विचारणा, कठोर तप तथा ध्यान के प्रति आज भी उद्वेलित करता है।

भीष्म की जय हो जिनका अनुकरणीय ब्रह्मचर्यमय जीवन आज भी हमारे हृदयों में प्रेरणा प्रदान करता है तथा हमारे मन को दिव्य महिमा तथा वैभव के उत्तुंग शिखर तक उन्नत बनाता है!

तृतीय खण्ड

काम के उदात्तीकरण की प्रविधि

१४

दमन तथा उदात्तीकरण

ब्रह्मचर्य के अभ्यास में आवश्यकता है काम के निरोध की, न कि उसके दमन की। कामावेग का दमन उसका उन्मूलन नहीं है। जिस चीज का दमन किया जाता है, उससे आप कभी भी मुक्त नहीं हो सकते हैं। दमित कामवासना आपको बार-बार आक्रान्त करेगी तथा स्वप्नदोष, चिड़चिड़ापन तथा मानसिक अशान्ति उत्पन्न करेगी।

कामवासना का दमन आपके लिए अधिक सहायक नहीं होगा। यदि कामवासना का दमन किया गया तो जब उपयुक्त अवसर आता है, जब सङ्कल्प-बल दुर्बल हो जाता है, जब वैराग्य क्षीण पड़ जाता है, जब ध्यान अथवा योग-साधना में शिथिलता आ जाती है अथवा जब आप रोगाक्रान्त होने के कारण अशक्त हो जाते हैं, वह द्विगुणी शक्ति से पुनः प्रकट होती है।

स्त्रियों से दूर भागने का प्रयास न कीजिए। तब माया बुरी तरह आपके पीछे पड़ जायेगी। सभी रूपों में आत्मा के दर्शन करने का प्रयास कीजिए तथा इस सूत्र को प्रायः दोहराए: **"ॐ एक सत्-चित्-आनन्द आत्मा।"** स्मरण रखें कि आत्मा अलिङ्ग है। इस सूत्र का मानसिक जप आपको मनोबल प्रदान करेगा।

अज्ञानी जन इन्द्रियों को मारने के लिए मूर्खतापूर्ण विधि अपनाते हैं और अन्ततः वे असफल रहते हैं। अनेक नासमझ साधक जननाङ्ग को काट डालते हैं। वे समझते हैं कि इस कार्यविधि से कामुकता का पूर्णतः उन्मूलन किया जा सकता है। यह क्या ही महान् मूर्खतापूर्ण कार्य है! कामुकता मन में है। यदि मन वशीभूत है तो यह बाह्य मांसल इन्द्रिय क्या कर सकती है? कुछ लोग इस इन्द्रिय को मारने के लिए टनों कुचला खा जाते हैं। वे ब्रह्मचर्य में केन्द्रस्थ होने

के अपने प्रयासों में असफल रहते हैं। यद्यपि कुचले के सेवन से वे नपुंसक बन जाते हैं; पर उनके मन की स्थिति वैसी ही रहती है।

इस विषय में आवश्यकता है इन्द्रियों के विवेकपूर्ण नियन्त्रण की। इन्द्रियों को वैषयिक नाली में अनियन्त्रित नहीं होने देना चाहिए। उपद्रवी घोड़ा जिस प्रकार अपने सवार को इच्छानुसार कहीं भी ले जाता है वैसे ही इन्द्रियों को हमें सांसारिकता के गम्भीर गर्त में निष्ठुरतापूर्वक धकेलने की छूट नहीं देनी चाहिए।

ब्रह्मचर्य का अर्थ है कामवासना अथवा काम-शक्ति का नियन्त्रण, किन्तु उसका दमन नहीं। मन को ध्यान, जप, कीर्तन तथा प्रार्थना के द्वारा शुद्ध बनाना चाहिए। यदि मन को ध्यान, जप, प्रार्थना तथा धर्मग्रन्थों के स्वाध्याय के द्वारा उत्कृष्ट दिव्य विचारों से आपूरित कर दिया जाता है तो मन के प्रत्याहार से कामवासना ओजहीन अथवा शक्तिहीन हो जायेगी। मन भी क्षीण हो जायेगा।

काम-शक्ति से ओज-शक्ति

जप, प्रार्थना, ध्यान, धर्मग्रन्थों के स्वांध्याय, प्राणायाम तथा आसनों के अभ्यास से काम-शक्ति को ओज-शक्ति में रूपान्तरित करना चाहिए। आपको भक्ति तथा प्रबल मुमुक्षुत्व विकसित करना चाहिए। आपको शुद्ध, अमर, अलिङ्ग निराकार, निष्काम आत्मा का सतत ध्यान करना चाहिए। तभी आपकी कामवासना विनष्ट होगी।

यदि शुद्ध विचारों द्वारा काम-शक्ति को ओज-शक्ति में रूपान्तरित कर दिया जाता है तो पाश्चात्य मनोविज्ञान में इसे काम का उदात्तीकरण कहते हैं। उदात्तीकरण दमन का विषय नहीं है, वरन् एक विध्यात्मक, गत्यात्मक रूपान्तरण की प्रक्रिया है। यह काम-शक्ति के नियन्त्रण, उसके संरक्षण, तत्पश्चात् उसे मोड़ कर उच्चतर प्रणालिकाओं में ले जाने और अन्ततः उसे ओज-शक्ति में परिवर्तित करने की प्रक्रिया है। भौतिक-शक्ति आध्यात्मिक-शक्ति में परिवर्तित की जाती है, जैसे ऊष्मा प्रकाश तथा विद्युत्-शक्ति में परिवर्तित की जाती है। जिस प्रकार रासायनिक पदार्थ को ताप द्वारा वाष्प में परिणत कर शुद्ध कर दिया जाता है जो पुनः घनीभूत हो जाता है उसी प्रकार आध्यात्मिक साधना द्वारा काम-शक्ति को भी परिष्कृत कर दिव्य शक्ति में परिवर्तित किया जाता है।

ओज आध्यात्मिक शक्ति है जो मस्तिष्क में सञ्चित रहती है। आत्मा-सम्बन्धी उदात्त, अन्तःकरण उन्नयनकारी विचारों को प्रश्रय द्वारा, ध्यान, जप, उपासना तथा

प्राणायाम द्वारा काम-शक्ति ओज-शक्ति में रूपान्तरित तथा मस्तिष्क में सञ्चित की जा सकती है। तब इस सञ्चित शक्ति का उपयोग भगवच्चिन्तन तथा आध्यात्मिक साधनाओं में किया जा सकता है।

क्रोध तथा मांसपेशीय शक्ति भी ओज में रूपान्तरित की जा सकती है। जिस व्यक्ति के मस्तिष्क में ओज अधिक है, वह अत्यधिक मानसिक कार्य कर सकता है। वह बहुत बुद्धिमान् होता है। उसके नेत्र दीप्तिमान् होते हैं तथा उसके मुख पर आकर्षक आभा होती है। वह अल्प शब्द बोल कर जनता को प्रभावित कर सकता है। उसका संक्षिप्त भाषण श्रोताओं के मन पर भारी छाप छोड़ता है। उसका भाषण भावोत्तेजक होता है। उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली होता है। श्रीशङ्कर, जो अखण्ड ब्रह्मचारी थे, ने अपनी ओज-शक्ति से चमत्कार कर दिखाया। उन्होंने अपनी ओज-शक्ति से दिग्विजय की तथा भारत के विभिन्न भागों में प्रकाण्ड विद्वानों के साथ शास्त्रार्थ तथा प्रखर वाद-विवाद किया। योगी अखण्ड ब्रह्मचर्य द्वारा इस शक्ति के सञ्चय की ओर सदा अपना ध्यान देता है।

योग में इसे ऊर्ध्वरेता कहते हैं। ऊर्ध्वरेता योगी वह है जिसमें वीर्यशक्ति ओज-शक्ति के रूप में ऊर्ध्व-दिशा की ओर प्रवाहित हो कर मस्तिष्क में प्रवेश करती है। फिर कामोत्तेजना द्वारा वीर्य के अधो-दिग्गामी होने की कोई सम्भावना नहीं रहती।

काम के उदात्तीकरण का रहस्य

योग-विज्ञान के अनुसार शुक्र सारे शरीर में सूक्ष्म रूप में व्याप्त है। यह सूक्ष्म रूप में शरीर के सारे कोशाणुओं में पाया जाता है। इसे कामेच्छा तथा कामोत्तेजना के प्रभाव से प्रत्याहरण कर जननेन्द्रिय में स्थूल रूप दिया जाता है। ऊर्ध्वरेता योगी वीर्य को ओज में परिणत ही नहीं करता, अपितु अपनी योग-शक्ति के द्वारा, विचार, वाणी तथा कर्म की पवित्रता के द्वारा अण्डकोशों की स्रावी कोशिकाओं द्वारा वीर्य के निर्माण को ही रोक देता है। यह एक महान् रहस्य है। विषम चिकित्सकों का विश्वास है कि ऊर्ध्वरेता-योगी में वीर्य-निर्माण का कार्य अविरत गति से चलता रहता है तथा यह द्रव (वीर्य) रक्त में पुनः अवशोषित हो जाता है। यह उनकी भूल है। वे योग के आन्तरिक रहस्य तथा मर्म को नहीं समझते। वे अन्धकार में हैं। उनकी दृष्टि का विषय विश्व के स्थूल पदार्थों तक ही सीमित है। योगी योग-चक्षु अथवा प्रज्ञा-चक्षु से पदार्थों के सूक्ष्म

रूप में प्रवेश कर जाता है। योगी वीर्य की सूक्ष्म प्रकृति पर नियन्त्रण पा लेता है और उससे वीर्य-द्रव के निर्माण को ही रोक देता है।

जो व्यक्ति वास्तव में ऊर्ध्वरेता होता है उसके शरीर में कमल की तरह की सुगन्ध होती है। इसके विपरीत, जो व्यक्ति ब्रह्मचारी नहीं है तथा जिसमें स्थूल वीर्य का निर्माण होता है, वह बकरे की तरह गन्ध देता है। जो व्यक्ति सच्चाई से प्राणायाम का अभ्यास करते हैं उनमें वीर्य सूख जाता है। वीर्य-शक्ति मस्तिष्क में ऊर्ध्वारोहण करती है। वहाँ वह ओज-शक्ति के रूप में सञ्चित रहती है और अमृत के रूप में वापस आती है।

यह काम के उदात्तीकरण की प्रक्रिया दुस्साध्य है। इसके लिए निरन्तर दीर्घकालीन साधना तथा पूर्ण अनुशासन आवश्यक है। जिस योगी ने पूर्ण उदात्तीकरण प्राप्त कर लिया है उसका कामवासना पर पूर्ण नियन्त्रण होता है। पूर्ण उदात्तीकरण आत्मा पर अविरत ध्यान तथा आत्मसाक्षात्कार से ही सम्पन्न होता है। जिस योगी अथवा ज्ञानी ने निर्विकल्प-समाधि की उच्चतम अवस्था प्राप्त कर ली है तथा जिसके संस्कार-बीज पूर्णतः विदग्ध हो चुके हैं, वह पूर्ण ऊर्ध्वरेता अथवा ऐसा व्यक्ति कहलाने का अधिकारी है जिसने काम का पूर्ण उदात्तीकरण कर लिया है। उसके पतन की कोई आशङ्का नहीं रहती। वह पूर्ण रूप से सुरक्षित होता है। वह अपवित्रता से पूर्णतया मुक्त होता है। यह स्थिति बहुत ही ऊँची स्थिति है। इस उत्कृष्ट उन्नत अवस्था को बहुत ही अल्पसंख्यक लोग प्राप्त कर सके हैं। शङ्कराचार्य, दत्तात्रेय, अलन्दी के ज्ञानदेव तथा अन्य इस अवस्था तक पहुँचे थे।

एक अन्य पन्थ है जिसे 'धीयरिता' कहते हैं। ये वे व्यक्ति हैं जो पहले कामुक विचारों के शिकार हो कर ब्रह्मचर्य से पथभ्रष्ट हो जाते हैं; पर बाद में पूर्ण ब्रह्मचर्य के पालन में लग जाते हैं। ऐसा व्यक्ति, यदि वह बारह वर्षों तक पूर्ण ब्रह्मचर्य का अभ्यास करता है तो अतिमानवीय शक्ति प्राप्त कर सकता है। उसमें मेधा-नाड़ी अथवा बुद्धि-नाड़ी निर्मित होती है। इसके द्वारा वह किसी भी वस्तु की आजीवन तीव्र स्मृति रख सकता है तथा सभी प्रकार के विषयों को सीख सकने की स्थिति में होता है।

पूरे बारह वर्ष तक विचार, वाणी तथा कर्म में अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करने से, यदि व्यक्ति अभीप्सा रखता है तो उसे भगवद्दर्शन भी प्राप्त होता है। वह सर्वाधिक दुर्बोध तथा जटिल समस्याओं को सहज ही सुलझा सकता है। किन्तु

इस प्रकार का अनुपालन बत्तीस अथवा चौंतीस वर्ष की आयु से पूर्व ही आरम्भ होना चाहिए।

यद्यपि वह योगी, जिसने निरन्तर दीर्घकालीन साधना, सतत ध्यान, प्राणायाम तथा आत्मविचार तथा शम, दम, यम तथा नियम के अभ्यास द्वारा अपने-आपको प्रशिक्षित कर लिया है, काम के पूर्ण उदात्तीकरण की अवस्था को प्राप्त नहीं हुआ है, पर वह भी सुरक्षित है। उसमें स्त्रियों के प्रति आकर्षण नहीं होता है। उसने अपने मन को क्षीण कर डाला है। मन विषयाभाव से मर चुका है। वह अपना फण नहीं उठा सकता है। वह फूत्कार नहीं कर सकता है।

पूर्ण उदात्तीकरण कठिन है तथापि असम्भव नहीं

काम के उदात्तीकरण की प्रक्रिया दुस्साध्य होने पर भी आध्यात्मिक मार्ग के साधकों के लिए परम आवश्यक है। कर्मयोग, उपासना, राजयोग अथवा वेदान्त में से किसी पथ का साधक हो, उसके लिए यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योग्यता है। यह साधक के लिए मूलभूत पूर्वापेक्षा है। यदि व्यक्ति में यह योग्यता या गुण है तो अन्य सभी गुण उससे आ मिलते हैं। सभी सद्गुण स्वयमेव उसके पास आते हैं। आपको इसे किसी भी मूल्य पर प्राप्त करना चाहिए। आप भावी जन्मों में इसके लिए अवश्य ही प्रयास करेंगे, तो आप अभी से क्यों प्रयास नहीं करते?

कामवासना का पूर्ण विनाश ही चरम आध्यात्मिक आदर्श है। पूर्ण उदात्तीकरण ही आपको मुक्त करेगा। किन्तु एक-दो दिन में पूर्ण उदात्तीकरण की प्राप्ति असम्भाव्य है। इसके लिए कुछ समय तक धैर्य तथा अध्यवसायपूर्वक सतत सङ्घर्ष की आवश्यकता है। गृहस्थों को भी उपर्युक्त आदर्श अपने सम्मुख रखना चाहिए तथा इसे शनैः-शनैः प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। यदि पूर्ण उदात्तीकरण की स्थिति प्राप्त हो गयी तो विचार, वाणी तथा कर्म में पवित्रता होगी। मन में किसी भी समय कोई कामुक विचार प्रवेश नहीं करेगा।

सतत विचार तथा ब्रह्मभावना के द्वारा ही मन को कामपूर्ण विचारों तथा प्रवृत्तियों से मुक्त किया जा सकता है। आपको न केवल कामवासनाओं तथा कामवेगों को दूर करना चाहिए, अपितु यौन-आकर्षण को भी त्यागना चाहिए। विवाहित जीवन तथा उसके भाँति-भाँति के उलझनों तथा बन्धनों से आपको कितने-कितने क्लेश मिलते हैं, तनिक इस पर भी तो विचार करें। मन को बार-बार आत्मसुझाव तथा ताड़ना द्वारा भली प्रकार समझायें कि यौन-सुख व्यर्थ,

मिथ्या, भ्रामक तथा दुःखपूर्ण है। मन के सम्मुख आध्यात्मिक जीवन, आनन्द, शक्ति तथा ज्ञान के लाभ रखने चाहिए। उसे समझाना चाहिए कि उन्नत, नित्य जीवन केवल अमर आत्मा में ही है। जब यह निरन्तर इन लाभदायक सुझाओं को सुनता रहेगा तो धीरे-धीरे अपनी पुरानी आदतों को छोड़ देगा। शनैः-शनैः यौन-आकर्षण भी समाप्त हो जायेगा। तभी वास्तविक यौन-उदात्तीकरण होगा और आप ऊर्ध्वरेता योगी बन जायेंगे।

मन में दो प्रकार की शक्तियाँ होती हैं—एक अनुकूल या सहायक तथा दूसरी प्रतिकूल या विरोधी शक्ति। कामवासना विरोधी शक्ति है जो आपको नीचे की ओर घसीटती है। शुद्ध विवेक सहायक शक्ति है जो आपको उन्नत कर देवत्व में रूपान्तरित करता है। अतः मेरे बच्चे, विशुद्ध आनन्द तथा ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने के लिए शुद्ध विवेक का विकास करें। कामवासना स्वयमेव नष्ट हो जायेगा।

यदि आप काम का उदात्तीकरण प्राप्त करना चाहते हैं तो यह आपकी पहुँच के भीतर है। यदि आप मार्ग को समझते हैं और यदि आप धैर्य, लगन, दृढ़ निश्चय तथा प्रबल सङ्कल्प-शक्ति के साथ उसमें अपने को लगा देना चाहते हैं, यदि आप इन्द्रिय-निग्रह, सदाचार, सद्विचार, सत्कर्म, नियमित ध्यान, अपने स्वरूप का दावा, आत्मसंसूचना तथा 'मैं कौन हूँ' के अनुसन्धान का अभ्यास करते हैं तो मार्ग नितान्त सरल, सीधा तथा निर्बाध है। आत्मा अलिङ्ग है। आत्मा निर्विकार है। इसका अनुभव कीजिए। क्या नित्य-शुद्ध आत्मा में काम अथवा अशुचिता का कोई लेश पाया जा सकता है?

उन योगियों की जय हो जो ऊर्ध्वरेता बन चुके हैं तथा अपने स्वरूप में स्थित हैं। ईश्वर करे कि हम सब शम, दम, विवेक, विचार, वैराग्य, प्राणायाम, जप तथा ध्यान के अभ्यास द्वारा पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन कर जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करें! अन्तर्यामी प्रभु हमें मन तथा इन्द्रियों का नियन्त्रण करने के लिए आत्मबल प्रदान करें! हम प्राचीन काल के श्री शङ्कराचार्य तथा श्री ज्ञानदेव के समान पूर्ण ऊर्ध्वरेता योगी बनें! हम सबको उनका आशीर्वाद प्राप्त हो!

१५

विवाह करें अथवा न करें

क्या ब्रह्मचर्य सम्भव है?

यद्यपि संसार में विविध प्रकार के प्रलोभन तथा चित्तविक्षेप हैं, तथापि यहां रहते हुए भी ब्रह्मचर्य का अभ्यास करना सर्वथा सम्भव है। प्राचीन काल में अनेकों ने इसमें सफलता प्राप्त की थी और आज भी अनेक लोग हैं। सुअनुशासित जीवन, सात्त्विक मिताहार, धर्मग्रन्थों का स्वाध्याय, सत्सङ्ग, जप, ध्यान, प्राणायाम, दैनिक अन्तरावलोकन तथा परिपृच्छा, आत्मविश्लेषण तथा आत्मसुधार, सदाचार, यम, नियम तथा गीता के सतरहवें अध्याय के उपदेशानुसार शारीरिक, वाचिक तथा मानसिक तपों का अभ्यास—ये सभी इस लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। लोग अनियमित, अनैतिक, अमर्याद, अधार्मिक तथा अनुशासनहीन जीवन व्यतीत करते हैं। जिस प्रकार हाथी अपने ही शिर पर धूल डालता है, वैसे ही लोग अपनी मूर्खतावश अपने ऊपर कठिनाइयों और सङ्कटों को लाते हैं।

ब्रह्मचर्य का अभ्यास करने वाले व्यक्ति प्रायः यह शिकायत करते हैं कि ब्रह्मचर्य के कारण उन्हें मानसिक थकावट होती है। यह केवल मन का धोखा है। कभी-कभी आपको मिथ्या भूख लगती है। ऐसी अवस्था में जब आप वास्तव में भोजन करने के लिए बैठते हैं तो आपको वास्तविक अच्छी भूख नहीं होती है और आप कुछ खाना नहीं खाते। इसी भाँति, मिथ्या मानसिक थकान है। यदि आप ब्रह्मचर्य पालन करेंगे तो आपको अपरिमित मानसिक शक्ति प्राप्त होगी। आप इसे सदा अनुभव नहीं कर सकेंगे। जिस प्रकार एक पहलवान जो साधारणतया अपने को एक प्रसामान्य व्यक्ति अनुभव करता है, अखाड़े में अपने शारीरक बल को प्रकट करता है वैसे ही आप भी अवसर उपस्थित होने पर अपनी मानसक शक्ति को प्रकट करेंगे।

इन्द्रियनिग्रह हानिकारक नहीं है। यह शक्ति को सुरक्षित रखता तथा अपरिमित मनोबल तथा शान्ति प्रदान करता है। अति-विषयसुख-निरति नैतिक तथा आध्यात्मिक दिवालियेपन, असामयिक मृत्यु तथा मनःशक्ति, प्रतिभा तथा ग्रहणशक्ति की क्षति का कारण बनती है।

ब्रह्मचर्य के अभ्यास के परिणामस्वरूप कोई सङ्कट अथवा भीषण रोग अथवा विविध प्रकार की मनोग्रन्थियों जैसे कोई अनिष्ट फल नहीं होते जिनके लिए पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक भूल से उसे उत्तरदायी ठहराते हैं। उन्हें इस विषय का व्यावहारिक ज्ञान नहीं है। उनकी यह निराधार तथा गलत धारणा है कि अतृप्त कामशक्ति प्रच्छन्न रूप से स्पर्श-भीति आदि जैसी विविध प्रकार की मनोग्रन्थियों का आकार धारण कर लेती है। इस मनोग्रन्थि के कुछ अन्य कारण हैं। यह मनोग्रन्थि विविध कारणों से उत्पन्न अत्यधिक ईर्ष्या, घृणा, क्रोध, चिन्ता तथा उदासी के फलस्वरूप होने वाली मन की विकृत अवस्था है।

इसके विपरीत, थोड़ा-सा भी आत्मसंयम अथवा ब्रह्मचर्य का थोड़ा-सा भी अभ्यास एक आदर्श उद्दीपक बलवर्धक औषधि है। यह मनोबल तथा मानसिक शान्ति प्रदान करता, मन तथा स्नायुओं को अनुप्राणित करता, शारीरिक तथा मानसिक शक्ति के संरक्षण में सहायता करता, स्मृति, सङ्कल्प-शक्ति तथा मेधा-शक्ति की वृद्धि करता, अत्यधिक बल, ओज तथा जीवन-शक्ति प्रदान करता, शरीर-गठन का नवीकरण करता, कोषाणुओं तथा ऊतकों का पुनर्निर्माण करता, पाचन-शक्ति को सबल बनाता तथा दैनिक जीवन-संग्राम में कठिनाइयों का सामना करने के लिए शक्ति प्रदान करता है। धैर्य तथा साहस के विशेष सद्‌गुणों का ब्रह्मचर्य के सम्पोषण से घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक अखण्ड ब्रह्मचारी संसार को हिला सकता, प्रभु यीशु की भाँति सागर की तरङ्गों को रोक सकता, पर्वतों को ध्वस्त कर सकता तथा ज्ञानदेव की भाँति प्रकृति तथा पञ्चमहाभूतों पर शासन कर सकता है। त्रैलोक्य में उसके लिए कोई भी वस्तु अप्राप्य नहीं है। सारी सिद्धियाँ तथा ऋद्धियाँ उसके चरणों में लोटती हैं।

भोगवादियों का मूर्खतापूर्ण तर्क

कुछ अज्ञानी कहते हैं : "काम को रोकना ठीक नहीं है। हमें प्रकृति के विरुद्ध नहीं जाना चाहिए। भगवान् ने सुन्दरी युवतियों का निर्माण क्यों किया है? उनके इस सर्जन में कुछ-न-कुछ अभिप्राय तो होना ही चाहिए। हमें उनका उपभोग करना चाहिए तथा यथासम्भव अधिक-से-अधिक सन्तान उत्पन्न करना चाहिए। यदि सभी व्यक्ति संन्यासी बन जायें तथा जङ्गलों में चले जायें तो इस संसार का क्या होगा? यह समाप्त हो जायेगा। यदि हम काम को रोकेंगे तो हमें रोग लग जायेंगे। हमारे प्रचुर सन्तान होनी चाहिए। यदि हमारे प्रचुर बच्चे होते हैं तो घर में आनन्द छाया रहता है। विवाहित जीवन के सुख का वर्णन शब्दों में नहीं

किया जा सकता है। यही जीवन का सर्वोपरि लक्ष्य है। मैं वैराग्य, त्याग, संन्यास तथा निवृत्ति को पसन्द नहीं करता।" यही उनका भोंडा दर्शन है। वे लोग चार्वाक तथा विरोचन के साक्षात् वंशज हैं। वे भोगवादी विचारधारा के आजीवन-सदस्य हैं। अतिभोजिता ही उनके जीवन का लक्ष्य है। उनके अनुयायियों की संख्या बहुत बड़ी है। वे शैतान के मित्र हैं। उनका दर्शन कितना प्रशंसनीय है!

जब वे अपनी सम्पत्ति, पत्नी तथा सन्तान खो बैठते हैं, जब वे किसी असाध्य रोग से पीड़ित होते हैं, तब कहते हैं—"भगवान्! मुझे इस भयङ्कर रोग से मुक्त कीजिए। मेरे पापों के लिए मुझे क्षमा कर दीजिए। मैं महापापी हूँ।"

किसी भी मूल्य पर काम पर नियन्त्रण करना ही चाहिए। काम को रोकने से एक भी रोग नहीं होता। इसके विपरीत इससे असीम शक्ति, सुख तथा शान्ति प्राप्त होती है। काम को नियन्त्रित करने के कुछ प्रभावकारी साधन भी हैं। व्यक्ति को प्रकृति के विरुद्ध जा कर प्रकृति से परे आत्मा को प्राप्त करना चाहिए। जिस प्रकार मछली नदी में धारा के प्रतिकूल उपरिनद में तैरता है उसी प्रकार आपको अनिष्टकारी शक्ति-रूपी संसार-प्रवाह के विपरीत चलना होगा। तभी आपको आत्मसाक्षात्कार की प्राप्ति हो सकती है। काम एक अनिष्टकारी शक्ति है और यदि आप अक्षय आत्मानन्द को प्राप्त करना चाहते हैं तो इस पर नियन्त्रण करना ही होगा। यौन-सुख कोई सुख नहीं है। यह मानसिक भ्रान्ति है। सङ्कट, पीड़ा, भय, आयास तथा जुगुप्सा इसके साथ लगे रहते हैं। यदि आपको योग अथवा आत्मविज्ञान की जानकारी हो जाये तो आप इस भयानक रोग काम को सहज ही नियन्त्रित कर सकते हैं। भगवान् चाहते हैं कि आप आत्मानन्द का उपभोग करें। इसकी प्राप्ति इस संसार के इन सभी सुखों को त्यागने से ही हो सकती है। ये सुन्दरी स्त्रियाँ तथा सम्पत्ति आपको मोहित करने तथा अपने जाल में फँसाने के लिए माया के उपकरण हैं। यदि आप अपने क्षुद्र विचारों तथा दूषित कामनाओं के साथ सदा सांसारिक व्यक्ति बने रहना चाहते हैं तो आप निश्चय ही ऐसा कर सकते हैं। आपको पूर्ण स्वतन्त्रता है। आप तीन सौ पैंसठ पत्नियों से विवाह कर सकते हैं और जितने हो सकें, उतने बच्चे प्रजनन कर सकते हैं। आपको कोई भी रोक नहीं सकता है। परन्तु आपको शीघ्र ही यह ज्ञात हो जायेगा कि यह संसार आपको आपके मनोनुकूल सन्तोष प्रदान नहीं कर सकता है; क्योंकि सभी पदार्थ दिक्काल तथा कारण पर आश्रित हैं। यहाँ मृत्यु, रोग, जरा, परेशानी, चिन्ता तथा

आकुलता, भय, हानि, निराशा, असफलता, दुर्व्यवहार, शीत, ताप, सर्प-दंश, बिच्छू-डंक, भूकम्प तथा दुर्घटनाएँ हैं। आप एक क्षण के लिए भी किञ्चित् मानसिक शान्ति प्राप्त नहीं कर सकते; क्योंकि आपका मन काम तथा मल से पूर्ण है। अभी आपकी समझ दूषित तथा आपकी बुद्धि विकृत हो गयी है; अतः आप संसार के प्रातिभासिक स्वरूप तथा आत्मा के चिरन्तन सुख को समझ नहीं पा रहे हैं।

काम को प्रभावशाली ढङ्ग से नियन्त्रित किया जा सकता है। इसके लिए अकाट्य विधियाँ हैं। काम को नियन्त्रित करने पर आप अपने अन्तर से, आत्मा से सच्चे सुख का उपभोग करेंगे। सभी व्यक्ति संन्यासी नहीं बन सकते। उनके बहुत से सम्बन्ध तथा आसक्तियाँ हैं। वे कामुक हैं, अतः वे संसार का त्याग नहीं कर सकते हैं। वे अपनी पत्नियों, बच्चों तथा सम्पत्ति से आबद्ध हैं। आपका तर्कवाक्य अनुचित है। यह असम्भव है। यह अशक्य है। क्या आपने विश्व-इतिहास के इतिवृत्ति में कभी ऐसा सुना है की सभी व्यक्तियों के संन्यासी हो जाने के कारण यह विश्व जनशून्य हो गया? फिर आप ऐसा असङ्गत तर्कवाक्य क्यों प्रस्तुत करते हैं? यह आपके मूर्खतापूर्ण तर्क तथा उस शैतानी दर्शन को समर्थन करने के लिए आपके मन की एक विलक्षण चाल है जिसका कामवासना तथा यौन-तुष्टि एक महत्त्वापूर्ण सिद्धान्त है। भविष्य में इस तरह की बातें न कीजिए। इससे आपकी मूर्खता तथा वासनामयी प्रकृति प्रकट होती है। इस संसार के विषय में आप चिन्ता न कीजिए। अपने काम से काम रखिए। ईश्वर सर्वशक्तिमान् है। यदि सभी लोग जङ्गल में चले जायें और यह संसार जनशून्य हो जाये तब भी भगवान् पल-भर में अपने सङ्कल्पमात्र से करोड़ों लोगों की तत्काल पलमात्र में सृष्टि कर देगा। यह देखाना आपका कार्य नहीं है। अपनी कामवासना के उन्मूलन के लिए उपाय खोज निकालिए।

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में विवाह एक अपरिहार्य तत्त्व नहीं माना जा सकता है। वास्तव में एक सच्चे साधक को निश्चय ही अपने को विवाहित जीवन की बेड़ियों से दूर, बहुत दूर रखना चाहिए। विवाह उसके लिए अभिशाप है। तथापि उस कामुक प्रकृति वाले व्यक्ति के लिए, जिसके लिए विषयवासना को पराभूत करना अत्यन्त दुष्कर है, यह उसकी नैतिक असावधानी के लिए एक प्रकार का बाड़ा अथवा सुरक्षा प्रदान करने वाली तिजोरी है। अतः विवाह उन लोगों के लिए विहित है—और यह अधिसंख्यक मानव-जाति पर लागू होता

है—जो अभी पूर्ण आत्मनिग्रह के जीवन के लिए तैयार नहीं हैं और इस भाँति उन्हें विवाह को एक संस्कार मानना चाहिए, किन्तु निश्चय ही इसे विषयासक्ति का अनुज्ञापत्र नहीं समझना चाहिए।

इस संसार में उत्पन्न हुए प्रत्येक व्यक्ति को विवाह करना अनिवार्यतः आवश्यक नहीं है। विवाह इस लोक में मनुष्य के जीवन को नियमित बनाने के लिए है। यदि समाज में विवाह की प्रथा न होती तो जीवन अनियमित तथा पाशविक हो गया होता। किन्तु, जहाँ हृदय में कामवासना नहीं है, जहाँ भगवान् के लिए प्रबल अभीप्सा है, जहाँ आध्यात्मिक खोज की आकांक्षा है, वहाँ विवाह अनिवार्य नहीं है। ऐसा व्यक्ति नैष्ठिक ब्रह्मचारी का जीवन यापन कर सकता है।

माता-पिता को अपने पुत्रों को विवाह करने के लिए विवश नहीं करना चाहिए। उन्हें अपने बच्चों के आध्यात्मिक संस्कारों को कुचलना नहीं चाहिए। अनेक युवक जिनमें आध्यात्मिक जागृति है, करुण शब्दों में मुझको लिखते हैं: "प्रिय स्वामीजी, मेरा हृदय उच्चतर आध्यात्मिक विषयों के लिए आतुर है। मुझे सांसारिक विषयों में कोई रुचि नहीं है। मेरा परिवेश अनुकूल नहीं है। मैं विवाह-जाल में उलझ गया हूँ। मेरे माता-पिता ने मेरी इच्छा के विपरीत मुझे विवाह करने को विवश किया। मुझे अपने वृद्ध माता-पिता को तुष्ट करना था। उन्होंने कई प्रकार से मुझे धमकी दी। अब मैं रोता हूँ। मैं अब क्या करूँ?" कुमार बालकों, जिनको इस संसार अथवा इस जीवन का कुछ बोध नहीं, का आठ या दश वर्ष की आयु में विवाह कर दिया जाता है। हम बच्चों को बच्चे उत्पन्न करते देखते हैं। शिशु माताएँ हैं। लगभग अठारह वर्ष के बालक के तीन बच्चे हैं। क्या ही भयानक स्थिति है! बाल-विवाहों से वीर्य का अकाल नाश होता है। इससे शारीरिक तथा मानसिक अधःपतन होता है। कोई भी दीर्घायु नहीं होता है। सभी अल्पजीवी हैं। बार-बार के प्रसव से स्त्रियों का स्वास्थ्य नष्ट होता है तथा अनेक रोग उत्पन्न होते हैं।

आपने पहनावे तथा भूषाचार-सम्बन्धी विषयों में पाश्चात्य जगत् की विविध आदतें अपनायी हैं। आप निकृष्ट अनुकरण करने वाले प्राणी बन गये हैं। पाश्चात्य जगत् के लोग जब तक परिवार का अच्छी तरह भरण-पोषण करने योग्य नहीं हो जाते, विवाह नहीं करते हैं। उनमें अधिक आत्मनिग्रह है। वे प्रथम जीवन में एक अच्छा पद प्राप्त करते हैं, धनोपार्जन करते हैं, कुछ बचत करते हैं और तभी विवाह के विषय में सोचते हैं। यदि उनके पास पर्याप्त धन नहीं होता तो वे

आजीवन कुँआरे ही रहते हैं। वे इस संसार में भिक्षुओं को उत्पन्न करना नहीं चाहते हैं जैसा कि आप करते हैं। जिसने इस संसार में मानव के दुःखों को समझ लिया है, वह स्त्री के गर्भ से एक बच्चा उत्पन्न करने का साहस कदापि नहीं करेगा।

पति तथा पत्नी के मध्य प्रेम का स्वरूप

पति तथा पत्नी के मध्य का प्रेम मुख्यतः शारीरिक, स्वार्थी तथा दम्भी होता है। यह स्थिर नहीं होता है। यह क्षणभंगुर तथा परिवर्तनशील होता है। यह शारीरिक कामवासना मात्र है। यह यौनोपराग है। इसमें निम्न संवेगों का पुट होता है। यह पाशविक प्रकृति का होता है। यह सीमित है। किन्तु दिव्य प्रेम असीम, शुद्ध, सर्वव्यापी तथा नित्य-स्थायी होता है। यहाँ विवाह-विच्छेद का प्रश्न नहीं उठता।

अधिसंख्यक पति तथा पत्नी के बीच में वास्तव में आन्तरिक मेल नहीं होता है। सावित्री तथा सत्यवान्, अत्रि तथा अनसूया इन दिनों बहुत ही विरले होते हैं। क्योंकि पति तथा पत्नी केवल स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों से बाह्यतः ही संयुक्त होते हैं, अतः उनमें मुस्कान तथा बाह्य प्रेम का कुछ दिखावा मात्र होता है। यह सब दिखावा मात्र है।

क्योंकि उनके विश्वास की गहनतम अनुभूतियों में वास्तविक एकता नहीं होती, अतः प्रत्येक घर में सदा ही किसी-न-किसी प्रकार का वैमनस्य तथा अनबन, वक्र चेहरे तथा तीक्ष्ण शब्द रहते हैं। यदि पति अपनी पत्नी को चलचित्र-भवन नहीं ले जाता तब घर में झगड़ा चल पड़ता है। क्या आप इसे सच्चा प्रेम कह सकते हैं! यह स्वार्थपरक व्यापारिक कार्य है। कामवासना के कारण लोग अपनी सत्यनिष्ठा, स्वतन्त्रता तथा गरिमा खो बैठे हैं। वे स्त्रियों के दास बन गये हैं। आप क्या ही दयनीय दृश्य देख रहे हैं! कुञ्जी पत्नी के पास है और दो रुपये के लिए भी पति को उसके सामने अपना हाथ पसारना पड़ता है। तथापि भ्रान्ति तथा कामोन्मादवश पति कहता है—"मेरे एक प्रेमपात्र स्नेही पत्नी है। वह वास्तव में मीरा है। वह वस्तुतः पूजनीय है।"

स्वार्थपरक प्रेम में प्रेमी तथा प्रेयसी के मध्य सच्चा सुख नहीं हो सकता है। पति के मरणासन्न होने पर पत्नी अधिकोश-लेखा-पुस्तिका (बैंक पासबुक) ले कर चुपके से अपने मायके चली जाती है। पति की कुछ दिनों के लिए नौकरी छूट

जाती है तो पत्नी मुँह बनाती है, कठोर शब्द बोलती है तथा प्रेमपूर्वक उसकी उचित रूप से सेवा नहीं करती है। यह स्वार्थी प्रेम है। उनके हृदय-अन्तर्भाग में सच्चा स्नेह नहीं होता है। अतः घर में सदा लड़ाई, झगड़ा तथा अशान्ति रहती है। पती तथा पत्नी वास्तव में एक नहीं हुए हैं। वे नीरस तथा खिन्न जीवन को खींचते हुए येन-केन-प्रकारेण निभाते रहते हैं।

कामवासना किसी तरह भी प्रेम नहीं है। यह पशु-प्रवृत्ति है। यह शारीरिक प्रेम है। यह पाशविक स्वरूप वाला है। यह स्थानान्तरित होता रहता है। यदि पत्नी किसी असाध्य रोग के कारण अपना सौन्दर्य खो बैठती है तो पति उससे विवाह-विच्छेद कर द्वितीय पत्नी से विवाह कर लेता है। इस संसार में, यंह परिस्थिति जारी रहती है।

पति अपनी पत्नी से पत्नी के लिए प्रेम नहीं करता है, वरन् अपने स्वयं के लिए करता है। वह स्वार्थी है। वह पत्नी से विषय-सुख की आशा करता है। यदि कुष्ठरोग अथवा चेचक उसके सौन्दर्य को नष्ट कर देता है तो उसके पति का प्रेम समाप्त हो जाता है। जब पत्नी की मृत्यु हो जाती है तो पति शोकमग्न हो जाता है। ऐसा वह अपनी स्नेही जीवन-सङ्गिनी की क्षति के कारण नहीं, वरन् इसलिए करता है कि वह अब यौन-सुख प्राप्त नहीं कर सकता है।

जब आपकी पत्नी युवती तथा सुन्दर होती है तब आप उसके घुँघराले बाल, गुलाबी कपोलों, मनोहर नासिका, चमकीली त्वचा तथा रूपहले दाँतों की प्रशंसा करते हैं। जब वह किसी चिरकालिक असाध्य व्याधि के कारण अपना सौन्दर्य खो देती है, तब आपके लिए उसमें आकर्षण नहीं रहता। आप द्वितीय पत्नी से विवाह कर लेते हैं। यदि आप अपनी प्रथम पत्नी से आत्मभाव से प्रेम किये होते, यदि आपमें यह व्यापक समझ होती कि आप तथा आपकी पत्नी में एक ही आत्मा है तब उसके प्रति आपका प्रेम शुद्ध, निःस्वार्थ, चिरस्थायी, निर्विकार तथा अपरिवर्तनशील होता। जैसे आप पुरनी मिसरी तथा पुराने चावल को अधिक पसन्द करते हैं, वैसे ही आप अपनी पत्नी से, जब वह वृद्ध हो जाती है, अधिकाधिक प्रेम करेंगे; क्योंकि ज्ञान के द्वारा आपमें आत्मभाव आ गया है। ज्ञान ही प्रेम को और अधिक प्रगाढ़ करेगा तथा उसे चिरस्थायी बनायेगा।

शारीरिक प्रेम पशुधर्म है। शरीर अथवा त्वचा के प्रति प्रेम राग है। यह उन्नत तथा परिष्कृत राग है। यह स्थूल तथा वैषयिक है। शरीर के प्रति राग शुद्ध प्रेम

अथवा सच्चा प्रेम नहीं है। यह अज्ञानजात मोह ही है। आप इस राग के कारण ही पाप कर्म करते हैं तथा अपनी आत्मा का हनन करते हैं।

वेश्याएँ भी अपने ग्राहकों के प्रति कुछ समय तक प्रचुर प्रेम, मधुर मुस्कान प्रदर्शित करती तथा मधुमय शब्द बोलती हैं। ऐसा वे जब तक रुपया ऐंठ सकती हैं तभी तक करती हैं। जरा मुझे स्पष्ट रूप से बतायें कि क्या आप इसे प्रेम तथा सच्चा सुख कह सकते हैं? इसमें धूर्तता, व्यवहारकुशलता, कुटिलता तथा मिथ्याचार है। इस प्रेम में आत्म-त्याग का किञ्चित् अंश भी नहीं है।

ब्रह्मचारी बनें अथवा गृहस्थ

कामुक लोगों के लिए ही गृहस्थाश्रम का विधान है; क्योंकि वे अपनी कामुकता पर नियन्त्रण नहीं रख सकते। यदि कोई व्यक्ति शङ्कराचार्य अथवा सदाशिव ब्रह्म की भाँति पर्याप्त आध्यात्मिक संस्कार, अन्तर्जात विवेक तथा वैराग्य के साथ उत्पन्न हुआ है तो वह गृहस्थाश्रम में प्रवेश नहीं करेगा। वह तत्काल नैष्ठिक ब्रह्मचर्य अपनायेगा और तत्पश्चात् संन्यास ग्रहण कर लेगा। श्रुतियाँ भी इसका समर्थन करती हैं। जाबालोपनिषद् कहती है : "**यदहरेव विरजेत्तदहरेव प्रव्रजेत्**—जिस दिन वैराग्य आये, उसी दिन संन्यास ले लीजिए।"

विवाह कुछ लोगों की आध्यात्मिक प्रगति में बाधा पहुँचाता है तो कुछ लोगों की सहायता करता है। राजा भर्तृहरि के लिए यह बाधक था और सन्त तुकाराम के लिए यह सहायक था। अन्त में व्यक्ति एक ही लक्ष्य पर पहुँचता है। यात्रा सर्वाधिक छोटी होने दें। छोटे रास्ते को लम्बे मार्ग की अपेक्षा अधिक पसन्द करें। व्यक्ति सदा यही चाहता है।

ब्रह्मचर्यमय जीवन गार्हस्थ्य जीवन से सौ गुना अधिक अच्छा है। मैं ब्रह्मचर्य में विश्वास करता हूँ; क्योंकि यह मनुष्य में गुप्त शक्तियों का उद्घाटन करता है। ब्रह्मचर्य भगवत्साक्षात्कार का सीधा राजपथ है; विवाह सर्पगतिक मार्ग है। पूर्वोक्त अवरोक्त की अपेक्षा अधिक अधिमान्य है; किन्तु व्यक्ति अपनी निम्न कामवासना के कारण अवरोक्त मार्ग ही अपनाता है।

तथापि गृहस्थ भी आत्मसाक्षात्कार से मात्र इसलिए वञ्चित नहीं होता कि उसके कन्धों पर परिवार का भार है। सन्त तुकाराम का दो बार विवाह हुआ। उनके बच्चे भी थे। तथापि वे विमान से वैकुण्ठ पहुँच गये। यदि आपका सांसारिक जीवन के प्रति दृष्टिकोण सरल, सच्चा तथा निष्कपट है, यदि आपकी

तथाकथित जीवनसङ्गी धर्मनिष्ठ है तथा सभी विषयों में आपकी आज्ञाकारी है तो विवाह करने में कोई हानि नहीं है। किन्तु यदि विवाहित जीवन व्यक्ति के लिए भार अथवा अभिशाप बनने की अधिक सम्भावना हो तो व्यक्ति विवाह ही क्यों करे तथा ऐसी बेड़ी में अपने को क्यों उलझाये जिसे कभी दो टुकड़ों में काटा नहीं जा सकता है?

यदि आप अतिनियमनिष्ठ ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहते हैं तो विवाह न करें। अपने को यह कह कर प्रवञ्चित न होने दें—"विवाह के पश्चात् मैं अतिनियमनिष्ठ ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा।" बाद में यह इस ब्रह्मचर्य-व्रत के त्याग करने का अपना तर्क आपके सम्मुख प्रस्तुत करेगा। आपका धर्म है भगवत्साक्षात्कार।

आपकी पूर्ववर्ती सभी विविध पशुयोनियों में इन्द्रियों तथा यौन का पर्याप्त तुष्टिकरण हुआ है। पशु-जीवन यौन तथा जिह्वा की निम्न अभिरुचियों की तृप्ति के लिए है; किन्तु मानव-जीवन महत्तर उद्देश्यों के लिए है। हे मानव! आप काठ-कोयले का काम लेने के लिए चन्दन-वृक्ष क्यों जलाते हैं? यह मानव जीवन बहुमूल्य है। देवता भी इसकी ईर्ष्या करते हैं। एक जीवन गँवा देने का अर्थ है भगवान् बनने के लिए एक स्वर्णिम अवसर को गँवा देना।

विषय-सुख तृष्णा बढ़ाने वाला है। व्यक्ति जब तक अभीप्सित पदार्थ पर अधिकार प्राप्त नहीं कर लेता तभी तक सम्मोहन रहता है। पदार्थ पर अधिकार प्राप्त कर लेने के पश्चात् उसे पता चलता है कि वह उसमें उलझ गया है। कुँआरा व्यक्ति प्रतिदिन विवाह के विषय में सोचता रहता है; किन्तु उपभोग उसको सन्तोष प्रदान नहीं करता है और न कर ही सकता है। इसके विपरीत, यह केवल उसकी वासना को बदतर तथा तीव्र करता है और कामवासना तथा लालसा के द्वारा उसके मन को और अशान्त बनाता है। उसको ऐसा अनुभव होता है कि वह कारावास में है। यह माया का इन्द्रजाल है। यह संसार प्रलोभनों से भरा है।

आप सांसारिक पदार्थों में आनन्द नहीं प्राप्त कर सकते हैं। यह केवल भौतिकवादी विष है। इसके अतिरिक्त, विवाह एक अभिशाप तथा आजीवन कारावास है। यह इस भूतल पर सबसे बड़ा बन्धन है। उस कुँआरे व्यक्ति को जो एक समय स्वतन्त्र था, अब जुआ लगा दिया गया है और उसके हाथों तथा पैरों में बेड़ियाँ डाल दी गयी हैं। ऐसा निरपवाद रूप से सभी विवाहित व्यक्तियों का अनुभव है। अतः यदि आप टाल सकते हैं तो विवाह न करें। विवाह के

पश्चात् बचाव कठिन होगा। आध्यात्मिक मार्ग के जीवन की महिमा तथा विवाहित जीवन की महान् कठिनाइयों, चिन्ताओं, परेशानियों तथा झंझटों को अनुभव कीजिए। तीव्र वैराग्य का विकास कीजिए। भगवच्चेतना के अपने जन्मसिद्ध अधिकार का दावा कीजिए। क्या आप वास्तव में स्वयं ब्रह्म नहीं हैं?

पत्नी पति के जीवन को काटने की तीव्र छुरी है। यदि स्वर्ण-कण्ठहार तथा रेशम की बनारसी साड़ियाँ नहीं उपलब्ध की जातीं तो पत्नी पति पर भौंहें चढ़ाती है। पति ठीक समय पर अपना भोजन नहीं पा सकता है। पत्नी तीव्र उदरशूल से पीड़ित होने का झूठा बहाना बना कर बिस्तर पर लेट जाती है। आप यह तमाशा अपने घर में देख सकते हैं और प्रतिदिन अनुभव कर सकते हैं। निश्चय ही मुझे आपसे अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। अतः शान्ति के साथ विवाह कीजिए तथा वैराग्य नामक योग्य पुत्र तथा विवेक नाम की उदारचेता पुत्री प्राप्त कीजिए तथा आत्म-ज्ञान-रूपी सुस्वादु फल का आस्वादन कीजिए जो आपको अमर बना सकता है।

पत्नी एक विलासिता की वस्तु है। यह आत्यन्तिक आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक गृहस्थ विवाह के पश्चात् रो रहा है। वह कहता है : "मेरा पुत्र आन्त्र ज्वर (टाइफाइड) से रुग्ण है। मेरी दूसरी पुत्री का विवाह करना है। मुझे ऋण चुकाना है। मेरी पत्नी एक स्वर्ण-कण्ठहार खरीदने के लिए परेशान कर रही है। मेरे ज्येष्ठ जामाता की अभी हाल में मृत्यु हो गयी।"

विवाह न कीजिए। विवाह न कीजिए। विवाह न कीजिए। विवाह के पश्चात् बचाव कठिन है। विवाह सबसे बड़ा बन्धन है। स्त्री निरन्तर उत्पीड़न तथा अशान्ति का स्रोत है। बुद्ध, पट्टिनत्तु स्वामी, भर्तृहरि तथा गोपीचन्द ने क्या किया? क्या वे स्त्री के बिना सुख तथा शान्ति से नहीं रहे?

इस पार्थिव जगत् में काम सबसे बड़ा शत्रु है। यह मनुष्य को निगल जाता है। मैथुन के अनन्तर बहुत विषाद होता है। आपको अपनी पत्नी को प्रसन्न रखने तथा उसकी आवश्यकताओं तथा विलासवस्तुओं की पूर्ति के लिए धनोपार्जन करने में अत्यधिक प्रयास करना पड़ता है। धन प्राप्त करने में आप विविध प्रकार के पाप करते हैं। आप मन से अपनी पत्नी के कष्ट तथा शोक में तथा अपने बच्चों के कष्ट तथा दुःख में भी बागीदार बनते हैं। आपको परिवार को चलाने के लिए सहस्रों प्रकार की चिन्ताएँ करनी पड़ती है। क्योंकि दो मन सहमत नहीं हो सकते, अतः घर में सदा कलह होता रहता है। आपको व्यर्थ ही अपनी

आवश्यकताएँ तथा उत्तरदायित्वों को बढ़ाना होता है। आपकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। वीर्य-द्रव की भारी क्षति के कारण आप रोगों, अवसाद, दुर्बलता तथा जीवन-शक्ति की क्षति से आक्रान्त होंगे। इसके परिणामस्वरूप आपकी असामयिक मृत्यु होगी। अतः अखण्ड ब्रह्मचारी बनें तथा दुःखों, चिन्ताओं तथा झंझटों से अपने को मुक्त करें।

प्रकाश की उपस्थिति में अन्धकार नहीं रह सकता है। इसी प्रकार विषय-सुख की उपस्थिति में आत्मानन्द नहीं रह सकता है। सांसारिक लोग विषय-सुख तथा आत्मानन्द एक ही समय में, एक ही पात्र में चाहते हैं। यह सर्वथा असम्भाव्य है। वे सांसारिक, वैषयिक सुख का परित्याग नहीं कर सकते हैं। वे अपने विश्वास के गहनतम अनुभूति में सच्चा विश्वास नहीं रख सकते हैं। वे बातें अधिक करते हैं। सांसारिक व्यक्ति समझते हैं कि वे सुखी हैं; क्योंकि उन्हें कुछ अदरक-मिश्रित बिस्कुट, कुछ धन तथा स्त्री प्राप्त हैं। इन बेचारे प्राणियों को और क्या चाहिए? कामवासना के द्वारा संसार में अधिक भिखमंगे उत्पन्न होते हैं। सभी सांसारिक सुख आरम्भ में अमृत प्रतीत होते हैं; किन्तु परिणाम में साङ्घातिक विष बन जाते हैं। जब व्यक्ति विवाहित जीवन में फँस जाता है तो वह मोह के विविध बन्धनों को कठिनाई से तोड़ पाता है। अतः इस भ्रामक जीवन में निष्ठा रखना त्याग दें। निर्भीक रहें। इन्द्रियों तथा मन पर नियन्त्रण रखें। आपमें वैराग्य का विकास होगा। आप ब्रह्मचर्य में पूर्णतया प्रतिष्ठित होंगे।

अखण्ड ब्रह्मचारी

यदि आप बारह वर्षों तक अखण्ड ब्रह्मचारी रह सकें तो आप किसी अन्य साधना के बिना ही तत्काल भगवत्साक्षात्कार कर लेंगे। आप जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर चुके हैं। यहाँ 'अखण्ड' शब्द पर ध्यान दीजिए।

वीर्य-शक्ति एक प्रभावशाली शक्ति है। वीर्य ब्रह्म ही है। जिस ब्रह्मचारी ने पूरे बारह वर्षों तक अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन किया है वह **'तत्त्वमसि'** महावाक्य के श्रवण करते ही निर्विकल्प-समाधि की अवस्था प्राप्त कर लेगा; क्योंकि उसका मन नितान्त शुद्ध, सबल तथा एकाग्र होगा।

अखण्ड ब्रह्मचारी, जिसके वीर्य का एक बूँद भी स्राव बारह वर्षों तक न हुआ हो, अप्रयास ही समाधि में प्रवेश कर जाता है। प्राण तथा मन उसके सर्वथा वश में होते हैं। बालब्रह्मचारी अखण्ड ब्रह्मचारी का पर्यायवाची शब्द है। अखण्ड

ब्रह्मचारी में प्रबल धारणा-शक्ति, स्मृति-शक्ति तथा विचार-शक्ति होती है। उससे मनन तथा निदिध्यासन के अभ्यास की आवश्यकता नहीं होती है। यदि वह एक बार भी महावाक्य सुनता है तो उसे तत्काल आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हो जाता है। उसकी बुद्धि निर्मल तथा समझ सुस्पष्ट होती है। अखण्ड ब्रह्मचारी बहुत ही दुर्लभ हैं; किन्तु कुछ अवश्य हैं। यदि आप उचित दिशा में प्रयास करें तो आप भी अखण्ड ब्रह्मचारी बन सकते हैं।

आपको प्रतिक्रिया के प्रति बहुत ही सावधान रहना पड़ेगा। जिन इन्द्रियों को कुछ महीनों अथवा एक-दो वर्षों तक नियन्त्रण में रखा है यदि आप सदा सावधान तथा सचेत न रहे तो वे विद्रोही बन जाती हैं। वे अवसर प्राप्त होते ही विद्रोह कर बैठती हैं और आपको बाहर घसीट लाती हैं। कुछ लोग, जो एक या दो वर्ष तक ब्रह्मचर्य-पालन करते हैं, अन्त में अधिक कामुक बन जाते हैं और अपनी (वीर्य-) शक्ति का अत्यधिक अपव्यय करते हैं। कुछ लोग असुधार्य दुराचारी तथा अपने जीवन-पोत को भङ्ग करने वाले भी हो जाते हैं।

जटा रखने तथा मस्तक और शरीर में भस्म लगाने से ही कोई अखण्ड ब्रह्मचारी नहीं बनता। जिस ब्रह्मचारी ने अपने स्थूल शरीर तथा इन्द्रियों को तो वश में कर लिया है; किन्तु निरन्तर कामुक विचारों में रमण करता रहता है, वह पक्का दम्भी है। उसका कभी भी विश्वास नहीं करना चाहिए। वह कभी भी सङ्कटजनक बन सकता है।

१६

विवेकहीन साहचर्य से खतरा

किसी भी व्यक्ति के साथ अतिपरिचय न कीजिए। **"अतिपरिचयादवज्ञा भवति"**—बहुत मेल-जोल से अवज्ञा बढ़ती है। मित्रों की संख्या न बढ़ायें। स्त्रियों के साथ मैत्री की अभियाचना न कीजिए। उनसे अत्यधिक परिचित भी न बनिए। स्त्रियों के साथ अतिपरिचय अन्ततः आपके विनाश में परिसमाप्त होगा। इस बात को कभी भी न भूलिए। आपके मित्र आपके वास्तविक शत्रु हैं।

प्रतिजाति के व्यक्तियों से न मिलें। माया ऐसा छिपे-छिपे अन्तर्धारा से कार्य करती है कि आप अपने वास्तविक पतन से अवगत ही न होंगे। बिना एक क्षण की सूचना के ही कामवासना अकस्मात् गम्भीर रूप धारण कर लेगी। आप

व्यभिचार करेंगे और तत्पश्चात् पश्चात्ताप करेंगे। तब आपके चरित्र तथा यश रष्ट हो जायेंगे। अपयश मृत्यु से भी बदतर है। इससे अधिक जघन्य अन्य कोई अपराध नहीं है। इसके लिए कोई प्रायश्चित्त नहीं है। अतः सतर्क रहें। सावधान रहें।

भगवान् दत्तात्रेय ने स्त्री की एक प्रज्वलित अग्निगुण्ड तथा पुरुष की एक घृत-पात्र से तुलना की है। जब अवरोक्त पूर्वोक्त के सम्पर्क में आता है तो वह नष्ट हो जाता है। अतः उसका परित्याग करें।

यदि आपको संयोगवश किसी धर्मशाला में रहना पड़े और आपके समीपवर्ती कमरे में अकेली स्त्री हो तो आप उस स्थान को तुरन्त छोड़ दीजिए। आपको पता नहीं कि वहाँ क्या घटेगा। आप तप तथा ध्यान के अभ्यास से चाहे कितने भी शक्तिशाली हों, पर खतरे के क्षेत्र को तत्काल छोड़ देना ही सदा उचित है। अपने को प्रलोभन के जोखिम में न डालें।

जब आप आध्यात्मिक पथ पर प्रारम्भिक अवस्था में हों तो अपने आत्मबल तथा पवित्रता की कभी परीक्षा न करें। आध्यात्मिक पथ के नवीन पथिक को यह दिखाने के लिए कि उसमें पाप और मलिनता का सामना करने का साहस है, कभी कुसङ्गति में नहीं पड़ना चाहिए। यह बड़ी भारी भूल होगी। आप महान् आपत्ति में पड़ जायेंगे और शीघ्र ही आपका अधःपतन हो जायेगा। छोटी-सी-अग्नि को रेत की ढेरी बड़ी आसानी से बुझा सकती है।

साधना का आरम्भावस्था में आपको महिलाओं से बहुत दूर रहना चाहिए। ब्रह्मचर्य के साँचे में पूर्णतः ढल जाने तथा उसमें प्रतिष्ठित होने के पश्चात् आप कुछ समय तक महिलाओं के साथ बहुत सावधानीपूर्वक हिल-मिल कर अपनी शक्ति की परीक्षा कर सकते हैं। उस समय भी यदि आपका मन अत्यधिक शुद्ध रहता है, यदि आपमें कामुक विचार नहीं हैं और यदि उपरति, शम तथा दम के अभ्यास के कारण मन निष्क्रिय हो गया है तो स्मरण रखिए कि आपने सच्चा आत्मबल प्राप्त कर लिया है और अपनी साधना में पर्याप्त प्रगति की है। अब आप सुरक्षित हैं। आप अपने को जितेन्द्रिय योगी समझ कर अपनी साधना बन्द मत कर दीजिए। यदि आप अपनी साधना बन्द कर देते हैं तो आपका निराशाजनक अधःपतन होगा।

योग-पथ में पर्याप्त प्रगति कर चुके उन्नत साधकों को भी बहुत सावधान रहना चाहिए। उन्हें स्त्रियों से मुक्त रूप से मिलना-जुलना नहीं चाहिए। उन्हें मूर्खतावश

यह नहीं समझना चाहिए कि वे योग में परम प्रवीण हो गये हैं। एक प्रख्यात महान् सन्त का पतन हो गया। वे स्त्रियों से मुक्त रूप से मिलते थे। उन्होंने स्त्रियों को अपनी शिष्याएँ बनाया जिन्हें वे अपने पैरों की मालिश करने देते थे। क्योंकि काम-शक्ति का उदात्तीकरण पूर्णतया नहीं किया गया था तथा वह ओज में रूपान्तरित नहीं की गयी थी, और क्योंकि कामुकता सूक्ष्म रूप से उनके मन में घात लगाये बैठी थी, वे कामवासना के शिकार बन गये तथा अपनी प्रतिष्ठा खो बैठे। कामवासना उनमें दमित थी और जब उपयुक्त अवसर आया तब इसने पुनः विकट रूप धारण कर लिया। उनमें प्रलोभन के प्रतिरोध करने की शक्ति अथवा मनोबल नहीं था।

एक अन्य महात्मा, जो अपने शिष्यों द्वारा अवतार माने जाते थे, योग-भ्रष्ट हो गये। वे भी महिलाओं से मुक्त रूप से मिलते-जुलते थे। वे एक गम्भीर भूल कर बैठे। वे कामुकता के शिकार बन गये। क्या ही खेदजनक दुर्भाग्य! साधक बड़ी कठिनाई से योग-रूपी निश्रयिणी पर आरोहण करते हैं और अपनी असावधानी तथा आध्यात्मिक अहङ्कार के कारण अनुद्धार्य रूप से सदा के लिए नष्ट हो जाते हैं।

मानसिक कल्पनाओं की विनाश-शीला

स्त्रियों की उपस्थिति अथवा उनका ध्यान संसार के विरत और आध्यात्मिक साधना में तत्पर तपस्वियों के मन में भी प्रायः अपवित्र विचार उत्पन्न कर देता है और इस प्रकार उनकी तपश्चर्या के फल से उन्हें वञ्चित कर देता है। दूसरे व्यक्तियों के मन, विशेषकर आध्यात्मिक साधकों के मन में सूक्ष्म कामवासना की उपस्थिति को जान लेना बड़ा कठिन है, तथापि दृष्टि, स्वर, भाव, गति, आचरण आदि से कुछ पता लग जाता है।

सावधानीपूर्वक ध्यान दें कि राजा भर्तृहरि अपने साधनाकाल में क्योंकर क्रन्दन करते हुए कहा था : "मेरे प्रभो! मैंने अपनी पत्नी त्यागी, अपना राज्य त्यागा। मैं कन्द, मूल तथा फल पर निर्वाह करता हूँ। भूमि मेरी शय्या है। नीला गगन मेरा वितान है। दिशाएं मेरे वस्त्र हैं। तथापि मेरी कामवासना मुझसे विदा नहीं हुई।" कामवासना की ऐसी शक्ति है।

जेरोम अपने संयम-सङ्घर्ष तथा काम की प्रबलता के विषय में कुमारी यूस्टोचियम को लिखते हैं : "जब मैं उस मरुस्थल में, उस सुविस्तृत निर्जन स्थान

में, जो सूर्य के आतप से झुलसता था तथा एकान्तवासियों को मात्र भयङ्कर आवास-स्थान प्रदान करता था, मैंने कितनी ही बार कल्पना की कि मैं रोम के आह्लादक पदार्थों के मध्य में हूँ। मैं वहाँ एकाकी था। मेरा अङ्ग एक निकम्मे ढीले कुरते से ढका हुआ था। मेरी त्वचा हवशी की त्वचा की भाँति काली पड़ गयी थी। प्रतिदिन मैं क्रन्दन करता तथा तड़पता था और यदि मैं इच्छा न रहते हुए भी निद्रा से अभिभूत हो जाता तो मेरा कृश शरीर नङ्गी भूमि पर पड़ जाता। मैं अपने भोजन तथा पेय के विषय में कुछ नहीं कहता, क्योंकि, मरुभूमि में रोगियों को भी शीतल जल के अतिरिक्त अन्य पेय उपलब्ध नहीं होता। अस्तु! मैं जिसने नरक के भय से अपने-आपको इस कारावास का दण्ड दे रखा था तथा जो बिच्छुओं तथा अन्य पशुओं का साथी था, प्रायः लड़कियों की टोली में होने की कल्पना करता था। उपवास से मेरा मुख पीतवर्ण हो चला था तथा मेरे शीत शरीर के अन्दर मेरा मन वासनाओं से जल रहा था। पहले से मृत प्रतीत होने वाले शरीर में कामाग्नि की ज्वाला धधकती रहती थी।" काम की ऐसी शक्ति है।

मन संसार का बीज है। मन ही इस संसार की सृष्टि करता है। मन से सर्वथा पृथक् कोई संसार नहीं है। सभी पदार्थों के चित्र मन में अन्तर्विष्ट हैं। जब मन पदार्थों को नहीं प्राप्त कर सकता है तो वह इन चित्रों के साथ खिलवाड़ करता है और बड़ी तवाही करता है। यदि आप निरन्तर भगवान् के चित्र का ध्यान करें तो पदार्थों के चित्र स्वयं नष्ट हो जायेंगे।

वर्जित फल—भगवान् द्वारा आध्यात्मिक साधक की परीक्षा

भगवान् साधक के आध्यात्मिक बल की परीक्षा लेने के लिए उसके सम्मुख कुछ प्रलोभन रखते हैं। वे प्रलोभनों पर विजय प्राप्त करने के लिए उसे बल भी प्रदान करते हैं। इस संसार में सर्वाधिक प्रबल प्रलोभन काम है। सभी सन्तों को प्रलोभनों के मार्ग से हो कर गुजरना पड़ा है। प्रलोभन लाभकारी होते हैं। उनसे लोग प्रशिक्षित तथा शक्तिशाली बनते हैं।

यहाँ तक कि बुद्ध की भी मानसिक शुद्धता की परीक्षा ली गयी थी। उन्हें प्रत्येक प्रकार के प्रलोभनों का सामना करना पड़ा था। उन्हें मार का सामना करना पड़ा था। उस समय ही, उससे पूर्व नहीं, गया में बोधि वृक्ष के नीचे उन्हें बुद्धत्व की प्राप्ति हुई। शैतान ने ईशु को विविध रूपों से प्रलोभन दिया। काम बहुत ही शक्तिशाली है। अनेक साधक परीक्षाओं में असफल रहते हैं। व्यक्ति को बहुत

सावधान रहना चाहिए। साधक को बहुत ही उच्चकोटि की मानसिक शुद्धता विकसित करना होगी। तभी वह परीक्षा में टिक सकता है। भगवान् साधकों की परीक्षा लेने के लिए उन्हें बहुत ही प्रतिकूल परिस्थितियों में रखेंगे। वे युवतियों द्वारा प्रलोभित किये जायेंगे। नाम तथा यश गृहस्थों को साधकों के निकट सम्पर्क में लाता है। स्त्रियाँ उनकी पूजा करना आरम्भ कर देती हैं। वे उनकी शिष्याएँ बन जाती हैं। धीरे-धीरे साधकों का घोर पतन होता है। इसके अनेक उदाहरण हैं। साधकों को अपने को छिपा कर रखना चाहिए तथा अति-सामान्य व्यक्ति-सा प्रतीत होना चाहिए। उन्हें अपने चमत्कार नहीं प्रदर्शित करने चाहिए।

यद्यपि ऋषि विश्वामित्र कठोर तपस्या में रत थे, जब वे उनका तप भङ्ग करने के लिए इन्द्र के द्वारा प्रेषित स्वर्ग की अप्सरा से मिले तो अपनी दुर्दान्त इन्द्रियों के कारण आत्मनियन्त्रण खो बैठें। यदि पत्ती, वायु तथा जल पर निर्वाह करने वाले विश्वामित्र तथा पराशर काम के शिकार बन गये तो उन सांसारिक लोगों की नियति क्या होगी जो मसालेदार भोजन पर निर्वाह कर रहे हैं? यदि वे अपनी कामवासना को नियन्त्रित कर सकते हैं तो विन्ध्याचल सागर में तैरने लगेगा तथा अग्नि अधोमुखी जलेगी।

नैसर्गिक कामप्रवृत्ति सर्वाधिक शक्तिशाली है। कामावेग दुर्जेय है। यह मन के अन्तर्भौम कक्ष में अपने को छिपाये रख सकता है और जब आप असावधान होंगे उस समय यह आप पर आक्रमण कर बैठेगा। यह दोगुनी शक्ति से आप पर आक्रमण करेगा। विश्वामित्र मेनका के शिकार बने। एक अन्य महान् ऋषि रम्भा के शिकार बने। जैमिनि एक मिथ्या महिला मासा से उत्तेजित हो उठे। एक प्रभावशाली ऋषि मछली को जोड़ा खाते देख कर उत्तेजित हो उठे थे। एक गृहस्थ साधक अपनी गुरुपत्नी को ही ले कर भागे। अनेक साधक इस गुप्त आवेग से, विश्वासघाती शत्रु से अवगत नहीं हैं। वे समझते हैं कि वे सर्वथा सुरक्षित तथा शुद्ध हैं। जब उनकी परीक्षा ली जाती है तो वे निराशाजनक शिकार बनते हैं। सदा एकाकी रहें, ध्यान करें तथा इस आवेग को मार डालें।

अज्ञानी तथा कामुक व्यक्ति के लिए कामिनी और काञ्चन भगवान् से अधिक उज्ज्वल चमकते हैं। माया शक्तिशाली है। आदम एक क्षण असावधान होने के कारण पतित हो गये। हौवा ने एक ही कामना के कारण प्रलोभित किया। वर्जित फल मानव-नेत्रों के सम्मुख तत्काल परिपक्व हो जाता है। एक स्थाणु ज्योतिर्मय देव की भाँति दृष्टिगोचर होता है और आपको अपने सम्मुख परम विनम्रता से

नतमस्तक होने के लिए प्रेरित करता है। माया तथा उसके जाल से सावधान रहें। स्वर्ण की शृङ्खला दो टुकड़ों में काटी जा सकती है; परन्तु माया का कौशेय जाल नहीं काटा जा सकता है। असावधानी का एक ही क्षण मोतियों की सम्पूर्ण मञ्जूषा को कामवासना तथा कामुकता के अन्दकारपूर्ण अगाध गर्त में उलट जाने के लिए पर्याप्त है।

सरोवर में शैवाल जो क्षण-भर के लिए विस्थापित हो जाता है, पलमात्र में अपनी आद्यस्थिति को पुनः धारण कर लेता है। इसी भाँति यदि ज्ञानी पुरुष एक क्षण भी असावधान रहें तो माया उन्हें भी आवृत कर लेती है। अतः आध्यात्मिक पथ में अनिद्र सतर्कता की आवश्यकता है। लोकोक्ति है : "कानी के ब्याह में नौ सौ जोखिम।" ज्ञान-रूपी फल को आपके खाने से पूर्व ही बन्दर-रूपी माया आपके हाथ से छीन ले जायेगी। यदि आप उसे निगल भी जायें तो वह आपके गले में अटक सकता है। अतः भूमा अथवा परमोच्च साक्षात्कार प्राप्त होने तक आपको सतत सतर्क तथा सावधान रहना होगा। धोखे से यह समझ कर कि आपने अपने लक्ष्य प्राप्त कर लिया है, आपको अपनी साधना बन्द नहीं करनी चाहिए।

जो व्यक्ति एकान्त में रहता है, वह प्रलोभनों तथा खतरे से अधिक अरक्षित होता है। उसे बहुत ही सतर्क तथा सावधान रहना होगा। उसके मन को कुछ भी कर बैठने का लोभ आयेगा; क्योंकि वहाँ उसके दुष्कृत्यों को देखने वाला कोई भी नहीं होता। सभी दमित कुवृत्तियाँ उसके ऊपर दोगुनी शक्ति से आक्रमण करने के अवसर की प्रतीक्षा करती रहेंगे। वह ठीक उस व्यक्ति की तरह है जो एक बड़े थैले में व्याघ्र, सर्प तथा रीछ के साथ डाल दिया गया हो। क्रोध, काम तथा लोभ-रूपी शत्रु आपके अनजाने ही आप पर अधिकार कर लेंगे। जब आप अध्यात्म-पथ पर अकेले चलते हैं तब वे उन दस्युओं की भाँति आप पर आक्रमण करेंगे जो सघन वन में एकाकी पथिक पर आक्रमण करते हैं। अतः सदा ज्ञानियों की सङ्गति में रहिए। पथभ्रष्ट न बनिए।

१७

कामुक दृष्टि को बन्द करें

एक सज्जन हैं। उन्होंने धूमपान तथा मद्यपान त्याग दिया है। वे विवाहित होते हुए भी अब ब्रह्मचर्य का अभ्यास करना चाहते हैं। उनकी पत्नी को इसमें कोई आपत्ति नहीं है; किन्तु वे स्वयं इस संयम को दुस्साध्य अनुभव करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें विशेष कठिनाई चक्षुरिन्द्रिय के नियन्त्रण में है। उन्होंने हाल में मुझसे कहा था—"गली मेरी प्रमुख शत्रु है।" इसका अर्थ यह हुआ कि उनके नेत्र सुवेषित महिलाओं से आकर्षित होते हैं।

एक अन्य साधक कहता है : "जब मैं प्राणायाम, जप तथा ध्यान का सशक्त रूप से अभ्यास करता था तो अर्धनग्न युवती महिलाओं को देखने पर भी मेरा मन प्रदूषित नही होता था; किन्तु जब मैंने अभ्यास करना त्याग दिया तो मैं अपने नेत्रों को नियन्त्रित नहीं कर पाता था तथा गलियों में सुवेषित महिलाओं तथा चलचित्र-गृहों के सामने चिपकाये अर्धनग्न चित्रों से मैं आकर्षित हो जाता था। समुद्र-तट तथा माल रोड मेरे शत्रु हैं।"

ब्रह्मचर्य की साधना करने वाले व्यक्तियों को मथुनिक क्रिया के देखने के आवेग को नियन्त्रित करना चाहिए। इस प्रकार का आवेग बड़ा खतरनाक है; क्योंकि यह कुतूहल तथा कामवासना उद्दीप्त करता है। वासनाएँ कामुक दृष्टि से विकसित होती हैं।

स्त्री की ओर देखने से उससे वार्तालाप करने की कामना उत्पन्न होगी। स्त्री के साथ वार्तालाप करने से उसको स्पर्श करने की कामना जगेगी। अन्ततः आपका मन अपवित्र हो जायेगा और आप काम के शिकार बन जायेंगे। अतः स्त्री की ओर कदापि न देखिए। स्त्री के साथ एकान्त में कभी वार्तालाप न कीजिए। किसी स्त्री के साथ परिचय न बढ़ाइए।

दृष्टि के पृष्ठभाग में स्थित भावना पर ध्यान दें

सौन्दर्यमय पदार्थ को देखने में कोई हानि नहीं है; किन्तु आपको दिव्य भाव विकसित करना होगा। आपको यह अनुभव करना होगा कि प्रत्येक वस्तु भगवान् की अभिव्यक्ति है। अपने विचारों तथा भावनाओं को शुद्ध बनाइए।

शुद्धता ब्रह्म है। आप तत्त्वतः शुद्ध हैं। हे राम, आप शुद्धता के मूर्तरूप हैं। **'शुद्धोऽहम्, शुद्धोऽहम्'**—'मैं शुद्ध हूँ, मैं शुद्ध हूँ'—सूत्र को मानसिक रूप से बार-बार दोहराइए तथा अपनी मूल, अद्वितीय शुद्धता की स्थिति को प्राप्त कीजिए।

यद्यपि आपकी माता अथवा बहन रूपवती हैं, सुवेषित हैं तथा आभूषणों और पुष्पों से अलंकृत हैं; पर जब आप उन्हें देखते हैं तो आपकी दृष्टि कामुक नहीं होती। आप उन्हें स्नेह तथा शुद्ध प्रेम से देखते हैं। यह शुद्ध भावना है। वहाँ कामुक भाव नहीं है। आपको अन्य स्त्रियों को देखते समय भी ऐसा ही शुद्ध प्रेम अथवा भावना का विकास करना होगा। यदि दृष्टि के पीछे अशुद्धता है तो यह व्यभिचार के तुल्य है। कामातुर हृदय से स्त्री की ओर देखना यौन-सुख भोग है। यह मैथुन का एक रूप है। इसी कारण से प्रभु यीशु कहते हैं : "यदि आपने किसी स्त्री पर कुदृष्टि डाली तो आप अपने मन में उससे व्यभिचार कर चुके।"

किसी स्त्री को देखने में कोई हानि नहीं है; परन्तु आपकी दृष्टि नितान्त पवित्र होनी चाहिए। आपमें आत्मभाव होना चाहिए। जब आप किसी युवती महिला को देखें तो अपने मन में ऐसा भाव लायें : "हे माता, आपको साष्टांग प्रणाम ! आप काली माता की प्रतिकृति अथवा अभिव्यक्ति हैं। मेरी परीक्षा न लें। मुझे प्रलोभन न दीजिए। अब मैं माया तथा उसकी सृष्टि का मर्म समझ गया हूँ। इन रूपों का किसने सृजन किया है? इन नाम-रूपों के पीछे एक सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापी तथा परम करुणाशील स्रष्टा है। यह सब सौन्दर्य क्षीयमाण तथा मिथ्या है। भगवान् ही सौन्दर्यों का सौन्दर्य है। वह अक्षीयमाण सौन्दर्य का मूर्तरूप है। वह सौन्दर्य का मूलस्रोत है। मुझे ध्यान द्वारा इस सौन्दर्यों के सौन्दर्य का साक्षात्कार करने दें।" जब आप कोई मोहक रूप देखें तो आपको उस रूप के स्रष्टा के स्मरण द्वारा उसके प्रति भक्ति, श्लाघा तथा श्रद्धायुक्त विस्मय की भावनाओं का संवर्धन करना चाहिए। तब आप प्रलुब्ध नहीं होंगे। यदि आप वेदान्त के अध्येता हैं तो विचार तथा अनुभव करें—प्रत्येक पदार्थ आत्मा ही है। नाम तथा रूप भ्रामक हैं। वे मायिक चित्र हैं। उनका आत्मा से पृथक् कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है।

यदि व्यक्ति को स्त्रियों को नहीं देखना चाहिए तो प्राचीन काल के ऋषि महिलाओं को आत्म-ज्ञान कैसे प्रदान करते थे? वे सेवा के लिए उन्हें निरन्तर अपने साथ क्यों रखते थे?

'स्त्री के चित्र को भी न देखें', यह आदेश कामुक व्यक्तियों के लिए है जिनमें आत्मनियन्त्रण नहीं होता। याज्ञवल्क्य ने अपनी पत्नी मैत्रेयी को आत्मज्ञान प्रदान किया। रैक्य ने अपनी सेवा के लिए राजा जानश्रुति की पुत्री को अपने पास रखा। वह नैष्ठिक ब्रह्मचारी थे।

जीवन्मुक्त के नेत्र भी स्वभाववश विषयों की ओर जाते हैं; किन्तु यदि वह चाहे तो उन्हें वहाँ से पूर्णतः हटा सकता है तथा उन्हें रिक्त-कोटर बना सकता है। जब वह किसी स्त्री को देखता है तब वह उसे अपने से बाहर नहीं देखता है। वह समस्त विश्व को अपने अन्दर देखता है। वह अनुभव करता है कि स्त्री उसकी आत्मा है। उसमें काम-वासना नहीं होती। उसके मन में कोई कुविचार नहीं होता है। उसके प्रति उसमें यौनाकर्षण नहीं होता है। परन्तु इसके विपरीत, सांसारिक व्यक्ति स्त्री को अपने से बाहर देखता है। वह अपने मन में कामुक विचार रखता है। उसमें आत्म-भाव नहीं है। वह उसके प्रति आकर्षित है। ज्ञानी तथा सांसारिक व्यक्ति की दृष्टि में यही अन्तर है। स्त्री की ओर देखने में कोई हानि नहीं है; किन्तु आपको अपने मन में दुर्विचार नहीं रखना चाहिए।

किसी रूपवती स्त्री को देखने में कोई हानि नहीं है। आप जैसे पाटल-पुष्प के सौन्दर्य की, सागर के सौन्दर्य की, तारों के सौन्दर्य की अथवा किसी अन्य प्राकृतिक दृश्य की मन में प्रशंसा करते हैं, उसी प्रकार एक किशोरी के सौन्दर्य की प्रशंसा कर सकते हैं। ऐसा सोचें कि आपकी पत्नी का सौन्दर्य प्रकृति तथा प्रकृति के स्वामी ईश्वर का है। आप जब कोई महिला देखें तो अपने मन से प्रश्न करें : "इस सुन्दर रूप का स्रष्टा कौन है?" तत्काल आपके मन में विस्मय का भाव, श्लाघा का भाव तथा भक्ति का भाव उदित होगा। जब आप किसी स्त्री पर कामुक, अपवित्र दृष्टि निक्षेप करते हैं, तभी आप पाप करते हैं। आप मन में व्यभिचार करते हैं। जब आप कामुक विचार मन में रखते हैं तभी बन्धन तथा विपत्ति प्रवेश करते हैं।

आप महिलाओं के मुख में जो सौन्दर्य देखते हैं, वह प्रभु का सौन्दर्य है। इस रीति से आप श्लाघा का भाव रख सकते हैं। ऐसा करने में कोई हानि नहीं है।

स्त्री सौन्दर्य का प्रतीक है। वह शक्ति की प्रतीक है। वह मौन भाषा में आपसे कहती है—"मैं आदि शक्ति की प्रतिनिधि हूँ मुझमें भगवान् के दर्शन करो। मुझमें काली माँ के दर्शन करो। मुझमें तथा मेरे माध्यम से भगवत्साक्षात्कार करो। भगवान् की सौन्दर्य के मूर्त-रूप में पूजा करो। शक्ति के मूर्त-रूप में उस

(भगवान्)- की आराधना करो। उनकी सर्वशक्तिमत्ता को पहचानों।" बार-बार चिन्तन कीजिए कि मुख का सौन्दर्य प्रभु का सौन्दर्य है। इससे स्त्री को देखने पर आपमें धार्मिक भाव उदित होगा। गीता के दशम अध्याय विभूतियोग का बार-बार स्वाध्याय करें।

अशुद्ध विचारों का प्रतिकार क्योंकर करें

नियमित जप तथा ध्यान से आपमें शुद्धता का विकास होने पर स्त्रियों को देखने से उठने वाले कुविचार शनैः-शनैः लुप्त हो जायेंगे। पुराने बुरे संस्कारों को नष्ट करने तथा मानसिक उद्योग-शाला के पुनःकल्पन में समय लगता है। मन में बार-बार प्रतिकारक शुद्ध विचार लायें। भगवान् की मूर्ति का सम्पोषण करें। यौन-विचार की उपेक्षा करके स्त्रियों में आत्मा के अनुभव करने का पुनः-पुनः प्रयास कर तथा शरीर जिन अवयवों से संघटित है उनका विश्लेषण करके अपने मन में जुगुप्सा उत्पन्न करें।

जब-जब मन मनोहर स्त्री की ओर कामुक विचार से भागे उस समय मन में अस्थि, मांस, मल, मूत्र तथा स्वेद—जिनसे स्त्री की रचना हुई है—का निश्चित सुस्पष्ट चित्र रखें। इससे मन में जुगुप्सा तथा वैराग्य उत्पन्न होंगे। फिर आप कभी स्त्री पर व्यभिचारी दृष्टि से देखने का पाप नहीं करेंगे। निस्सन्देह, इसमें कुछ समय लगता है। महिलाएँ भी पूर्वोक्त विधि का अभ्यास कर सकती हैं तथा ठीक उसी प्रकार से पुरुषों का चित्र अपने मन में रख सकती हैं।

आपको यौन-भाव से मुक्त होने के लिए अपने मन में जुगुप्सा का ही नहीं अपितु भय का भी विकास करना चाहिए। क्या जब आपके सम्मुख कोई नाग आ जाता है तब क्या आप अत्यधिक भयभीत नहीं हो उठते हैं? आपके मन की यही स्थिति उसमें कामुक विचारों के प्रवेश करने पर होनी चाहिए। तभी यौनाकर्षण शनैः-शनैः समाप्त होगा।

यदि मन कामुक भाव से स्त्री की ओर भागता है तो आत्मदण्ड दीजिए। रात्रि को भोजन त्याग दीजिए। बीस माला अधिक जप कीजिए। सदा कौपीन अथवा लंगोटी पहनिए।

स्त्री की ओर कुदृष्टि से न देखें। यदि वह वृद्धा है तो अपनी माता, यदि किशोरी है तो अपनी बहन और यदि अल्पव्यस्क है तो अपनी बच्ची मानें। सभी स्त्रियाँ आपकी माताएँ तथा बहन हैं, इस भाव को विकसित करने में आप

शताधिक बार असफल हो सकते हैं। कोई बात नहीं। अपने अभ्यास में दृढ़ निश्चय से लगे रहें। अन्ततः आप अवश्यमेव सफल होंगे।

सड़क पर चलते समय बन्दर की भाँति इधर-उधर न देखें। अपने दाहिने पैर के अँगूठे को देखें तथा मन्द गति से गम्भीर मुद्रा से चलें अथवा भूमि को देख कर चलें। यह ब्रह्मचर्य के पालन में बहुत सहायक है। आप नासाग्र-दृष्टि रख कर भी चल सकते हैं।

हे अमरत्व की सन्तान! आप कामुक नेत्रों से चिरकाल तक भ्रमण कर चुके हैं। विवेक-रूपी अंजन तथा विचार-रूपी रंग लगाइए। आपको नवीन उदार दृष्टि प्राप्त होगी। समग्र विश्व आपको आनन्द का घनीभूत पुंज प्रतीत होगा। आपको कहीं अशुभ दिखायी नहीं पड़ेगा, असुन्दरता दिखायी नहीं पड़ेगी।

तथापि इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है कि काम एक दुर्जेय प्रभावशाली शक्ति है। किसी ने राजा युधिष्ठिर से प्रश्न किया "युधिष्ठिर, क्या जब आप अपनी माता कुन्ती को देखते हैं उस समय आपकी दृष्टि सर्वथा शुद्ध होती है?" युधिष्ठिर ने उत्तर दिया : "मैं कह नहीं सकता कि मेरी दृष्टि सम्पूर्णतः विशुद्ध है।" काम की ऐसी शक्ति है।

आप बाह्यतः कह सकते हैं—"मैं उन्हें अपनी माता मानता हूँ। मैं उन्हें अपनी बहन समझता हूँ।" यद्यपि आप धर्म-भय अथवा लोक-लज्जा के कारण बाह्यतः कुछ न करें; किन्तु आप मन से वह नहीं रहे जो आपको होना चाहिए। मन गलत दिशा में भागेगा। वह मौन रूप से तबाही कर रहा होगा। आपके मन में नाना प्रकार के बुरे विचार तथा कामनाएँ उठेंगी। कामना अथवा विचार कर्म से अधिक हैं। यदि आपकी चुपचाप परीक्षा ली गयी तो आप निराशाजनक रूप से असफल रहेंगे। आप शारीरिक नियन्त्रण भी नहीं रख पायेंगे।

तथापि, ऐसा कुछ भी नहीं है जिसे साधक अपना मन लगाने पर प्राप्त न कर सके। कठिनाई जितनी अधिक होगी, सफलता का गौरव भी उतना ही अधिक होगा। प्रयास करें, प्रयास करें, पुनः प्रयास करें। कुछ समय तक स्त्रियों की ओर न देखने के लिए अपने को प्रशिक्षित करें। यदि ऐसा कर सकने में आप असमर्थ हों तथा अपनी दृष्टि को कामुक उद्देश्य से स्त्री की ओर भटकती हुई पायें तो आपके मन में शव अथवा नर-कंकाल अथवा झुर्रीदार रुग्ण वृद्धा का चित्र निर्मित करें तथा जब तब आप जुगुप्सा से पूरित न हो जायें तब तक उसे बनाये रखें। यह आपको अन्ततः काम को दमन करने में सफल होने योग्य बनायेगा।

इसके साथ ही, देवी के चरण-कमलों की शरण लें। काम के आक्रमण का सामना करने तथा उसे पराजित करने की शक्ति के लिए उनसे निरन्तर प्रार्थना करें। प्रत्येक स्त्री को साक्षात् श्रीदेवी समझें और देखते ही **'ॐ श्रीदुर्गाय नमः'** का जप करते हुए उन्हें मानसिक साष्टांग प्रणाम करें। उपर्युक्त प्रकार की सतर्क तथा अनवरत साधना द्वारा आप शनैः-शनै इस शक्तिशाली शत्रु का उन्मूलन कर सकते हैं।

१८

काम-वासना के नियन्त्रण में आहार की भूमिका

ब्रह्मचर्य के पालन में आहार की प्रमुख भूमिका है। आहार की शुद्धि से मन की शुद्धि होती है। वह शक्ति जो शरीर तथा मन को संयोजित करती है, उस भोजन में विद्यमान् रहती है जो हम खाते हैं। विविध प्रकार के भोजन मन पर भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रभाव डालते हैं। कुछ इस प्रकार के आहार हैं जो मन तथा शरीर को बहुत बलवान् तथा सुस्थिर बनाते हैं। अतः यह नितान्त आवश्यक है कि हम शुद्ध तथा सात्त्विक भोजन करें। आहार का ब्रह्मचर्य के साथ बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि जो भोजन हम करते हैं उसकी शुद्धि पर उचित ध्यान दिया जाये तो ब्रह्मचर्य-पालन सुकर हो जाता है।

मस्तिष्क-कोशिकाओं, संवेग तथा काम-वासना पर खाद्य-पदार्थों का प्रभाव विलक्षण होता है। मस्तिष्क में विविध कक्ष हैं और प्रत्येक खाद्य-पदार्थ प्रत्येक कक्ष तथा सामान्य शरीर पर अपना निजी प्रभाव उत्पन्न करता है। गौरैये का अवलेह कामोत्तेजक प्रभाव उत्पन्न करता है। यह सीधे जननांग को उत्तेजित करता है। लहसुन, प्याज, मांस, मछली तथा अण्डे कामवासना को उत्तेजित करते हैं। ध्यान दें कि हाथी तथा गाय जो घास खा कर जीवन व्यतीत करते हैं, कैसे सौम्य तथा शान्तिप्रिय होते हैं तथा व्याघ्र और अन्य मांसभक्षी पशु, जो मांस खा कर जीते हैं, कैसे उग्र तथा क्रूर होते हैं। ब्रह्मचर्य के पालन में सहायक खाद्य-पदार्थों के चयन में आपकी नैसर्गिक प्रवृत्ति अथवा अन्तर्वाणी आपका पथ-प्रदर्शन करेंगी। आप कुछ वयोवृद्ध तथा अनुभवी व्यक्तियों से भी परामर्श कर सकते हैं।

सात्त्विक आहार

चरु, हविष्यान्न, दूध, गेहूँ, जौ, रोटी, घी, मक्खन, सोंठ, मूँग की दाल, आलू, खजूर, केला, दही, बादाम तथा फल सात्त्विक खाद्य-पदार्थ हैं। चरु उबाले हुए सफेद चावल, घी, चीनी तथा दूध का मिश्रण है। हविष्यान्न भी इसी प्रकार का पक्वान्न है। यह आध्यात्मिक साधकों के लिए बहुत ही लाभप्रद है। दूध स्वयं एक पूर्ण आहार है; क्योंकि इसमें विविध पोषक तत्त्व सुसन्तुलित अनुपात में अन्तर्विष्ट हैं। यह योगियों तथा ब्रह्मचारियों के लिए एक आदर्श आहार है। फल अत्यधिक शक्तिशाली होते हैं। केला, अंगूर, मीठे सन्तरे, सेब, अनार तथा आम स्वास्थ्यवर्द्धक तथा पुष्टिकारक होते हैं।

मेवे यथा मुनक्का, किशमिश, छुहारा तथा अंजीर; मीठे ताजे फल यथा केला, आम, सपोटा, तरबूज, कागजी नींबू, अनन्नास, सेब, कपित्थ (कठबेल) तथा मीठे अनार; चीनी तथा मिसरी, मधु, साबूदाना, अरारोट, गाय का दूध, मक्खन तथा घी, कच्चे नारियल का पानी, नारियल, बादाम, पिस्ता, तूर की दाल, रागी, जौ, मक्का, गेहूँ, लाल धान का चावल जिसकी भूसी केवल अंशतः अलग की गयी हो तथा सुगन्धमय अथवा स्वादिष्ट चावल तथा इन धान्यों में से किसी से बने हुए सभी खाद्य-पदार्थ तथा सफेद कद्दू (पेठा) ब्रह्मचर्य-पालन के लिए सात्त्विक आहार हैं।

निषिद्ध आहार

अत्यधिक नमक-मिर्च मिला कर बघारा हुआ व्यंजन, उष्ण सालन चटनी, लाल मिर्च, मांस, मछली, अण्डे, तम्बाकू, मदिरा, खट्टे पदार्थ, सभी प्रकार के तेल, लहसुन, प्याज, कड़ुवे पदार्थ, खट्टा दही, बासी भोजन, अम्ल, कषाय, तिक्त पदार्थ, भुने हुए पदार्थ, अतिपक्व तथा अपक्व फल, भारी शाक तथा नमक किंचित् भी लाभदायक नहीं हैं। प्याज तथा लहसुन तो मांस से भी अधिक बुरे हैं।

नमक सबसे बड़ा शत्रु है। अत्यधिक नमक काम-वासना को उत्तेजित करता है। यदि आप अलग से नमक का सेवन न भी करें तो भी शरीर अन्य खाद्य-पदार्थों से आवश्यक मात्रा में नमक प्राप्त कर लेगा। सभी खाद्य-पदार्थों में नमक होता है। नमक का त्याग जिह्वा को और उसके द्वारा मन तथा अन्य सभी इन्द्रियों को नियन्त्रित करने में आपकी सहायता करता है।

कच्ची तथा तली हुई सभी प्रकार की फलियाँ तथा सेमें, उड़द, बंग चना, कुलथी, अंकुरित धान्य, सरसों, सभी प्रकार की मिर्चें, हींग, मसूर, बैंगन, भिण्डी,

ककड़ी, श्वेत तथा लाल दोनों प्रकार का मालाबारी धतूरा, बाँस के प्ररोह, पपीता, सहिजन, सब प्रकार के कद्दू तथा पेठा, चिचिण्डा तथा कुम्हड़ा; मूली, गन्दना, सभी प्रकार के कुकुरमुत्ते, तेल अथवा घी में तले हुए पदार्थ, सभी प्रकार के अचार, भुने हुए चावल, तिल, चाय, काफी, कोको, अन्य सभी प्रकार के शाक-भाजी, पत्ते, कन्द-मूल, फल तथा खाद्य-पदार्थ जो वायु अथवा अपच, दुःख पीड़ा अथवा कोष्टबद्धता अथवा अन्य रोग उत्पन्न करने वाले हों; पेष्ट्री (पिष्ठान्न), रूखे तथा दाहकारक आहार, कड़ुवा, खट्टा, लवणयुक्त अत्युष्ण तथा तीक्ष्ण खाद्य-पदार्थ; तम्बाकू तथा उससे बने पदार्थ तथा पेय जिनमें मदिरा अथवा स्वापक द्रव्य यथा अफीम और भाँग हों, भोजन के वे पदार्थ जो बासी हों अथवा चूल्हे से हटाये जाने के कारण ठण्डे हो गये हों अथवा जिनका सहज स्वाद, सुगन्ध, रंग तथा रूप जाता रहा हो अथवा जो अन्य व्यक्तियों, पशुओं, पक्षियों तथा कीटों के खाने के पश्चात् अवशिष्ट रहा हो अथवा जिनमें धूलि, बाल, घास-फूस अथवा अन्य कूड़ा-करकट पड़ा हो, तथा भैंस, बकरी तथा भेड़ का दूध—इनसे बचना चाहिए; क्योंकि ये अपने गुण के अनुसार या तो राजसिक या तामसिक हैं। नीम्बू-रस, खनिज नमक (सैंधव), अदरक तथा श्वेत मिर्च का उपयोग परिमित मात्रा में किया जा सकता है।

मिताहार

मिताहार आहार पर संयम है। आधा पेट-भर पुष्टिकर सात्त्विक भोजन कीजिए। चौथाई भाग शुद्ध जल से भरिए। शेष भाग को रिक्त रहने दीजिए। यह मिताहार है। ब्रह्मचारियों को सदा मिताहार ही लेना चाहिए। उन्हें अपने रात्रिकालीन भोजन के विषय में बहुत ही सावधान रहना चाहिए। उन्हें रात्रि में कभी भी पेट पर अति-भार नहीं डालना चाहिए। अति-भार डालना ही स्वप्नदोष का अपरोक्ष कारण है।

पेटू व्यक्ति ब्रह्मचारी बनने का कभी स्वप्न भी नहीं देख सकता है। यदि आप काम-वासना पर नियन्त्रण करना चाहते हैं, यदि आप ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करना चाहते हैं तो इसके लिए जिह्वा का नियन्त्रण एक अनिवार्य शर्त है। तब काम-वासना पर नियन्त्रण रखना सुकर होगा। जिह्वा तथा जननेन्द्रिय में घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिह्वा एक ज्ञानेन्द्रिय है। इसकी उत्पत्ति जल-तन्मात्रा के सात्त्विक अंश से हुई है। जननेन्द्रिय एक कर्मेन्द्रिय है। इसकी उत्पत्ति जल-तन्मात्रा के राजसिक अंश से हुई है। ये सहोदर इन्द्रियाँ हैं; क्योंकि इनका स्रोत एक ही है।

यदि राजसिक भोजन से जिह्वा उद्दीप्त होती है तो तत्काल ही जननेन्द्रिय भी उत्तेजित हो उठती है। आहार में चयन तथा प्रतिबन्ध होना चाहिए। ब्रह्मचारी का भोजन सादा, मृदु, मसाला-रहित, अनुत्तेजक तथा अनुद्दीपक होना चाहिए। भोजन में संयम परमावश्यक है। पेट को ठूस-ठूस कर भरना अत्यन्त हानिकारक है। फल अत्यन्त लाभकारक होते हैं। आपको भोजन केवल उसी समय पर करना चाहिए जब आप वास्तव में क्षुधित हों। पेट कभी-कभी आपको धोखा देगा। आपको झूठी भूख लगी होगी। जब आप खाने के लिए बैठेंगे तो आपको न बुभुक्षा होगी और न रुचि ही। आहार पर प्रतिबन्ध तथा उपवास विषयी मन को नियन्त्रित करने तथा ब्रह्मचर्य की उपलब्धि में बहुत ही उपयोगी सहायक हैं। आपको उनकी अवहेलना नहीं करनी चाहिए और न किसी भी कारण से उन्हें महत्त्वहीन ही समझना चाहिए।

उपवास—एक अघमर्षण कृत्य

उपवास काम-वासना पर नियन्त्रण रखता है। उपवास कामोत्तेजना को नष्ट करता है। यह मनोवेग को शान्त कर देता है। यह इन्द्रियों को भी नियन्त्रित करता है। कामुक युवकों तथा युवतियों को कभी-कभी उपवास का आश्रय लेना चाहिए। यह अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होगा। उपवास एक महान् तप है। यह मन को शुद्ध बनाता है। यह बहुत बड़ी पाप-राशि को नष्ट कर डालता है। शास्त्रों ने मन के शुद्धिकरण हेतु चान्द्रायण-व्रत, कृच्छ्र-व्रत, एकादशी-व्रत, प्रदोष-व्रत विहित किये हैं। उपवास विशेषकर जिह्वा को नियन्त्रित करता है जो आपका भयंकर शत्रु है। जब आप उपवास करें तो मन को सुस्वादु भोजन का चिन्तन न करने दें; क्योंकि उस स्थिति में आपको अधिक लाभ प्राप्त नहीं होगा। उपवास श्वसन, रक्तवह, पाचक तथा मूत्रीय तन्त्रों में आमूलचूल सुधार लाता है। यह शरीर की सभी अशुद्धताओं तथा सभी प्रकार के विषों को नष्ट करता है। यह मूत्राम्ल-अवसाद (जमाव) को निकाल बाहर करता है। जिस भाँति अशुद्ध स्वर्ण मूषे (घरिया) में बारम्बार पिघलाने से शुद्ध बन जाता है वैसे ही अशुद्ध मन बारम्बार के उपवास से अधिकाधिक शुद्धतर बनता जाता है। हृष्ट-पुष्ट ब्रह्मचारियों को जब कभी काम-वासना पीड़ित करे तब उन्हें उपवास रखना चाहिए। उपवास-काल में आप अच्छा ध्यान कर सकेंगे; क्योंकि उस समय मन शान्त रहता है। उपवास रखने का मुख्य उद्देश्य इस अवधि में कठोर ध्यानाभ्यास करना है; क्योंकि सभी इन्द्रियाँ शान्त होती हैं। आपको सभी इन्द्रियों

का प्रत्याहार कर मन को भगवान् में स्थिर करना चाहिए। आपका पथ-प्रदर्शक करने तथा मार्ग पर प्रकाश डालने के लिए भगवान् से प्रार्थना करें। भावपूर्वक कहें : "हे भगवन्! प्रचोदयात्, प्रचोदयात्! मेरा पथ-प्रदर्शन कीजिए। मेरा पथ-प्रदर्शन कीजिए! त्राहि, त्राहि! मेरी रक्षा कीजिए। मेरी रक्षा कीजिए। हे मेरे प्रभो! मैं आपका हूँ।" आपको शुचिता, प्रकाश, शक्ति तथा ज्ञान प्राप्त होंगे। उपवास योग के दश नियमों में से एक है।

अत्यधिक उपवास न करें। इससे दुर्बलता उत्पन्न होगी : अपनी सहज बुद्धि का उपयोग करें। जो पूरा उपवास नहीं रख सकते वे नौ अथवा बारह घण्टे तक उपवास कर सकते हैं तथा संन्ध्यासमय अथवा रात्रि में दूध तथा फल का सेवन कर सकते हैं।

उपवास-काल में आन्तरांग यथा आमाशय, यकृत तथा अग्नाशय विश्राम करते हैं। भोगवादी, पेटू तथा उदर-परायण व्यक्ति इन अंगों को कुछ क्षण भी विश्राम नहीं करने देते। अतः ये अंग शीघ्र रुग्ण हो जाते हैं। मधुमेह, मूत्र में श्वेतक आने के रोग, अजीर्ण तथा यकृत-शोथ—ये सभी अति-भोजन करने के कारण होते हैं। अन्ततः मनुष्य को इस भूलोक में स्वल्प भोजन की ही आवश्यकता होती है। इस संसार में नब्बे प्रतिशत लोग शरीर के लिए जितना नितान्त आवश्यक है, उससे अधिक भोजन करते हैं। अति-भोजन करना उनका स्वभाव बन गया है। सभी रोग अति-भोजन से ही प्रारम्भ होते हैं। उत्तम स्वास्थ्य बनाये रखने, आन्तरांगों को विश्राम देने तथा ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए समय-समय पर पूर्ण उपवास रखना सभी के लिए अभीष्ट है। जिन रोगों को एलोपैथी (विषम चिकित्सा) तथा होमियोपैथी (सम चिकित्सा) के डाक्टरों ने असाध्य घोषित कर रखा है वे उपवास से अभिसाधित हो जाते हैं। उपवास इच्छा-शक्ति को विकसित करता है। यह सहन-शक्ति की वृद्धि करता है। हिन्दुओं के महान् विधि-निर्माता मनु ने अपने स्मृति-ग्रन्थ में पंच-महापातकों के अपसारण के उपाय के रूप में उपवास को भी विहित किया है।

उपवास के दिनों में अपनी प्रकृति तथा अभिरुचि के अनुसार मन्दोष्ण अथवा शीतल जल अधिक मात्रा में पीना अच्छा है। यह वृक्क का प्रक्षालन करेगा तथा शरीर में वर्तमान विष तथा सभी प्रकार की अशुद्धता निकाल देगा। हठयोग में इसको घट-शुद्धि अथवा स्थूल शरीर का शोध कहते हैं। आप जल के सात आधा छोटा चम्मचभर सोडा बाइकार्बोनेट मिला सकते हैं। जो दो या तीन दिन

का उपवास करते हैं उनकी पारणा ठोस पदार्थ से नहीं होनी चाहिए। उन्हें फल का रस—मीठे सन्तरे का रस अथवा अनार का रस—लेना चाहिए। उन्हें रस को धीरे-धीरे छोटे-छोटे घूटों से पीना चाहिए। आप उपवास-काल में प्रतिदिन वस्तिक्रिया कर सकते हैं।

प्रारम्भ में एक दिन का उपवास करें। तत्पश्चात् अपनी शक्ति तथा क्षमता के अनुसार दिनों की संख्या क्रमशः बढ़ायें। प्रारम्भ में आपको किञ्चित् निर्बलता अनुभव होगी। प्रथम दिवस बहुत उबाने वाला होगा। द्वितीय अथवा तृतीय दिवस को आप वास्तविक आनन्द अनुभव करेंगे। आपका शरीर अत्यन्त हलका हो जायेगा। आप उपवास के दिनों में पूर्वापेक्षा अधिक मानसिक कार्य सम्पन्न कर सकेंगे। उपवास रखना जिनका स्वभाव बन गया है, वे आनन्दित होंगे। मन प्रथम दिवस आपको कुछ-न-कुछ खाने के लिए विविध प्रकार के प्रलोभन देगा। अडिग बने रहें। निर्भीक रहें। मन जब कभी फुफकारे अथवा फण उठाये, तत्काल उसका निग्रह करें। उपवास-काल में गायत्री अथवा किसी मन्त्र का अधिक जप करें। स्वास्थ्य की दृष्टि से उपवास शारीरिक क्रिया की अपेक्षा आध्यात्मिक क्रिया अधिक है। आपको उपवास के दिनों में उपयोग उच्चतर आध्यात्मिक उद्देश्यों तथा भगवच्चिन्तन के लिए करना होगा। भगवद्विचार को हृदय में स्थान दें। जीवन की समस्याओं यथा इस ब्रह्माण्ड के कारणों की गहराई में पैठें। जिज्ञासा करें—"मैं कौन हूँ? यह आत्मा अथवा ब्रह्म क्या है? भगवद्ज्ञान प्राप्त करने के कौन-से साधन हैं? उस (ईश्वर)-के पास तक कैसे पहुँचा जाये?" तब आप अपने निजानन्द-स्वरूप की अपरोक्षानुभूति करें तथा सदा-सर्वदा शुद्धता में विश्राम करें।

मेरे प्रिय बन्धुओ! क्या आप इन पंक्तियों को पढ़ते ही तत्क्षण उपवास-रूपी तपश्चर्या आरम्भ कर देंगे?

सभी प्राणियों में शान्ति हो!

१९

स्वप्नदोष तथा वीर्यपात

बहुत से नवयुवक स्वप्नदोष तथा वीर्यपात से पीड़ित हैं। इस भीषण रोग, वीर्यपात ने उन अनेक प्रतिभाशाली युवकों के हृदय के सारभाग को ही खा डाला

है जो अपने शैक्षिक जीवन के प्रारम्भिक चरणों में किसी समय बड़े होनहार छात्र थे। इस भयानक कशाघात ने अनेक छात्रों तथा वयस्क लोगों तक की भी जीवन-शक्ति अथवा सत्त्व को निचोड़ लिया है तथा उन्हें शारीरिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक दिवालिया बना दिया है। इस घातक अभिशाप ने बहुत से युवकों के विकास को अवरुद्ध कर दिया है जिससे उन्हें अपने अतीत की अज्ञान-भरी दुष्ट आदतों पर रोना आता है। इस अधम बीमारी ने कितने ही युवकों की आशाओं पर पानी फेर दिया है तथा उन्हें निराश, विषण्ण, नष्ट स्वास्थ्य तथा जर्जरित शरीर-गठन वाला बना दिया है।

मेरे पास यौवन को अपव्यय तथा नष्ट किये जाने की कारुणिक कहानियों के बहुसंख्यक पत्र आते हैं। भारत तथा पश्चिम दोनों के ही ग्राम्य, निकम्मे तथा कामोद्दीपक साहित्य तथा अश्लील चलचित्रों की वृद्धि की दिशा में हाल में झुकाव ने विभ्रान्त युवकों की विपत्ति को और भी बढ़ा दिया है। वीर्य-शक्ति की क्षति उनके मन में महान् भय उत्पन्न करती है। शरीर अशक्त बन जाता है, स्मृति क्षीण हो जाती है, मुख कुरूप हो जाता है तथा नवयुवक लज्जावश अपनी दशा को सुधार नहीं सकता है। किन्तु निराशा का कोई कारण नहीं है। यदि उत्तरवर्ती पृष्ठों में दिये हुए सुझाओं में से कुछ इने-गिने सुझाओं का भी पालन किया जाये तो उसकी जीवन के प्रति यथार्थ दृष्टि विकसित होगी तथा वह अनुशासित आध्यात्मिक जीवन यापन करेगा और अन्त में परमानन्द को प्राप्त करेगा।

दैहिकीय वीर्यपात तथा व्याधिकीय वीर्यपात में भेद

वीर्यपात अनैच्छिक वीर्यस्राव है। शुक्रपात, वीर्यपात, वीर्यस्खलन, स्वप्नदोष, रेतःक्षरण, निषेक—ये सभी पर्यायवाची शब्द हैं। आयुर्वेद के वैद्य इसे शुक्र-मेघ रोग कहते हैं। यह युवावस्था में कुटेवों के कारण होता है। गम्भीर रोग की अवस्था में दिन के समय भी वीर्यपात होता है। रोगी के मूत्रोत्सर्जनकाल में मूत्र के साथ वीर्य का स्राव भी होता है। यदि स्राव यदा-कदा होता है तो आपको किंचित् भी सन्त्रस्त होने की आवश्यकता नहीं है। यह शरीर में ताप अथवा वीर्य की थैलियों पर बोझिल आँतों अथवा मूत्राशय के दबाव के कारण हो सकता है। यह व्याधि नहीं है।

वीर्यपात दो प्रकार का होता है, यथा दैहिकीय वीर्यपात तथा व्याधिकीय वीर्यपात। दैहिकीय वीर्यपात में आपको नयी स्फूर्ति प्राप्त होगी। इस क्रिया से आपको भयभीत नहीं होना चाहिए। यदि वीर्यपात यदा-कदा ही होता है तो

आपको उस ओर ध्यान नहीं देना चाहिए। आपको इस विषय में चिन्ता नहीं करनी चाहिए। यह भी तन्त्र का किंचित् प्रधावन अथवा जिस पात्र में वीर्य संचित रहता है उसमें समय-समय पर सामान्य उफान है। इस क्रिया के साथ दुर्विचार नहीं रहता है। व्यक्ति रात्रि में घटित इस क्रिया से अवगत नहीं रहता। इसके विपरीत, व्याधिकीय वीर्यपात के साथ कामुक विचार होते हैं। उसके पश्चात् उदासी आती है। उसमें चिड़चिड़ापन, अवसाद, आलस्य तथा कार्य करने और अनन्यमनस्कता में असमर्थता होती है। यदा-कदा होने वाला वीर्यपात प्रभावहीन होता है, किन्तु बारम्बार होने वाला वीर्यपात उत्साह हीनता, दुर्बलता, अग्निमाद्य, उदासी, स्मृतिलोप, पृष्ठदेश में दुस्सह पीड़ा, शिरोवेदना, नेत्रों में जलन, निद्रालुता तथा लघुशंका तथा वीर्यस्राव के समय दाह उत्पन्न करता है। वीर्य बहुत पतला हो जाता है।

कारण तथा परिणाम

स्वप्नदोष तथा वीर्यपात के कई कारण हो सकते हैं यथा मलावरोध, बोझिल उदर, उत्तेजक तथा वायुकारक भोजन, अशुद्ध विचार तथा अज्ञानतावश दीर्घकाल तक किया गया हस्तमैथुन।

यदि धातुक्षीणता, वीर्यपात, कामुक स्वप्न तथा नैतिक जीवन के अन्य प्रभावों की उपयुक्त औषधियों द्वारा रोकथाम न की गयी तो ये निश्चय ही व्यक्ति को दुःखद जीवन की ओर ले जायेंगे। परन्तु ये औषधियाँ स्थायी रोगमुक्ति नहीं ला सकती हैं। व्यक्ति जब तक औषधियों का सेवन करता है तब तक उसे अल्पकालिक राहत मिलती है। पाश्चात्य डाक्टर भी यह स्वीकार करते हैं कि ऐसी औषधियाँ स्थायी रोगमुक्ति नहीं दे सकती हैं। ज्यों-ही औषधियों का सेवन बन्द किया कि रोगी अपने रोग को अधिक बदतर दशा में अमुभव करता है। कुछ स्थितियों में, औषधियों के सेवन से रोगी क्लीव बन जाता है। स्थायी सफल रोगमुक्ति तो एकमात्र प्राचीन योग-प्रणाली से ही हो सकती है। **"नास्ति योगात्परं बलम्"**—योग से बढ़ कर कोई बल नहीं है। इस पुस्तक में दी हुई विधियों का यदि आप नियमित रूप से अभ्यास करेंगे तो वे आपको सफलता प्राप्त करने में समर्थ बनायेंगी।

कठवैद्यों तथा कूट चिकित्सकों के शानदार विज्ञापनों से अत्यधिक प्रभावित न हों। सरल प्राकृतिक जीवन यापन करें। आप शीघ्र ही पूर्ण स्वस्थ हो जायेंगे। आप इन तथाकथित एकस्वकृत औषधियों तथा अमोघगुण-औषधियों को क्रय

करने में धन व्यय न करें। वे निरर्थक हैं। कठवैद्य विश्वासशील तथा अज्ञानी लोगों का शोषण करने का प्रयास करते हैं। डाक्टरों के पास न जाइए। अपना डाक्टर स्वयं बनने की योग्यता प्राप्त करने का प्रयास कीजिए। प्राकृतिक नियमों, स्वास्थ्य-विज्ञान तथा आरोग्य के सिद्धान्तों को जानिए। स्वास्थ्य के नियमों का उल्लंघन न कीजिए।

हानिकर कामुक प्रकृति तथा क्रोध के विस्फोट के विरुद्ध चेतावनी

सभी प्रकार के मैथुनों से बचें। वे आपकी वीर्य-शक्ति को चूस लेते तथा आपको मृतक अथवा रस निचोड़ी हुई ईख के समान बना देते हैं। वीर्य निस्सन्देह एक अमूल्य सम्पत्ति है। इसे क्षणिक उत्तेजना तथा संवेदन के लिए नष्ट न करें।

इस अनिष्टकर आदत को तत्काल त्याग दें। यदि आप इस व्यवहार को बनाये रखें तो विनष्ट हो जायेंगे। अपने नेत्र खोलें। अब जाग जायें। बुद्धिमान् बनें। कुसंगति से दूर रहें। स्त्रियों के साथ हास-परिहास न करें। शुद्ध दृष्टि का अभ्यास करें। अब तक आप अन्धे तथा अज्ञानी थे। आप अन्धकार में थे। आपको इस अनिष्टकारी व्यवहार के अनर्थकारी परिणाम का कोई बोध नहीं था। आप अपनी दृष्टि खो बैठेंगे। आपकी दृष्टि में धुँधलापन होगा। आपके स्नायु छिन्न-भिन्न हो जायेंगे।

अपनी जननेन्द्रिय को न देखें। अपने जननांग का जब-तब अपने हाथों से स्पर्श भी न करें। यह आपकी कामवासना को बढ़ायेगा। जब यह उत्थित हो तो मूल-बन्ध तथा उड्डीयान-बन्ध करें। ॐ का अर्थ के साथ कई बार जप करें। शुद्धता का चिन्तन करें। बीस प्राणायाम करें। अशुद्धता का मेघ शीघ्र ही क्षीण हो जायेगा।

मैथुन की अति तथा क्रोध और घृणा के विस्फोट को त्याग देना चाहिए। यदि मन को सर्वदा उत्तेजनाहीन तथा प्रशान्त रखें तो आपको उत्कृष्ट स्वास्थ्य, बल तथा पुंस्त्व प्राप्त होगा। क्रोधावेश से शक्ति क्षीण होती है। जब व्यक्ति झल्लाता तथा मन में अत्यधिक घृणा रखता है तब उसके कोषाणु तथा ऊतक दूषित विषैले द्रव्यों से आपूरित हो जाते हैं। विविध प्रकार के शारीरिक रोग उत्पन्न होते हैं। रक्त उष्ण तथा पतला हो जाता है तथा उसके फलस्वरूप रात्रिकाल में वीर्यपात

होता है। विविध प्रकार के स्नायुविक रोगों के लिए वीर्यशक्ति की अत्यधिक क्षति तथा बारम्बार के विस्फोटक क्रोधावेश को उत्तरदायी माना जाता है।

उचित आहार तथा मलोत्सर्ग का महत्त्व

अधिकांश व्याधियाँ अति-भोजन के कारण होती हैं। आहार में मिताहार का पालन करें। देर से निशाहार करने से बचें। सायंकाल का भोजन हलका होना चाहिए तथा उसे ६ अथवा ७ बजे से पूर्व ही खा लेना चाहिए। यदि सम्भव हो तो रात्रि में केवल दूध तथा फल लें। सूर्यास्त के पश्चात् किसी ठोस अथवा द्रव्य पदार्थ का सेवन नहीं करना चाहिए। जब आप दूध पियें तो दूध में अदरक का रस मिला लें अथवा दूध पीने से पहले दूध के साथ कुचली अदरक उबालें। तिक्त चटनी, लहसुन, प्याज तथा चरपरा खाद्य-पदार्थ त्याग दें। तिक्त कढ़ी, मिर्च तथा चटनी वीर्य को जलवत् (पतला) बना देते हैं तथा बारम्बार होने वाले स्वप्नदोष के कारण बनते हैं। मृदु, शामक, अनुत्तेजक सादा भोजन लें। धूमपान, मदिरा, चाय, काफी, मांस तथा मछली त्याग दें।

जब रात्रि में मूत्रोत्सर्जन की हाजत हो तो मूत्राशय को रिक्त करने के लिए तुरन्त उठ जायें। भारित मूत्राशय स्वप्नदोष का कारण है। शयन करने के लिए जाने से पूर्व मल-मूत्र त्याग करें। यदि गम्भीर कोष्ठबद्धता है तथा आँतें भारी हैं तो वे रैतस आशयक पर दबाव डालेंगी जिसके परिणामस्वरूप रात्रि में वीर्यपात होगा।

मलावरोध से छुटकारा पाने के लिए वस्ति (एनीमा) का प्रयोग अत्यावश्यक है। मृदु विरेचक औषधियों का सेवन अधिक लाभदायी नहीं है; क्योंकि यह शरीर में उष्णता उत्पन्न करता है।

मल-मूत्र त्याग के आवेग को कभी न रोकें। यदि आँतों में कृमि हों तो उन्हें रात्रि में एक मात्रा कृमिहर ले कर दूर करें तथा आगामी प्रातःकाल को एरण्ड तैल का विरेचक लें। इससे आँतें सुव्यवस्थित रहेंगी।

कभी-कभी शरीर में उष्णता की अधिकता, अधिक चलने अथवा यात्रा करने, अधिक मात्रा में मिष्ठान्न अथवा मिर्च तथा लवण के खाने के कारण भी वीर्यपात होता है। चाय, काफी, मिर्च, अत्यधिक मिष्ठान्न तथा अत्यधिक चीनी त्याग दें। सुस्वादु भोजन, व्यंजन, मशालेदार भोजन तथा पाश्चात्य मिष्ठान्न (पैस्ट्री) से बच

कर रहें। कभी-कभी, उदाहरणतः सप्ताह में एक बार उपवास करें। उपवास के दिनों में जल भी न पियें। साइकिल पर अधिक सवारी न करें।

पीले प्रकार की हरड़ तथा हरीतिकी के टुकड़े को बहुधा चबायें। जब **वीर्यपात प्रायः हो तो दो चुटकी-भर कपूर एक प्याला दूध में घोल दें और इसका सेवन समय-समय** पर रात्रि में करते रहें। आधा सेर दूध ऊषाकाल में तथा आधा सेर रात्रि में लें।

प्रातः ४ बजे से पूर्व उठ जायें

स्वप्नदोष प्रायः रात्रि के अन्तिम प्रहर में होता है। जिनकी प्रातः ३ बजे से ४ बजे तक उठने तथा जप-ध्यान करने की आदत है वे स्वप्नदोष से कभी पीड़ित नहीं होते। कम-से-कम चार बजे प्रातः नियमित रूप से उठने का विचार स्थिर कर लें। कठोर शय्या पर सोयें। खुरदरी चटाइयों का प्रयोग करें।

बाँयी करवट लेटें। रात्रि-भर सूर्यनाड़ी, पिंगला को दायीं नासिका से चलने दें। तीव्र वेदना की स्थिति में स्वास्थ्य-लाभ होने तक पीठ के बल लेटें।

यदि आप विवाहित हैं तो अलग कमरे में सोइए। आप अपनी पत्नी को रात्रि में अपने पैरों की मालिश कभी न करने दीजिए। यह खतरनाक व्यवहार है।

वीर्य की रक्षा के लिए गुप्तांग पर सदा लाल रंग का कौपीन पहनना आवश्यक है। इससे स्वप्नदोष तथा अण्डकोष की वृद्धि नहीं होगी। अतः सदा लंगोटी अथवा कौपीन पहनिए। आपको अण्डकोश की सूजन अथवा अन्य कोई रोग नहीं होगा। यह ब्रह्मचर्य का पालन करने में आपकी सहायता करेगा। यदि रोग बहुत ही कष्टप्रद हो तो रात्रि में सोने से पूर्व गीला कौपीन पहनिए।

ब्रह्मचारी के लिए सदा खड़ाऊँ पहनना उचित है। इससे वीर्य सुरक्षित रहेगा, नेत्रों को लाभ होगा, आयु दीर्घ होगी तथा पवित्रता और कान्ति बढ़ेगी।

भगवन्नाम की शरण लें

प्रातःकाल सो कर उठते ही एक या दो घण्टे तक जप तथा ध्यान की साधना करें। इसी प्रकार, १० बजे रात्रि में सोने से पूर्व इसे करें। यह महान् शुद्धिकारक है। यह मन तथा स्नायुओं को शक्तिशाली बनायेगा। यह सर्वोत्कृष्ट उपचार है। इस मन्त्र को दोहरायें : "**पुनर्मामैतु इन्द्रियम्**—मेरी खोई हुई शक्ति पुनः लौट आये।"

प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व सूर्य से प्रार्थना करें : "हे भगवान् सूर्यनारायण! आप संसार के नेत्र हैं। आप विराट् पुरुष के नेत्र हैं। मुझे स्वास्थ्य, बल, तेज तथा जीवन-शक्ति प्रदान करें।" प्रातःकाल सूर्यनमस्कार करें। सूर्योदय के समय सूर्य के द्वादश नामों को दोहरायें : **"मित्राय नमः, रवये नमः, सूर्याय नमः, भानवे नमः, खगाय नमः, पूष्णे नमः, हिरण्यगर्भाय नमः, मरीचये नमः, सवित्रे नमः, आदित्याय नमः, भास्कराय नमः, अर्काय नमः।"** सूर्य की हार्दिकता का आनन्द लें।

कटि-स्नान (HIP BATH) से लाभ

एक जलपूर्ण कण्डाल (टब) में बैठ कर तथा पैरों को कण्डाल से बाहर रख कर ठण्ढा कटि-स्नान करें। यह बहुत ही शक्तिवर्धक तथा शक्ति-संचारक है। ठण्ढा कटि-स्नान जनन-मूत्र-तन्त्र के स्नायुओं को शक्ति देता तथा प्रशमित करता है तथा नैशप्रस्रावों (स्वप्नदोषों) को प्रभाकारी ढंग से रोकता है। यह स्नायुमण्डल की एक सामान्य शक्तिवर्धक औषधि भी है, क्योंकि इससे स्नायु पुष्ट भी होते हैं।

कटि-स्नान की व्यवस्था घर में ही जस्ते के एक **बड़े कण्डाल** (टब) में सुविधापूर्वक की जा सकती है। वृद्ध जन तथा स्वास्थ्यलाभ कर रहे व्यक्ति मन्दोष्ण जल का उपयोग कर सकते हैं। शरीर के गीले भाग को सूखे तौलिये से पोंछिए और गरम वस्त्र धारण कीजिए।

अथवा किसी सरिता, सरोवर अथवा तड़ाग में नाभि तक जल में आधे घण्टे तक खड़े रहिए। ॐ, गायत्री अथवा अन्य किसी मन्त्र का जप कीजिए। अपने उदर अथवा पेट के निचले भाग को एक मोटे तुर्की तौलिये अथवा खादी के कपड़े से कई बार रगड़िए। ग्रीष्म ऋतु में यह स्नान दिन में दो बार, प्रातः तथा सायंकाल में किया जा सकता है।

ठण्डे डूश (Douches) (नली द्वारा जल की धारा छोड़ना) मेरु-दण्ड-डूश (धावन) तथा फुहारा-स्नान ब्रह्मचर्य-पालन के लिए अत्यन्त लाभदायक हैं। टोंटी के साथ फुहारा-उपकरण को जोड़ कर फुहारा स्नान-घर का प्रबन्ध घर में ही सुगमता से किया जा सकता है।

शीर्षासन, सर्वांगासन, सिद्धासन, सुखपूर्वक-प्राणायाम तथा उड्डीयान-बन्ध—ये सब स्वप्नदोष के उन्मूलन में अत्यधिक प्रभावकारी हैं। इनका अभ्यास करके

अगण्य लाभों का अनुभव कीजिए। गम्भीर श्वसन तथा भस्त्रिका-प्राणायाम का अभ्यास कीजिए। दूर तक टहलने जाइए। क्रीडा में भाग लीजिए।

कुछ उपयोगी सुझाव

पूर्ण रोग-मुक्ति में रोग की प्रबलता के अनुरूप एक से छः मास तक लग सकते हैं। यदि रोग चिरकालिक है तो रोग-मुक्ति में बहुत अधिक समय लग सकता है; क्योंकि प्रकृति की गति यद्यपि निश्चित किन्तु धीमी है। जब कभी आप कामुक विचारों से तंग आयें तो आप उनके स्थान में अपने इष्टदेव-सम्बन्धी पवित्र विचार प्रतिस्थापित करने का प्रयास करें।

कोई भी रोग हो, रहने दें। उसकी उपेक्षा करें। उसे अस्वीकार करें। शुद्ध आत्मा का चिन्तन तथा ध्यान करें। अपने को पूर्ण व्यस्त रखें। मन को शरीर अथवा रोग के विषय में सोचने का अवसर ही न दें। यह किसी भी प्रकार की रोग की सर्वोत्तम चिकित्सा है। विविध प्रकार से भगवन्नामों का गान करें। जब आप थक जायें तो धर्मग्रन्थों के स्वाध्याय में लग जायें। निस्वार्थ सेवा करें। मुक्तांगन में दौड़े। सरिता में तैरें। मार्ग में पड़े हुए कंकड़ों तथा पत्थरों को हटायें। एक नोट-बुक में एक घण्टे तक अपना इष्टमन्त्र लिखें।

भगवद्भक्ति का पोषण कर मन को शुद्ध बनायें। जप तथा ध्यान करें। आध्यात्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय करें। भगवान् से प्रार्थना करें। ब्रह्मचर्य का पालन करें। स्त्रियों से अनावश्यक रूप से न मिलें-जुलें। उनमें केवल भगवती माँ के दर्शन करें। सबमें आत्मभाव विकसित करें।

चलचित्र, उपन्यास, समाचार-पत्र, कुसंगति तथा अश्लील बातचीत से दूर रहें। दर्पण में बारम्बार न देखें। इत्र तथा भड़कीले वस्त्रों का उपयोग न करें। नृत्य तथा संगीत-गोष्ठियों में सम्मिलित न हों। पशु-पक्षियों को जोड़ा खाते न देखें।

सुख-सुविधा के अनुराग का उन्मूलन करें। आलस्य पर विजय प्राप्त करें तथा मन और शरीर को किसी-न-किसी उपयोगी कार्य में संलग्न रखें। मन को निरन्तर संलग्न रखना ब्रह्मचर्य के महान् रहस्यों में से एक है। अनुशासित कठोर जीवन यापन करें। रोग की अधिक चिन्ता न करें। यह जाता रहेगा। मन में दुर्विचार प्रकट होने पर भगवन्नाम का जप करें तथा उनसे प्रार्थना करें। अन्ततः प्रभु की दिव्य कृपा तथा उनका वरद हाथ सभी रोगों का निश्चित प्रतिकारक है। भगवान् पर निर्भर करें। पवित्रता तथा धर्मनिष्ठा के प्रति समर्पित रहें। उदात्त

विचारों को हृदय में बनाये रखें। धार्मिक साहित्य का अध्ययन करें। आप पर कुछ भी अभ्याक्रमण नहीं करेगा।

यह दुर्बलता दूर हो जायेगी। इसके लिए व्याकुल, चिन्तित तथा उदास न हों। निराशाजनक विचार खतरनाक होते हैं। चिन्ता आपको और अधिक दुर्बल बनायेगी। अतीत से पाठ सीखें और उससे लाभान्वित हों। अतीत पर चिन्तन कर और दुर्बल न बनें। अपने दृष्टिकोण को परिवर्तित करें। जिज्ञासा करें। ब्रह्मचर्य के लाभों पर ध्यान करें। हनुमान्, भीष्म आदि जैसे अखण्ड ब्रह्मचारियों के जीवन पर विचार करें। विषयी जीवन की बुराइयों—स्वास्थ्य-हानि, लज्जा, रोग तथा मृत्यु—के विषय में सोचें। विवेक का सम्पोषण करें। आप जगत्-प्रभु की सन्तान हैं। आनन्द आपके अन्दर है। विषय-पदार्थों में रंचमात्र भी सुख नहीं है। शरीर से अपना सम्बन्ध-विच्छेद करें तथा प्रभु के साथ तादात्म्य करें। यदि आपका मन शुद्ध तथा स्वस्थ है तो आपका शरीर भी शुद्ध तथा स्वस्थ होगा। अतः अतीत को भुला दें तथा सद्गुण तथा अध्यात्म का, भगवत्प्रेम का तथा उच्चतर दिव्य जीवन की आकांक्षा का नवीन श्रेष्ठतर जीवन यापन करें। अधिक गहनता के साथ और अधिक साधना करें। आप एक पूर्णतः रूपान्तरित तथा भाग्यशाली व्यक्ति बनेंगे।

२०

ब्रह्मचर्य-साधना के कुछ प्रभावशाली साधन

जब तक आप इन पूरक साधनाओं का पालन नहीं करते तब तक आप अखण्ड ब्रह्मचर्य नहीं रख सकते हैं। आपको अपने भोजन तथा अपनी संगति की ओर विशेष ध्यान देना होगा। कुछ भी, जिससे मन में अपवित्र विचार उत्पन्न हों, कुसंगति है। हे साधको! सांसारिक लोगों की संगति से दूर भाग जायें। नगरों के कोलाहल तथा संसार की खलबली से अलग चले जायें। सांसारिक विषयों की चर्चा करने वाले आपको शीघ्र ही कलुषित कर देंगे। आपका मन दोलायमान हो जायेगा तथा इधर-उधर भटकने लगेगा। आपका पतन होगा।

प्रणयलीला-सम्बन्धी उपन्यास अथवा कथा-साहित्य न पढ़ें। चलचित्रगृह तथा नाट्यशाला न जायें। अवांछनीय लड़कों से मैत्री न करें। आपके लिए आवश्यकता है अपनी प्रतिजाति के प्रति अपने दृष्टिकोण के, अपनी मनोवृत्ति के

आमूल-चूल परिवर्तन करने की। प्रत्येक स्त्री में भगवती माँ के दर्शन करें तथा प्रत्येक स्त्री को अपनी माता समझें।

स्वाद पर नियन्त्रण

प्रथम, आहार-सम्बन्धी नियन्त्रण। आत्म-नियन्त्रण तथा स्वाद अथवा जिह्वा-नियन्त्रण में घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिसने जिह्वा पर नियन्त्रण पा लिया उसने अन्य सभी इन्द्रियों पर भी नियन्त्रण पा लिया।

सुस्वादु राजसिक भोजन प्रजननेन्द्रिय को उद्दीपित करता है। मांस, मत्स्य, मदिरा तथा धूमपान त्याग दें। मांस व्यक्ति को वैज्ञानिक बना सकता है; किन्तु वह उसे दार्शनिक, सन्त अथवा सात्त्विक व्यक्ति कभी भी नहीं बना सकता है।

धीरे-धीरे नमक तथा इमली त्याग दें। नमक काम-वासना तथा मनोविकार उद्दीपित करता है। नमक इन्द्रियों को उद्दीपित करता है तथा बलवती बनाता है। नमक का त्याग मन तथा इन्द्रियों को शान्त अवस्था में लाता है। यह ध्यान में सहायता करता है। आपको प्रारम्भ में किंचित कष्ट होगा; बाद में आप नमक-रहित भोजन में रस लेने लगेंगे। न्यूनातिन्यून छह मास तक अभ्यास करें। इस प्रकार आप अति-शिघ्र ही आत्मस्वरूप का साक्षात्कार कर सकेंगे। इस विषय में आपके लिए जो आवश्यक है, वह है गम्भीर तथा सच्चा प्रयास करने की। भगवान् श्रीकृष्ण आपको अध्यात्म-पथ पर चलने तथा जीवन का लक्ष्य प्राप्त करने का साहस तथा बल प्रदान करें!

रात्रि में अपने पेट पर अधिक भार न डालें। रात्रि का भोजन बहुत ही हलका होना चाहिए। आधा लीटर दूध तथा कुछ फल रात्रि के लिए उपयुक्त आहार है।

ब्रह्मचर्य तथा जिह्वा-नियन्त्रण दोनों के लिए प्रातःकाल कुछ तुलसीपत्रों का सेवन कीजिए। सायंकाल में नीम की पत्तियाँ लीजिए। एक पत्ती से आरम्भ कीजिए तथा प्रतिदिन एक पत्ती बढ़ाते हुए दश तक ले जाइए। कुछ महीनों तक दश पत्तियाँ लीजिए, तब आप इसे बीस पत्तियों तक बढ़ा सकते हैं। यह बहुत ही लाभकर है।

कुसंगति से बचें

अश्लील चित्र, अशिष्ट शब्द तथा प्रणय-लीलाओं के वर्ण्यविषय वाले उपन्यास हृदय में कामवासना उद्दीपित करते तथा हेय, नीच तथा अवांछनीय भाव उत्पन्न करते हैं। जबकि भगवान् कृष्ण, भगवान् राम अथवा प्रभु यीशु के सुन्दर

चित्र का दर्शन तथा सूरदास, तुलसीदास और त्यागराज के उदात्त गीतों का श्रवण हृदय में उत्कृष्ट भाव तथा सच्ची भक्ति उद्दीपित करते, दिव्य रोमांच तथा आनन्द और प्रेम के अश्रु उत्पन्न करते तथा मन को तत्काल भाव-समाधि तक उन्नत बनाते हैं। क्या अब आप इनके अन्तर को स्पष्ट रूप से देखते हैं?

जब आप स्त्री-पुरुषों की सम्मिलित नृत्य-सभा में उपस्थित होते हैं अथवा जब आप 'द मिस्ट्रीज़ आफ द कोर्ट आफ लण्डन' पुस्तक का अध्ययन करते हैं तब आपके मन की स्थिति कैसी होती है? जब आप वाराणसी के स्वामी जयेन्द्रपुरी जी महाराज के सत्संग में उपस्थित होते हैं अथवा जब आप ऋषिकेश में गंगाजी के तट पर एकान्त स्थान में होते हैं अथवा जब आप आत्मोन्नयनकारी प्राचीन उच्च साहित्य, उपनिषद् का स्वाध्याय करते हैं तब आपके मन की स्थिति कैसी होती है? अपनी मानसिक स्थितियों में साम्य तथा वैषम्य को देखिए। मित्र! स्मरण रखिए कि कुसंगति के समान आत्मा का अत्यधिक विनाशकारी कुछ भी नहीं है। साधकों को सभी प्रकार की कुसंगति से निर्ममतापूर्वक बच कर रहना चाहिए। उन्हें स्त्री, धनाढ्य व्यक्तियों के विलासमय आचरण, तिक्त भोजन, वाहन, राजनीति, कौशेय वस्त्र, पुष्प, इत्र आदि से सम्बन्धित कहानियाँ नहीं सुननी चाहिए; क्योंकि मन सहज ही उत्तेजित हो उठता है। वह विलासप्रिय लोगों के आचरण का अनुकरण करने लग जायेगा। कामनाएँ उत्पन्न होंगी। आसक्ति भी मन में प्रवेश कर जायेगी।

चलचित्र व्यक्ति में बुरी प्रवृत्ति उत्पन्न करता है। वह प्रदर्शन में उपस्थित हुए बिना एक दिन भी नहीं रह सकता है। उसके नेत्र कुछ अर्धनग्न चित्र तथा कुछ प्रकार के रंग देखना चाहते हैं तथा उसके श्रोत्र स्वल्प संगीत सुनना चाहते हैं। नवयुवक तथा नवयुवतियाँ जब चलचित्र में अभिनेताओं को चुम्बन करते तथा आलिंगन करते देखते हैं तो वो कामुक हो जाते हैं। जो आध्यात्मिक क्षेत्र में अपना विकास चाहते हैं उन्हें चलचित्र से पूर्णतया बच कर रहना चाहिए। उन्हें तथाकथित धार्मिक चित्रों में भी नहीं उपस्थित होना चाहिए। वे वास्तव में धार्मिक चित्र नहीं हैं। यह लोगों को आकर्षित करने तथा धन एकत्र करने की एक चाल है। उनमें काम करने वाले अभिनेताओं की आध्यात्मिक क्षमता ही क्या है? आध्यात्मिक व्यक्ति ही दर्शकों के मन को उन्नत करने वाली सदाचारमयी प्रभावोत्पादक कहानियाँ प्रस्तुत कर सकते हैं।

यदि आपकी उत्तेजक चलचित्रों को देखने जाने की आदत है तो उसे समाप्त

कीजिए। कहीं भी अशिष्ट विषयी दृश्य न देखिए। नग्न चित्रों को देखने में लिप्त न होइए। ये सब कामवासना की वृद्धि तथा वीर्य को क्षीण करने का कारण हैं। आपको इनसे दृढ़तापूर्वक दूर रहना चाहिए।

उपन्यास-वाचन एक अन्य बुरी आदत है। जिनकी कामवासना तथा प्रणयलीलाओं का प्रतिपादन करने वाले उपन्यासों के पढ़ने की आदत है वे उपन्यास पढ़े बिना भी नहीं रह सकते। वे सदा अपनी स्नायुओं को किसी-न-किसी संवेदनात्मक भावनाओं से गुदगुदाते रहना चाहते हैं। उपन्यास-वाचन मन को नीच कामुक विचारों से भरता तथा कामवासना उद्दीपित करता है। यह शान्ति का महाशत्रु है।

अनेक लोगों ने अल्प शुल्क के आधार पर उपन्यासों के वितरण के लिए परिचल पुस्तकालय खोल दिये हैं। उन्होंने यह जरा भी अनुभव नहीं किया कि वे देश के कितनी क्षति पहुँचा रहे हैं। यह अच्छा होगा कि वे अपनी जीविका चलाने के लिए किसी अन्य व्यवसाय की योजना तैयार करें। वे इन रद्दी उपन्यासों को, जो कामवासना उद्दीपित करते हैं, वितरित करके युवकों के मन को बिगाड़ते हैं। सम्पूर्ण वातावरण प्रदूषित हो जाता है। कठोर दण्ड देने के लिए यमलोक में उनकी प्रतीक्षा की जा रही है।

उपन्यास न पढ़ें। वे मन को दूषित करते हैं। शिकार को अपने चमकीले पाश में पकड़ने के लिए उपन्यास पाश्चात्य सभ्यता की जंजीरें हैं। जिन पत्रिकाओं से निम्न नैसर्गिक प्रवृत्ति उत्तेजित होती हो, उन्हें न पढ़ें।

अश्लील गीत मन में बहुत ही बुरा प्रभाव तथा गम्भीर संस्कार डालता है। साधकों को, जहाँ दूषित गीत गाये जाते हों वहाँ से पलायन कर जाना चाहिए।

जो बाह्य पदार्थ कामवासना को प्रोत्साहित करने वाले हों उनसे अपने मन तथा नेत्रों को दूसरी दिशा में ले जाने का यथाशक्य प्रयास करें। जिस प्रकार के अध्ययन, वार्तालाप, कल्पना तथा साहचर्य से कामवासना के उत्तेजित होने की सम्भावना हो, उन्हें त्याग दें। उन लोगों से बातचीत न करें जो उत्तेजक समाचार सूचित करने तथा आपके मानसिक सन्तुलन को विक्षुब्ध करने को उत्सुक हों। आध्यात्मिक रूप से उन्नत व्यक्तियों के साथ रहें तथा जो पुस्तकें अपरोक्ष रूप से आध्यात्मिक हों उनके अतिरिक्त अन्य सभी पुस्तकों का अध्ययन बन्द कर दें।

जब मन में कामुक विचार उठें तो उनसे संघर्ष न करें। सर्वोत्तम विधि है कि उनकी उपेक्षा की जाये। यदि आप ऐसा करने में सफल न हों तो किसी ऐसे

व्यक्ति की संगति में रहें जो आध्यात्मिकता में आपसे वरिष्ठ हो, जो आध्यात्मिकता में आपसे अधिक उन्नत हो। यदि आप एकान्त में जायेंगे तो मन आपका पीछा करेगा और आपको विषयी विचारों में निमग्न कर देगा। आप अपना सन्तुलन खो बैठेंगे। सावधान रहें। थोड़ी-सी सावधानी से कामुक विचार जाते रहेंगे।

विचारों पर निगरानी रखें

मन में कुविचार के प्रवेश करते ही इन्द्रिय उत्थित हो जाती है। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है? क्योंकि यह बहुधा हुआ करता है, अतः आपको इसमें कुछ आश्चर्य या चमत्कार नहीं प्रतीत होता। आप अज्ञानवश इस महत्त्वपूर्ण बात की उपेक्षा करते रहें।

मन एक महान् विद्युत् समूह (बैटरी) है। निस्सन्देह यह एक बड़ा विद्युज्जनित्र (डायनमो) है। यह विद्युत्-गृह है। स्नायु विद्युत् वाह को, तन्त्रिका-वेग को विविध इन्द्रियों, ऊतकों तथा अग्राङ्गों—हाथ, पैर आदि—तक पहुँचाने के लिए विद्युत्-रोधी तार हैं।

चैत्य-प्राण में कम्पन होने से मन में विचार-कम्पन होता है। यह विचार-शक्ति स्नायुओं के सहारे आश्चर्यकर तड़ित् गति से इन्द्रियों तक सम्प्रेषित होती है। भौतिक शरीर एक मांसल ढाँचा है जिसे मन ने अपने अनुभव तथा उपभोग के लिए संस्कारों तथा वासनाओं के अनुरूप तैयार किया है। मन एक प्रचण्ड तथा विद्रोही इन्द्रियों वाले अप्रशिक्षित कामुक व्यक्ति के अंगों पर नियन्त्रण करता है। वह एक प्रशिक्षित उन्नत योगी का आज्ञाकारी विश्वासपात्र सेवक बन जाता है।

नित्य सतर्क रहने वाले ब्रह्मचारी को अपने विचारों पर सदा बड़ी सावधानीपूर्वक दृष्टि रखनी चाहिए। उसे एक भी कुविचार को मानसिक उद्योगशाला के द्वार में कभी भी प्रवेश नहीं करने देना चाहिए। यदि उसका मन अपने ध्येय अथवा लक्ष्य पर सदा स्थिर है तो कुविचार के प्रवेश करने की कोई गुंजाइश नहीं है। यदि कूट द्वार से कोई कुविचार मन में प्रवेश कर भी जाये तो उसे अपने मन को इस विचार का रूप नहीं लेने देना चाहिए। यदि वह इसका शिकार बन गया तो विचारधारा स्थूल शरीर तक पहुँच जायेगी। इसके पश्चात् इन्द्रियाँ तथा शरीर के स्नायु-तन्त्र में जलन आरम्भ हो जायेगी। यह गम्भीर स्थिति है।

कुविचारों का स्थान उसके विरोधी दिव्य विचारों को दे कर उसे कलिकावस्था में ही नष्ट कर देना चाहिए। इसे स्थूल शरीर में प्रवेश करने नहीं देना चाहिए। यदि आपकी संकल्प-शक्ति प्रबल है तो कुविचार को तत्काल भगाया जा सकता है। प्राणायाम, सशक्त प्रार्थना, विचार, आत्मचिन्तन, सगुण ध्यान तथा सत्संग कुविचारों को मानसिक उद्योगशाला की देहली पर कलिकावस्था में ही नष्ट कर सकते हैं। संघर्ष प्रारम्भ में तीव्र होगा। जब आप अधिकाधिक शुद्ध हो जायेंगे, जब आपकी संकल्प-शक्ति विकसित होगी, जब आपमें सत्त्व की वृद्धि होगी तथा जब आपकी मनोदशा स्वाभाविक चिन्तनशील हो जायेगी तब आप शारीरिक तथा मानसिक ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित हो जायेंगे। विचार-शक्ति को समझें तथा उसका लाभकारी ढंग से उपयोग करें। मन के तरीके को समझिए। शुद्ध संकल्प-शक्ति का उपयोग करना सीखिए। आप अपने विचारों के एक सतर्क कुशल प्रहरी बनिए। विचारों को मन के बाहर अपना शिर निकालने से पूर्व ही चतुराई तथा बुद्धिमानी से नियन्त्रण कीजिए।

मन ही सारे कार्य-व्यापार करता है। आपके मन में एक इच्छा उत्पन्न होती है और तब आप विचार करते हैं। तत्पश्चात् आप कार्य करने के लिए अग्रसर होते हैं। मन के संकल्प को ही कार्य का रूप दिया जाता है। प्रथम संकल्प होता है और तदनन्तर कार्य। अतः कामुक विचारों को मन में प्रवेश करने न दें।

जिसका मन से विचार किया जाता है वही वाणी बोलती है और जो वाणी बोलती है वह कर्मेन्द्रियाँ करती हैं। यही कारण है कि वेदों में कहा गया है : **"तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु**—मेरा मन शुभ संकल्प ही किया करे।" मन में उदात्त दिव्य विचार रखें। इससे जैसे काष्ठ-फलक में पुरानी कील के ऊपर नयी कील अन्तर्विष्ट करने से पुरानी कील बाहर चली जाती है वैसे ही अशुभ कामुक विचार शनैः-शनैः विलीन हो जायेंगे।

सत्संगकामी बनें

सत्संग अर्थात् सन्त-महात्माओं, संन्यासियों तथा योगियों की संगति की महिमा वर्णनातीत है। सत्संग की महिमा तथा प्रभाव का वर्णन भागवत, रामायण तथा अन्य धर्मग्रन्थों में अनेक प्रकार से किया गया है। एक क्षण का भी सत्संग सांसारिक लोगों के पुराने पाप-मय संस्कारों का आमूलचूल सुधार करने के लिए सर्वथा पर्याप्त है। उन्नत रहस्यवेत्ताओं के चुम्बकीय प्रभामण्डल, आध्यात्मिक स्पन्दन तथा शक्तिशाली विचार-तरंगें सांसारिक व्यक्तियों के मन पर भारी प्रभाव

डालते हैं। महात्माओं के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क सांसारिक लोगों के लिए वस्तुतः एक वरदान है। सन्तों की सेवा से कामुक व्यक्तियों का मन शीघ्र ही शुद्ध हो जाता है। सत्संग मन को उत्तुंग शिखर तक उन्नत करता है। जिस प्रकार एक ही सलाई रुई के विशाल गट्ठर को कुछ ही क्षणों में जला कर भस्म कर डालती है उसी प्रकार सत्संग भी सभी अज्ञान, सभी कामुक विचारों तथा संस्कारों और दुष्कर्मों को अल्पकाल में ही भस्म कर डालता है। यही कारण है कि शंकराचार्य आदि ने अपने ग्रन्थों में सत्संग की इतनी अधिक प्रशंसा की है।

यदि आपको अपने यहाँ अच्छा सत्संग उपलब्ध न हो सके तो ऋषिकेश, वाराणसी, नासिक, प्रयाग, हरिद्वार आदि तीर्थस्थानों में चले जाइए। आत्मसाक्षात्कार-प्राप्त व्यक्तियों द्वारा रचित पुस्तकों का स्वाध्याय भी सत्संग के तुल्य ही है। ज्वलन्त वैराग्य तथा मुमुक्षुत्व उत्पन्न करने की प्रभावशाली अचूक औषध एकमात्र सत्संग ही है।

विवेक तथा वैराग्य का सम्पोषण करें

व्यक्ति को सत् आत्मा तथा असत् अशुद्ध शरीर में विवेक करने का प्रयास करना चाहिए। साधक को कामुक जीवन के दोषों अर्थात् शक्ति की क्षति, इन्द्रियों की दुर्बलता, रोग, जन्म तथा मृत्यु, राग तथा विविध प्रकार के दुःखों को अपने मन को निर्दिष्ट करना चाहिए। उसे अपने को स्त्री-शरीर के तत्त्वों—अस्थि, मांस, रुधिर, मल, मूत्र, पीप तथा कफ—के विषय में बारम्बार स्मरण दिलाते रहना चाहिए। इन विचारों को मन में बार-बार ठूसना चाहिए। साधक को सदैव नित्य शुद्ध अमर आत्मा तथा आध्यात्मिक जीवन की महिमा अर्थात् अमरत्व, शाश्वत आनन्द तथा परम शान्ति की प्राप्ति की विषय में सोचना चाहिए। मन की स्त्री की ओर, चाहे वह कितनी ही सौन्दर्यवती क्यों न हो, देखने की आदत धीरे-धीरे छूट जायेगी। उसको कुविचार से देखने में मन काँप उठेगा। स्त्रियों को भी सतीत्व में प्रतिष्ठित होने के लिए उपर्युक्त साधनाएँ करनी चाहिए।

विवेकी व्यक्ति पुरुष तथा स्त्री में कोई भेद नहीं देखता है। वही तत्त्व—काम, क्रोध, लोभ तथा मोह—जो पुरुष में विद्यमान् हैं स्त्री में भी पाये जाते हैं। प्रबल कामवासना से पीड़ित कामुक व्यक्ति ही कल्पित भेद पाता है। यह सब भेद कल्पित हैं।

यदि आप वैराग्य विकिसित करें, यदि आप अपनी इन्द्रियों का दमन करें तथा

यदि आप विष्ठा तथा विष के समान असत्, नश्वर वैषयिक सुख तथा इस अनित्य संसार के भोगों से दूर रहें तो आपको इस संसार में कुछ भी प्रलुब्ध नहीं कर सकेगा। आपको स्त्री तथा अन्य पार्थिव पदार्थ आकृष्ट नहीं करेंगे। काम आपको अपने अधिकार में नहीं कर सकेगा। आपको शाश्वत शान्ति तथा आनन्द प्राप्त होगा।

निरन्तर स्मरण रखिए : "मैं भगवत्कृपा से दिन-प्रति-दिन शुद्धतर होता जा रहा हूँ। सुख आते हैं, किन्तु टिके रहने के लिए नहीं। यह मर्त्य शरीर मृत्तिका मात्र है। प्रत्येक वस्तु नाशवान् है। ब्रह्मचर्य ही एकमात्र उपाय है।" विवेक तथा वैराग्य विकसित कीजिए।

साधकों को भर्तृहरि का 'वैराग्य-शतक' तथा वैराग्य का प्रतिपादन करने वाले अन्य ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए। इससे मन में वैराग्य उत्पन्न होगा। मृत्यु तथा संसार के दुःखों का स्मरण भी आपकी पर्याप्त मात्रा में सहायता करेगा। यहाँ पाठकों का ध्यान उन कुछ बौद्ध-भिक्षुओं की ओर आकर्षित करना असंगत न होगा जो अपने साथ सदा एक नर-कंकाल रखते हैं। यह उनमें वैराग्य उत्पन्न करने तथा उन्हें मानव-जीवन के अस्थायी तथा विनाशशील स्वरूप का स्मरण दिलाने के लिए है।

एक दार्शनिक ने एक बार अपने हाथ में एक महिला का कपाल पकड़ रखा था। उसने दार्शनिक रूप से इस प्रकार प्रस्तुत करना प्रारम्भ किया : "हे कपाल ! कुछ समय पूर्व तुमने अपनी चमकदार त्वचा तथा गुलाबी कपोलों से मुझे लुभाया था। अब तुम्हारी वह मनोहरता कहाँ है? वे मधुमय ओष्ठ तथा कमल-नेत्र अब कहाँ हैं?" उसने इस भाँति तीव्र वैराग्य विकसित किया। यदि आप मानव-शरीर के विभिन्न अंगों का विश्लेषण करें तथा अपने मन के नेत्रों के समक्ष अस्थि तथा मांस का चित्र रखें तो आपको अपने शरीर अथवा किसी महिला के शरीर के प्रति रंचमात्र भी आसक्ति नहीं होगी। इस विधि का प्रयोग क्यों नहीं करते?

नर-कंकाल अथवा स्त्री के शव की स्मृति आपके मन में वैराग्य उत्पन्न करेगी। यह शरीर घिनावने प्रस्राव से प्रकट हुआ है तथा अशुद्धताओं से पूर्ण है। अन्त में यह भस्मीभूत हो जायेगा। यदि आप इसे स्मरण रखें तो आपके मन में वैराग्योदय होगा जिससे स्त्रियों के प्रति आकर्षण धीरे-धीरे लुप्त हो जायेगा। यदि आप अपने मन के सम्मुख किसी रुग्ण स्त्री की आकृति अथवा अत्यन्त वृद्ध

स्त्री का चित्र रखें तो आपके मन में वैराग्य विकसित होगा। संसार के दुःखों, विषय-पदार्थों के मिथ्यात्व तथा पत्नी और बच्चों में आसक्ति से उत्पन्न बन्धन को स्मरण कीजिए। कोई भी विधि जो आपके लिए सर्वाधिक उपयुक्त हो, प्रयोग कीजिए।

बैठ जाइए तथा शान्तिपूर्वक ईमानदारी से सोचिए कि भला इस स्त्री में क्या सौन्दर्य है जिसका शरीर अस्थि, मांस, स्नायु, वसा, मज्जा तथा रक्त से निर्मित! जब वही स्त्री वृद्ध हो जाती है तब उसमें वह सौन्दर्य कहाँ रहता है? सात दिनों तक ज्वरग्रस्त रहने के पश्चात् एक स्त्री के नेत्रों तथा शरीर की दशा को देखिए। उसके सौन्दर्य की क्या अवस्था है? यदि वह एक सप्ताह तक स्नान न करे तो सौन्दर्य कहाँ रहा? उसमें घृणाजनक दुर्गन्ध होती है। उस पचासी वर्षीया जराग्रस्त स्त्री की ओर देखिए जो निकम्मे नेत्रों तथा झुर्रीदार कपोलों और चमड़े के साथ कोने में बैठी हुई है। स्त्री के अंगों का विश्लेषण कीजिए तथा उनके वास्तविक स्वरूप को पूर्ण रूप से समझिए।

स्त्री मोह का सबसे बड़ा कारण है। स्त्रियाँ अवगुणों की ज्वालाएँ हैं। वे जलती हुई अग्नि हैं जो पुरुष को शुष्क घास-फूस की भाँति नष्ट कर डालती हैं। वे बहुत दूर से ही जलाती है, अतः वे अग्नि की अपेक्षा अधिक खतरनाक हैं। सुन्दर युवती विषैली मदिरा के समान है जो कामुक उन्माद उत्पन्न कर तथा विवेक को आच्छादित कर जीवन को नष्ट कर डालती है। इस संसार का उद्भव स्त्री से ही हुआ है और इसका सम्पोषण भी स्त्री ही करती है। भला स्त्री का त्याग किये बिना शाश्वत ब्रह्मानन्द की प्राप्ति कैसे सम्भव है? उन सुन्दरी युवतियों के शरीर को जिन्हें मूर्खजन इतना अधिक लाड़-प्यार करते है, उनके प्राणोत्सर्ग के पश्चात् कब्रिस्तान में ले जाते हैं जहाँ उन्हें पशु तथा कृमि खाते हैं तथा शृगाल तथा चील उनके चमड़े को फाड़ डालते हैं। स्त्री का त्याग किये बिना आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करना असम्भव है।

स्पष्टीकरण-टिप्पणी

इन पंक्तियों को पढ़ कर महिलाओं को रुष्ट नहीं होना चाहिए। मैंने तो शंकराचार्य तथा दत्तात्रेय का उपदेश ही पुनः प्रस्तुत किया है। मैं केवल केवल स्त्री तथा पुरुष, दोनों ही जातियों के मन में ब्रह्मचर्य की प्रभावशीलता तथा महिमा और काम के दुष्प्रभावों को बैठाना चाहता हूँ। मुझमें स्त्रियों के प्रति बड़ा सम्मान तथा बड़ी श्रद्धा है।

पुरुष तथा स्त्री, दोनों को ही ब्रह्मचर्य का अभ्यास करना चाहिए। स्त्रियों को भी अपने मन में पुरुष के भौतिक शरीर के प्रति जुगुप्सा उत्पन्न करने तथा वैराग्य विकसित करने के लिए पुरुष के शरीर के संघटक अवयवों का एक मानसिक चित्र अपने समक्ष रखना चाहिए।

मन को कामैषणा से अलग कर देने के लिए काम की निन्दा मात्र ही पर्याप्त नहीं है। इस विषय को भलीभाँति स्मरण रखें। काम शक्तिशाली है। काम अनिष्टकर है। काम भयानक है। दुर्बल इच्छा-शक्ति वाले व्यक्ति के लिए काम अनियन्त्रणीय है। व्यक्ति को माया के तरीकों से अवगत होना चाहिए जो उसे अपने जाल अथवा पाश में फँसा लेती है। स्त्री को पुरुष के मनमोहकता से अवगत होना चाहिए जो उसे लुभाती और पुरुष का शिकार बनाती है। इसी भाँति पुरुष को स्त्री की मनमोहकता से अवगत होना चाहिए जो उसे लुभाती और स्त्री का शिकार बनाती है। स्त्री पुरुष के लिए प्रलोभिका है तथा पुरुष स्त्री के लिए प्रलोभक है। पुरुष में स्त्री को फँसाने के लिए पर्याप्त मनमोहकता है। पुरुष के नेत्रों में स्त्री उतनी सुन्दर नहीं लगती जितना कि स्त्री के नेत्रों में पुरुष सुन्दर लगता है। पुरुष भी स्त्री को अपने पहनावे, अपनी मुस्कान, प्रेम के बाह्य प्रदर्शन, चितवन, हावभाव, अलंकारिक वाणी, बालों को नाना प्रकार से सँवारने तथा अन्य छलबल से फँसाने का प्रयास करता है।

काम एक प्रभावकारी शक्ति है। इससे छुटकारा पाना अत्यधिक कठिन है। इसी कारण से शास्त्रों तथा सन्तों ने लोगों में वैराग्य तथा विवेक उत्पन्न करने तथा उन्हें कामुक प्रवृत्तियों तथा आक्रामक प्रहारों से अलग कर देने के लिए स्त्रियों की निन्दा की है तथा उन्हें दोषी ठहराया है। श्री शंकराचार्य, श्री दत्तात्रेय, श्री राम, श्री तुलसीदास—सभी ने घृणा, पक्षपात अथवा द्वेष के कारण नहीं वरन् लोगों का संसाररूपी दलदल से उद्धार करने के लिए करुणा के कारण ही स्त्रियों की निन्दा की है। उनकी स्त्रियों की निन्दा में पुरुषों की निन्दा का अर्थ भी अन्तर्विष्ट है। उनकी निन्दा का लक्ष्य सांसारिक लोगों के मन को यौन-पाप से अलग करना तथा यौन-सुख के प्रति जुगुप्सा तथा सांसारिक पदार्थों के प्रति वैराग्य उत्पन्न करना है। लोग इसका गलत अर्थ लगाते हैं।

जो धर्मग्रन्थ तथा सन्त एक स्थान पर स्त्रियों की निन्दा करते हैं वे ही दूसरे स्थान पर उनकी प्रशंसा करते हैं। वे कहते हैं : "स्त्रियों की पूजा की जानी चाहिए। वे अर्धांगिनी हैं। वे शक्ति की अभिव्यक्ति हैं। जो नारियों को पूजते हैं

वे ही समृद्धि प्राप्त करते हैं।" अतः नारियो! धर्मग्रन्थों तथा सन्तों के मर्म को समझने का प्रयास कीजिए तथा बुद्धिमती बनिए।

चरित्रहीन लोगों की संगति तथा कृत्रिम आधुनिक सभ्यता के कारण नवयुवकों के मन अशुद्ध संस्कारों तथा वासनाओं से सन्तृप्त हैं। स्त्री की संगति अथवा उसके सम्बन्ध में चर्चा मात्र मन को दूषित विचारों की ओर घसीट ले जाने के लिए पर्याप्त है। अतः मुझे अधिकांश जनता के मन के समक्ष यह मानसिक चित्र रखना है कि स्त्री की संगति ही तबाही ढायेगी। जब मैं यह कहता हूँ कि स्त्री चमड़े की बोरी मात्र है तो मैं स्त्री से किसी तरह घृणा नहीं करता हूँ। ऐसा मैं जुगुप्सा उत्पन्न करने तथा वैराग्य जगाने के लिए करता हूँ। वास्तव में स्त्री की माँ शक्ति के रूप में आराधना की जानी चाहिए। वही इस विश्व की सृजनकर्त्री, जनित्री तथा सम्पोषिका है। उसे पूज्य मानना चाहिए। भारत में स्त्रियों के धार्मिक-भाव के कारण ही धर्म परिरक्षित तथा सम्पोषित है। भक्ति हिन्दू महिलाओं की मौलिक विशेषता है। काम से घृणा करें, किन्तु कामिनी से नहीं।

प्रारम्भ में जब तक आपको वैराग्य तथा विवेक की प्राप्ति नहीं हो जाती तब तक आपको स्त्री की संगति को विष-तुल्य समझना चाहिए। जब आपको विवेक तथा वैराग्य उपलब्ध हो जायेंगे तो काम आप पर अधिकार नहीं कर सकेगा। **"सर्वं खल्विदं ब्रह्म**—सब-कुछ ब्रह्म ही है।" ऐसा आप देखेंगे तथा अनुभव करेंगे। आपमें आत्म-दृष्टि होगी। यौन-विचार लुप्त हो जायेगा।

व्रत महान् सहायक है

ब्रह्मचर्य-व्रत आपको प्रलोभनों से निश्चित सुरक्षा प्रदान करेगा। यह काम पर आक्रमण करने के लिए एक सशक्त अस्त्र है। यदि आप ब्रह्मचर्य-व्रत नहीं धारण करते तो आपका मन आपको किसी समय प्रलोभन देगा। आपमें प्रलोभनों के प्रतिरोध करने का सामर्थ्य न होगा और आप उसका निश्चित अहेर बन जायेंगे। जो व्यक्ति दुर्बल तथा स्त्रैण है वही इस व्रत को ग्रहण करने से भयभीत होता है। वह अनेक बहाने बनाया करता है और कहता है : "मैं व्रत के बन्धन में क्यों पड़ूँ? मेरा संकल्प सबल तथा शक्तिशाली है। मैं किसी भी प्रकार के प्रलोभन का प्रतिरोध कर सकता हूँ। मैं उपासना करता हूँ। मैं संकल्प-शक्ति के संवर्द्धन का अभ्यास करता हूँ।" अन्त में वह पश्चाताप करता है। उसका इन्द्रियों पर नियन्त्रण नहीं रहता है। जिस व्यक्ति के मन के कोने में त्याज्य पदार्थ की वासना छिपी रहती है, वही इस प्रकार के बहाने आयात करता है। आपमें सम्यक् समझ,

विवेक तथा वैराग्य होना चाहिए। तभी आपका त्याग चिरन्तन तथा स्थायी होगी। यदि आपका त्याग विवेक तथा वैराग्य के परिणाम-स्वरूप नहीं है तो मन त्याग की हुई वस्तु को पुनः प्राप्त करने के अवसर की प्रतीक्षा में ही रहेगा।

यदि आप अदृढ़ हैं तो एक माह का ब्रह्मचर्य-व्रत लीजिए और तब उसे तीन महीने के लिए बढ़ाइए। इससे आपको कुछ मनोबल प्राप्त होगा। अब आप इस अवधि को छह महीने तक बढ़ा सकेंगे। शनैः-शनै आप इस व्रत को एक अथवा दो तीन वर्ष तक बढ़ाने में समर्थ हो जायेंगे। अकेले सोइए और प्रतिदिन खूब जप, कीर्तन तथा ध्यान कीजिए। अब आप काम से घृणा करने लग जायेंगे। आप स्वतन्त्रता तथा अनिवर्चनीय आनन्द का अनुभव करेंगे। आपकी जीवनसंगिनी को भी प्रतिदिन जप, कीर्तन तथा ध्यान करना चाहिए।

मोहन! ब्रह्मचर्य-व्रत भंग करके आपने एक अक्षम्य अपराध किया है। जहाँ कामवासना विद्यमान हो वहाँ धर्म अथवा आध्यात्मिकता कैसे रह सकती है? आप एक वृद्ध व्यक्ति हैं। आप यह बहाना करके : "पुरानी वासनाएँ शक्तिशाली हैं, परिस्थितियाँ बलवती हैं" उसी पुराने नीच कृत्य को निर्लज्जतापूर्वक क्यों दोहराते है? आपका उत्तर कोई भी नहीं सुनेगा। जब-कभी आपकी कामवासना अपना फण उठाये तभी आपको उसे नियन्त्रित करना होगा। भगवान् शिव आपको इस भयानक शत्रु को नियन्त्रित करने तथा आध्यात्मिक साधना जारी रखने के लिए मनोबल प्रदान करें!

संकल्पशक्ति-संवर्द्धन तथा आत्म-संसूचन

यदि आप कामवासनाओं का निराकरण करके, राग-द्वेष का उन्मूलन करके, अपनी आवश्यताओं को कम करके तथा तितिक्षा का अभ्यास करके अपनी संकल्प-शक्ति को शुद्ध, दृढ़ तथा अप्रतिरोध्य बना लें तो कामवासना नष्ट हो जायेगी। संकल्प-शक्ति कामवासना की प्रबल शत्रु है।

काम अशुद्ध संकल्प से उद्भूत होताा है। अति-भोग इसे बलवान् बनाता है। जब आप दृढ़तापूर्वक इससे मुँह मोड़ लेते हैं तो यह लुप्त तथा नष्ट हो जाता है।

अपने ध्यान-कक्ष में अकेले बैठ जाइए। अपने नेत्र बन्द कर लीजिए। निम्नलिखित सूत्रों को धीरे-धीरे बार-बार दोहराइए। मन से इन सूत्रों के अर्थ पर विचार भी कीजिए। अब, अपने मन तथा बुद्धि को इन्हीं विचारों से सन्तृप्त कर

दीजिए। आपका समग्र शरीर—माँस, रुधिर, अस्थियाँ, स्नायु तथा कोशिकाएँ—निम्नांकित विचारों से प्रभावी रूप से स्पन्दित होना चाहिए :

मैं परम शुद्ध हूँ, शुद्धोऽहम् ॐ ॐ ॐ
मैं अलिंग आत्मा हूँ ॐ ॐ ॐ
आत्मा में न कामुकता है न कामवासना ॐ ॐ ॐ
कामुकता मानसिक विकार है; मैं इस विकार का साक्षी हूँ ॐ ॐ ॐ
मैं असंग हूँ ॐ ॐ ॐ
मेरा संकल्प शुद्ध, दृढ़ तथा अप्रतिरोध्य है ॐ ॐ ॐ
मैं पूर्णरूप से शारीरिक तथा मानसिक ब्रह्मचर्य में संस्थित हूँ ॐ ॐ ॐ
मैं अब पवित्रता का अनुभव कर रहा हूँ ॐ ॐ ॐ

आप एक बार रात्रि में भी बैठ सकते हैं। प्रारम्भ में दश मिनट बैठिए। इस अवधि को शनैः-शनैः आधे घण्टे तक बढ़ाइए। कार्य करते समय भी मानसिक भाव बनाये रखिए।

किसी कागज पर बड़े अक्षरों में छः बार लिखिए : "ॐ पवित्रता।" इस कागज को अपनी जेब में रखिए। इसे दिन में कई बार पढ़िए। अपने घर में किसी प्रमुख स्थान पर इसे चिपका भी दीजिए। अपने मन के सम्मुख 'ॐ पवित्रता' शब्द का चित्र स्पष्ट रूप से बनाये रखिए। ब्रह्मचारी सन्तों तथा उनके प्रभावशाली कार्यों को प्रतिदिन कई बार स्मरण कीजिए। पवित्र ब्रह्मचर्य-जीवन के नानाविध लाभों तथा अपवित्र जीवन की हानियों और बुराइयों पर विचार कीजिए। अभ्यास कभी न छोड़िए। नियमनिष्ठ तथा व्यवस्थित रहिए। आप धीरे-धीरे अधिकाधिक शुद्धतर होते जायेंगे और अन्त में आप एक ऊर्ध्वरेता योगी बनेंगे। धैर्यवान् रहें।

प्रतिदिन अनुभव करें : "मैं भगवत्कृता से दिनानुदिन सर्वथा श्रेष्ठतर होता जा रहा हूँ।" यह आत्म-संसूचन है। यह एक अन्य प्रभावकारी विधि है।

दृष्टिकोण परिवर्तित कीजिए

आपको अपने मन में स्त्रियों के प्रति मातृ-भाव, ईश्वरी-भाव अथवा आत्म-भाव रखना चाहिए। स्त्रियों को भी अपने मन में पुरुषों के प्रति पिता-भाव अथवा ईश्वर-भाव अथवा आत्म-भाव रखना चाहिए।

भगिनी (बहन)-भाव रखना पर्याप्त नहीं होगा। उसमें आप असफल हो सकते

हैं। पुरुष का नारी के प्रति भगिनी-भाव तथा स्त्री का पुरुष के प्रति भ्रातृ-भाव रखना यौनाकर्षण तथा दूषित विचारों के उन्मूलन में अधिक सहायक नहीं होंगे। भगिनी-भाव ने अनेक लोगों को प्रवञ्चित तथा भ्रमित किया है। शुद्ध प्रेम किसी भी क्षण, जब व्यक्ति असावधान तथा प्रमादी रहता है, कामवासना में विकृत हो जायेगा। नाग-भाव ही साधक की अत्यधिक-मात्रा में सहायता कर सकता है। नाग-भाव के पश्चात् ही पुरुष में मातृ-भाव तथा स्त्री में पितृ-भाव आता है। तब अन्त में दोनों में आत्म-भाव आता है। संघर्षरत सच्चे साधक ही, न कि शुष्क दार्शनिक इसका भलीभाँति अनुभव कर सकते हैं।

भाव का संवर्द्धन बहुत ही दुस्साध्य है। सभी स्त्रियाँ आपकी माताएँ तथा बहनें हैं, इस भाव को विकसित करने में आप एक सौ बार असफल हो सकते हैं। कोई बात नहीं है। अपनी साधना में अध्यवसाय पूर्वक लगे रहें। अन्ततः आपकी सफलता अवश्यम्भावी है। आपको पुराने मन को नष्ट करके नये मन का निर्माण करना होगा। तथापि यदि आप अमरत्व तथा शाश्वत आनन्द प्राप्त करना चाहते हैं तो आपको इसे करना ही होगा। यदि आप में अपने संकल्प के प्रति जोश और यदि आपमें लौहनिश्चय है तो आप अवश्यमेव सफल होंगे। सतत अभ्यास से भाव धीरे-धीरे प्रकट होंगे। आप शीघ्र ही उस भाव में प्रतिष्ठित हो जायेंगे। अब आप सुरक्षित हैं।

पुरुष अथवा स्त्री को आत्मविश्लेषण तथा आत्मपरीक्षा का अभ्यास करना चाहिए। उन्हें काम के क्रियाशील होने तथा व्यवहार करने के ढंग कामवासना को उद्दीप्ति करने वाले तथा व्यवहार करने के ढंग, कामवासना को उद्दीप्ति करने वाले पदार्थों तथा मनोभावों तथा एक जाति के व्यक्ति का अपनी प्रतिजाति के व्यक्ति का शिकार होने की रीति की सम्यक् जानकारी होनी चाहिए। तभी काम का नियन्त्रण सम्भव है।

मन पुनः भीतर-ही-भीतर कुछ शरारत करने का प्रयास करेगा। यह बहुत ही कूटनीतिक है। इसके तरीकों तथा गुप्त भूमिगत कार्यों का पता लगाना अत्यन्त दुष्कर है। इसके लिए कुशाग्र बुद्धि, बार-बार के सुविचारित अन्तरावलोकन तथा अप्रमत्त निगरानी की आवश्यकता है। जब कभी भी मन में कुविचारों के साथ स्त्री का मानसिक चित्र प्रकट हो तो मन से **'ॐ दुर्गादेव्यै नमः'** का जप करें तथा मानसिक प्रणिपात करें। शनै-शनैः पुराने कुविचार नष्ट हो जायेंगे। जब कभी आप किसी स्त्री को देखें तो मन में यह भाव लायें और इस मन्त्र का मानसिक

जप करें। आपकी दृष्टि पवित्र हो जायेगी। सभी स्त्रियाँ जगज्जननी की अभिव्यक्ति हैं। यह विचार नष्ट कर दें कि स्त्री भोग का विषय है तथा यह विचार प्रतिस्थापित करें कि वह पूजनीय वस्तु तथा दुर्गा माँ अथवा काली की अभिव्यक्ति है।

भाव (मनोभाव) को परिवर्तित कीजिए। आपको भूलोक में ही स्वर्ग-सुख प्राप्त होगा। आप ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठतित हो जायेंगे। सच्चा ब्रह्मचारी बनने के लिए यह एक प्रभावशाली विधि है। सभी स्त्रियों में आत्मा के दर्शन कीजिए। सभी नाम-रूपों का निषेध कीजिए तथा उनके मूल में वर्तमान सार वस्तु अस्ति-भाति-प्रिय अथवा सत्-चित्-आनन्द को ही स्वीकार कीजिए। वे प्रतिबिम्ब, मृग-मरीचिका तथा आकाश की नीलिमा के समान मिथ्या हैं।

वैज्ञानिक के लिए स्त्री विद्युदणुओं का पुंज है। कणाद-विचार-धारा के वैशेषिक दार्शनिक के लिए परमाणुओं, द्व्यणुओं तथा त्र्यणुओं का पिण्ड है। व्याघ्र के लिए वह शिकार है। कामुक पति के लिए वह भोग-पदार्थ है। बिलखते हुए शिशु के लिए वह दुग्ध, मिष्ठान्न तथा अन्य भोगों को प्रदान करने वाली स्नेहमयी माँ है। ईर्ष्यालु देवरानी, जेठानी तथा सास के लिए वह शत्रु है। विवेकी तथा वैरागी के लिए वह अस्थि, मांस, मल, मूत्र, पीप, स्वेद, रक्त तथा कफ का सम्मिश्रण है। पूर्ण ज्ञानी के लिए वह सत्-चित्-आनन्द आत्मा है।

कामवासना तभी जाग्रत होती है जब आप स्त्री के शरीर के विषय में सोचते हैं। जब आप महिलाओं की संगति में हों तो महिलाओं के शरीरों में गुप्त रूप से विद्यमान् एक अमर शुद्ध आत्मा का ही चिन्तन करें। निरन्तर प्रयास करें। यौन-विचार धीरे-धीरे लुप्त हो जायेगा और उसी के साथ यौनाकर्षण तथा कामुकता भी जाती रहेगी। यह कामवासना तथा यौनविचार के उन्मूलन के लिए सर्वाधिक प्रभावशाली विधि है। मन-ही-मन इस सूत्र को दोहरायें : **"एक सत्-चित्-आनन्द आत्मा।"** यह कामवासना के विनाश तथा वेदान्त की एकात्मकता के साक्षात्कार की ओर ले जायेगा।

ब्रह्म में न तो काम है और न कामवासना ही। ब्रह्म नित्य-शुद्ध है। उस अलिंग आत्मा का निरन्तर चिन्तन करने से आप ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित हो जायेंगे। यह सर्वाधिक शक्तिशाली तथा प्रभावकारी विधि है। यह उन लोगों के लिए सर्वोत्तम साधना है जिन्हें विचार की उपयुक्त प्रविधि का ज्ञान है। किन्तु कामवासना-क्षय के लिए ज्ञान योग-मार्ग के उन्नत साधक ही एकमात्र ब्रह्मविचार

की विधि का आश्रय ले सकते हैं। अधिसंख्य लोगों के लिए तो संयुक्त विधि ही बहुत अनुकूल तथा लाभप्रद होती है। जब शत्रु बहुत प्रबल हों तो उनका नाश करने के लिए लाठियों, तमञ्चों (पिस्तौलों), बन्दूकों, यन्त्र तोपों (मशीनगनों), पनडुब्बियों, विध्वंसकों (टारपीडो), अग्न्यस्त्रों (बमों) तथा विषैली गैसों की संयुक्त विधि का प्रयोग किया जाता है। इसी भाँति कामरूपी प्रबल शत्रु के विनाश में संयुक्त विधि नितान्त आवश्यक है।

२१

हठयोग द्वारा बचाव

कुछ विशिष्ट योगासनों तथा प्राणायाम का नियमित अभ्यास व्यक्ति की उसके कामावेग के निग्रह के प्रयास में प्रर्याप्त सहायता करेगा। आपके ऊर्ध्वरेता बनने में शीर्षासन तथा सर्वांगासन आपकी बहुत-कुछ सहायता करेंगे। इन्हें विपरीतकरणी-मुद्रा भी कहते हैं। प्राचीन काल में घेरण्ड, मत्स्येन्द्र तथा गौरक्ष जैसे हमारे ऋषियों ने हमें ऊर्ध्वरेता बनाने के लिए इनकी विशेष रूप से अभिकल्पना की थी। प्राणायाम के द्वारा मन शनैः-शनैः स्थूल से सूक्ष्म की ओर अग्रसर होता है। अतः यह कामोत्तेजना पर श्रेयस्कर रोक रखता है। जब कभी कोई कुविचार आपके मन में क्षुब्ध करे तो आप तत्काल पद्मासन अथवा सिद्धासन करना आरम्भ कर दें तथा प्राणायाम का अभ्यास करें। विचार तुरन्त आपका पीछा छोड़ देगा।

सिद्धासन

योगियों ने ब्रह्मचर्य के अभ्यास के लिए इस आसन की अत्यधिक प्रशंसा की है। यह व्यक्ति को उसकी कामवासना पर नियन्त्रण करने, नैश-प्रस्रावों की रोकथाम करने तथा उसके ऊर्ध्वरेता योगी बनने में सहायता प्रदान करता है। यह आसन जप तथा ध्यान-काल में बैठने के लिए उपयोगी है।

बाँये पैर की एड़ी को गुदा-स्थान पर तथा दाहिने पैर की एड़ी को जननेन्द्रिय के मूल-भाग पर अथवा उसके किंचित् ऊपर रखिए। धड़, ग्रीवा तथा शिर को सीधा रखिए। हाथों को दाहिने पैर की एड़ी पर रखिए।

आरम्भ में आधे घण्टे तक बैठिए और तब इस अवधि को शनैः-शनैः तीन

घण्टे तक बढ़ाइए। एक आसन में तीन घण्टे तक बैठना ही 'आसनजय' कहलाता है।

शीर्षासन

यह सब आसनों का राजा है। इस आसन से प्राप्त होने वाले लाभ अगण्य तथा अनिर्वचनीय हैं। इस आसन की अभिकल्पना नैशप्रस्रावों को रोकने तथा वीर्य के ओज-शक्ति के रूप में मस्तिष्क की ओर प्रवाहित होने में सहायता करने के लिए विशेष रूप से की गयी है।

तह किया हुआ एक कम्बल भूमि पर बिछा दीजिए। दोनों हाथों की उँगलियों को एक-दूसरे में डाल कर ताला-सा बना लीजिए और उसे कम्बल पर रखिए। अब अपने शिर के उपरिस्थ-भाग को अपने हाथों के बीच में रखिए। पैरों को बिना झटके के धीरे-धीरे इतना ऊपर उठाइए कि वे एकदम सीधे हो जायें। अपने अभ्यास के प्रारम्भ में आप दीवार का सहारा लें अथवा अपने मित्रों में से किसी को अपनी टाँगे पकड़ने के लिए कहें। यथोचित अभ्यास के पश्चात्, आप सन्तुलन बनाये रख सकेंगे। जब आसन कर चुकें तो पैरों को बहुत ही धीरे-धीरे नीचे ले आयें। शीर्षासन करने के समय केवल नासिका के द्वारा ही श्वास लें।

अनियमित रूप से कुम्भक, रेचक तथा पूरक करने से आपके आसन में अस्थिरता आयेगी।

इस आसन का अभ्यास उस समय करें जब आपका पेट खाली अथवा हलका हो। इस आसन के नियमित अभ्यास से आमाशय, अन्त्र, फुप्फुस, हृदय, वृक्क, जनन-मूत्र-तन्त्र, कान तथा नेत्र के अनेक चिरकालिक असाध्य रोग ठीक हो जाते हैं।

आसन करते समय आपके पैर इधर-उधर हिलते हों तो थोड़े समय तक अपने श्वास को रोके रखिए। इससे पैर स्थिर हो जायेंगे।

सर्वांगासन

यह एक महत्त्वपूर्ण आसन है जो ब्रह्मचर्य के अभ्यास में आपकी निश्चय ही सहायता कर सकता है। शीर्षासन तथा सर्वांगासन के अभ्यास से पाचक, रक्तवह तथा स्नायु-तन्त्र रहस्यमय ढंग से तत्काल शक्ति प्राप्त करते हैं। प्रिय मित्रो! यह कोई अर्थवाद अथवा रोचक शब्द नहीं है। अभ्यास कीजिए तथा स्वयं लाभकर प्रभाव अनुभव कीजिए। यह स्वप्नदोष तथा अन्य अनेक व्याधियों का सर्वोत्कृष्ट

उपचार है। अभ्यासकर्ता के नेत्रों में स्वस्थ अरुणिमा तथा मुख पर विशिष्ट आभा, रमणीयता, सौन्दर्य तथा आकर्षण परिमल होता है।

भूमि पर एक कम्बल बिछा दें। पीठ के बल चित्त लेट जायें। पैरों को धीरे-धीरे ऊपर उठायें। धड़, नितम्बों तथा पैरों को ऊपर उठायें। पीठ को दोनों पार्श्वों से हाथों का अवलम्बन दें। अब शरीर का सारा भार कन्धों तथा कोहनियों पर टिक जायेगा। पैरों को स्थिर रखें। चिबुक को वक्षःस्थल के साथ दृढ़तापूर्वक जमायें रखें। केवल नासारन्ध्रों से धीरे-धीरे श्वास लें। पाँच मिनट से आरम्भ करें, तत्पश्चात् जितने समय तक आसन में रह सकें, रहने का प्रयास करें।

मत्स्यासन

इस आसन को सर्वांगासन के पश्चात् तुरन्त करना चाहिए। सर्वांगासन देर तक करने के कारण जो ग्रीवा में कठोरता तथा ग्रैव-भाग में उद्वेष्ट आ जाता है, वह इस आसन से दूर हो जाता है। इससे ग्रीवा तथा कन्धों के संकुलित-अंगों की स्वभावतः मालिश हो जाती है। इसके अतिरिक्त, यह इस बात को सुनिश्चित करता है कि साधक को सर्वांगासन से अधिकतम लाभ प्राप्त हो।

कम्बल पर दाहिना पैर बायीं जंघा पर तथा बाँया पैर दाहिनी जंघा पर रख कर पद्मासन में बैठ जायें। तदनन्तर पीठ के बल चित्त लेट जायें। शिर को पीछे की ओर फैलायें जिससे भूमि पर एक ओर आपके शिर का उपरिस्थ-भाग तथा दूसरी ओर केवल दोनों नितम्ब दृढ़तापूर्वक टिकें रहें और इस प्रकार धड़ का एक पुल बन जाये। हाथों को जंघाओं पर रखें अथवा उनसे पादांगुष्ठों को पकड़ लें। इसमें आपको अपनी पीठ को पर्याप्त मोड़ना होगा। मत्स्यासन अनेक रोगों का विनाशक है। यह सामान्य स्वास्थ्य के लिए भी बहुत लाभदायक है।

पादांगुष्ठासन

बायीं एड़ी को ठीक मूलाधार के मध्य—गुदा तथा जननेन्द्रिय के मध्य के स्थान—में रखें। शरीर का सारा भार पादांगुलियों पर, विशेषकर बायें पादांगुष्ठ पर रखें। दाहिने पैर को बायीं जंघा पर घुटनों के पास रखें। अब सन्तुलन को बनाये रख कर सावधानीपूर्वक बैठ जायें। यदि आप इस आसन को स्वतन्त्र रूप से करने में कठिनाई अनुभव करें तो आप एक बेंच की सहायता ले सकते हैं अथवा दीवार के सहारे बैठ सकते हैं। हाथों को कूल्हों के पार्श्व में रखें। श्वास धीरे-धीरे लें।

मूलाधार-स्थान की चौड़ाई चार इंच है। इसके नीचे वीर्य नाड़ी है जो अण्डकोषों से वीर्य ले जाती है। इस नाड़ी को एड़ी से दबाने से वीर्य का बाह्य प्रवाह रुक जाता है। इस आसन के निरन्तर अभ्यास से स्वप्नदोष अथवा वीर्यस्खलन दूर हो जाता है तथा व्यक्ति ऊर्ध्वरेता योगी बन जाता है। शीर्षासन, सर्वांगासन तथा सिद्धासन का संयुक्त अभ्यास ब्रह्मचर्य-रक्षा के लिए अत्यधिक सहायक है। प्रत्येक आसन का अपना विशिष्ट कार्य होता है। सिद्धासन अण्डकोशों तथा उसके कोशाणुओं पर प्रभाव डालता है तथा वीर्य की उत्पत्ति को रोकता है। शीर्षासन तथा सर्वांगासन वीर्य को मस्तिष्क की ओर प्रवाहित करने में सहायता करते हैं। पादांगुष्ठासन वीर्य-नाड़ी पर कार्यसाधन-रीति से प्रभाव डालता है।

आसनाभ्यास-सम्बन्धी निर्देश

शारीरिक व्यायाम प्राण को बाहर खींचते हैं। आसन प्राण को अन्दर खींचते हैं। आसन केवल शारीरिक ही नहीं, बल्कि आध्यात्मिक भी हैं। वे इन्द्रियों, मन तथा शरीर को नियन्त्रित करने में अत्यधिक योग देते हैं। इनसे शरीर, नाड़ी तथा मांसपेशियाँ शुद्ध हो जाती हैं। यदि आप पाँच वर्ष तक प्रतिदिन पाँच सौ बार दण्ड-बैठक करें तब भी आपको उनमें किसी प्रकार का कोई आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त नहीं होगा। साधारण शारीरिक व्यायामों से केवल बाह्य रूप से शरीर की मांसपेशियों का विकास होता है। शारीरिक व्यायाम के अभ्यास से व्यक्ति सुन्दर डीलडौल वाला पहलवान बन सकता है; किन्तु आसनों से शारीरिक तथा आध्यात्मिक दोनों प्रकार का विकास अभिप्रेत है।

भूमि पर एक कम्बल बिछा दें और उस पर आसनों का अभ्यास करें। शीर्षासन करते समय शिर के नीचे पतला तकिया उपयोग करें। आसनों का अभ्यास करते समय लँगोटी अथवा कौपीन पहनें। उस समय चश्मा तथा अधिक वस्त्रों का उपयोग न करें।

जो लोग शीर्षासन अधिक समय तक करते हैं, उन्हें आसन की समाप्ति पर हलका उपाहार अथवा एक प्याला दूध लेना चाहिए। आसनों का अभ्यास नियमित तथा सुव्यवस्थित रूप से करें। जो लोग मनमौजी ढंग से अभ्यास करते हैं, उन्हें कुछ लाभ नहीं होता। आसनों से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए नियमित रूप से अभ्यास करना अत्यावश्यक है। साधारणतया लोग प्रारम्भ में

दो महीने तक बड़ी रुचि तथा समुत्साह से आसनों का अभ्यास करते हैं। फिर अभ्यास करना छोड़ देते हैं। यह बड़ी भारी भूल है।

आसनों का अभ्यास खाली पेट अथवा हलके पेट अथवा भोजन करने से कम-से-कम तीन घण्टे बाद करना चाहिए। आसनों का अभ्यास करते समय जप तथा प्राणायाम को भी लाभप्रद ढंग से सम्मिलित किया जा सकता है। तब वह वास्तविक योग का रूप ले लेता है। आसनों का अभ्यास नदियों के रेतीले तट, खुले हवादार स्थानों में तथा समुद्र-तट पर भी किया जा सकता है। यदि आप आसन तथा प्राणायाम का अभ्यास कमरे में करते हैं तो ध्यान रखें कि कमरा भरा हुआ न हो। कमरा स्वस्छ तथा सुसंवातित होना चाहिए।

प्रारम्भ में प्रत्येक आसन का अभ्यास एक या दो मिनट तक करें और फिर क्रमशः तथा धीरे-धीरे समय को यथाशक्य बढ़ायें।

सभी योगासनों का अभ्यास करते समय बहुत अधिक श्रम नहीं पड़ना चाहिए। अभ्यास-काल में हर्ष तथा उल्लास निरन्तर बना रहना चाहिए।

यहाँ मैंने आपको कुछ विशिष्ट आसनों के सम्बन्ध में निर्देश दिये हैं जो ब्रह्मचर्य-पालन में परम उपयोगी हैं। लगभग नब्बे आसनों के सम्बन्ध में विस्तृत निर्देश के लिए मेरी 'योगासन' नामक पुस्तक का अवलोकन करें।

मूल-बन्ध

बायें पैर की एड़ी से योनि-स्थान (गुदा तथा जननेन्द्रिय के मध्य भाग) को दबायें। गुदा को सिकोड़ें। दाहिने पैर की एड़ी को जननेन्द्रिय के मूल में रखें। यह मूल-बन्ध है।

अपान-वायु, जो मल को बाहर निकालने का कार्य करती है, स्वभावतः नीचे की ओर जाती है। मूल-बन्ध के अभ्यास से गुदा को सिकोड़ने और अपान वायु को बलपूर्वक ऊपर की ओर खींचने से वह ऊपर की ओर संचरित होने लगती है। मूल-बन्ध ब्रह्मचर्य-पालन में अत्यधिक उपयोगी है। यह पूरक-प्राणायाम के समय तथा जप और ध्यान से समय भी किया जा सकता है।

मूल-बन्ध एक यौगिक क्रिया है जो योग के साधकों की अपान तथा काम-शक्ति को ऊपर की ओर ले जाने में सहायता करता है। अपान की प्रवृत्ति नीचे की ओर प्रवाहित होने की है। अपान तथा काम-शक्ति का यह अधोमुखी प्रवाह मूल-बन्ध के अभ्यास से अवरुद्ध होता है। योग का साधक सिद्धासन में

बैठ जाता है तथा गुदा को सिकोड़ने तथा कुम्भक-प्राणायाम के अभ्यास द्वारा अपान तथा काम-शक्ति को ऊपर ले जाता है। इसमें दीर्घकालीन अभ्यास से वीर्य का अधोमुखी प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है तथा वीर्य का उदात्तीकरण अथवा रूपान्तरण ओज-शक्ति में होता है जो ध्यान में सहायक होती है। यह बन्ध स्वप्नदोष को रोकता तथा ब्रह्मचर्य-पालन में सहायता करता है।

प्राचीन काल के ऋषियों तथा योगियों द्वारा निर्दिष्ट ऐसे लाभकारी योगाभ्यास का लोग दुरुपयोग करते हैं और वर्तमानकाल के कुछ अनुभवहीन, अज्ञानी योगप्रेमी उन्हें गलत रूप से निर्धारित करते हैं। वे अपने स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति तथा सुखद जीवन-यापन करने के लिए इस क्रिया को सामान्य जनवर्ग को सिखलाते हैं। वे शानदार विज्ञापन देते हैं कि लोग इस क्रिया के द्वारा जीवन-द्रव्य को दीर्घकाल तक रोके रख सकते है तथा सुदीर्घ अवधि तथा प्रगाढ़ यौन-सुख भोग सकते हैं। वे धनाढ्य गृहस्थों को इस बन्ध की शिक्षा देते हैं। कुछ भ्रमित गृहस्थ इन धूर्त योगियों के—जिनका लक्ष्य सुखद जीवन के लिए धनोपार्जन करना है—ऐसे कथनों से प्रलुब्ध हो जाते हैं और इस क्रिया का आश्रय लेते हैं। वे इस क्रिया के बल पर विषय-सुख में अधिक निरत होते हैं, अपनी जीवन-शक्ति खो बैठते हैं और अतीव अल्पकाल में मनस्ताप तथा विनाश को प्राप्त होते हैं। इस क्रिया के अविवेकपूर्ण अभ्यास से अपान विस्थापित हो जाता है तथा वे नानाविध रोगों—यथा अन्त्रशूल मलावरोध तथा अर्श—से आक्रान्त हो जाते हैं।

इन योगप्रेमियों ने जनता को अत्यधिक हानि पहुँचायी है। इन भ्रमित आत्माओं ने प्राचीन काल के ऋषियों तथा योगियों की इस लाभकारी क्रिया को ब्रह्मचर्य की प्राप्ति तथा ब्रह्मचर्य के रूप में प्राणायाम में सफलता के लिए निर्दिष्ट करने के स्थान में गृहस्थों को अधिक कामुक बनने तथा अधिक विषय-विरत होने के लिए उत्तेजित किया है। इन्होंने योग-शास्त्र तथा योगियों को कलंकित किया है।

वे तर्क प्रस्तुत करते हैं : "हमें आधुनिक समय के अनुसार चलना है। लोग इसे चाहते हैं। वे ऐसी क्रियाओं को पसन्द करते हैं। वे लाभान्वित होते हैं। इस क्रिया के अभ्यास से वे अधिक सुखी हैं।" यह निश्चय ही अद्भुत दर्शन है। यह भोगवादियों तथा चार्वाकों का दर्शन है। यह विरोचन का दर्शन है। यह वैषयिक जीवन का दर्शन है।

हे अज्ञानी मानव ! अपने नेत्र खोलो। अज्ञान की गहन निद्रा से जाग जाओ। इन धूर्त योगियों अथवा नकली गुरुओं की मधुर वाणी तथा अशोभनीय प्रदर्शनों से प्रभावित न होओ। आप बरबाद हो जायेंगे। ऐसे व्यवहार त्याग दें। जीवन-द्रव्य को बचाये रखें। इसे जप, कीर्तन, प्राणायाम तथा विचार के द्वारा ओजस् में रूपान्तरित करें। पवित्र जीवन-यापन करें। जीवन उच्चतर उद्देश्यों के लिए है। जीवन आत्मसाक्षात्कार के लिए है।

हे योग प्रेमियों ! लोगों को न बहकायें। आप अपने को प्राचीन काल के पूज्य ऋषियों के महान् अनुयायी अथवा शिष्य कहें। इन क्रियाओं को नीच उद्देश्यों के लिए निर्दिष्ट न करें। उदात्त तथा उदारचेता रहें। उच्च लक्ष्य रखें। सच्चे योगी बनें। यदि आप योग-ज्ञान का इस रीति से प्रचार-प्रसार करेंगे तो समझदार तथा सुसंस्कृत व्यक्ति आप पर हँसेंगे। उन्हें ब्रह्मचर्य-पालन के तरीके का ज्ञान प्रदान करें। उन्हें सच्चा योगी बनायें। लोग आपको पूज्य मानेंगे तथा आपकी कदर करेंगे।

जालन्धर-बन्ध

कण्ठ को सिकोड़ें। ठुड्डी को दृढ़तापूर्वक सीने से दबायें। यह बन्ध पूरक के अन्त में तथा कुम्भक के आरम्भ में किया जाता है। इसके पश्चात् उड्डीयान-बन्ध की बारी आती है। ये तीनों ही बन्ध एक ही अभ्यास के मानो तीन चरण हैं।

उड्डीयान-बन्ध

बलपूर्वक जोर से श्वास को बाहर निकाल कर फेफड़ों को खाली कर लें। फिर आँतों और नाभि को सिकोड़ लें और उन्हें बलपूर्वक पीठ की ओर अन्दर खींचें जिससे उदर ऊपर उठ कर शरीर के पीछे की ओर वक्षीय-गुहा में चला जाये।

यह बन्ध खड़े हुए अवस्था में भी किया जा सकता है। इस अवस्था में धड़ को थोड़ा आगे की ओर झुकायें, हाथों को जंघाओं पर रखें तथा टाँगों को थोड़ा दूर-दूर रखें। इन तीनों बन्धों का अच्छा संयोजन है। नौलि-क्रिया का विवरण उड्डीयान-बन्ध के आगामी चरण के रूप में दिया जा सकता है।

नौलि-क्रिया

उड्डीयान-बन्ध बैठे-बैठे भी किया जा सकता है; परन्तु नौलि सामान्यतया खड़े हो कर की जाती है। दाहिने पैर को बायें पैर से एक फुट की दूरी पर रखें तथा

दोनों हाथों को दोनों जंघाओं पर टेक दें। इस भाँति पीठ को थोड़ा मोड़ दें। तत्पश्चात् उड्डीयान-बन्ध करें।

अब पेट का बायाँ तथा दाहिना भाग चिपकाये रखें और मध्य भाग को ढीला कर दें। इस समय सभी मांसपेशियाँ सीधी तथा पेट के बीच में खड़ी होंगी। इस तरह जब तक सुविधापूर्वक हो सके, रहें। कुछ दिनों तक केवल इतना ही अभ्यास करें।

कुछ अभ्यास के अनन्तर, पेट के दाहिने भाग को संकुचित करके बायें भाग को ढीला कर दें। उस समय वहाँ की सारी मांसपेशियाँ केवल बायीं ओर एकत्र हो जायेंगी। फिर बायें भाग को संकुचित करके दाहिने भाग को ढीला कर दें। इस प्रकार के क्रमिक अभ्यास से आपको पेट के मध्य की, बायीं और दाहिनी ओर की मांसपेशियों को संकुचित करने की रीति मालूम हो जायेगी।

अब नौलि-क्रिया का अन्तिम-चरण आता है। मांसपेशियों को मध्य में लायें। फिर उन्हें धीरे-धीरे दाहिनी ओर लायें और फिर बायीं ओर ले जायें जिससे एक तरह का चक्राकार-सा बनता रहे। इसी प्रकार दाहिनी से बायीं ओर कई बार करें और फिर उलट कर बायीं से दाहिनी ओर ले जायें। मांसपेशियों को सदैव धीरे-धीरे चक्राकार घुमायें। यदि आप इस क्रिया को क्रमशः तथा धीरे-धीरे नहीं करेंगे तो आपको इससे पूर्ण लाभ नहीं प्राप्त होगा। नौसिखियों को प्रथम के दो-तीन प्रयासों में पेट में थोड़ी पीड़ा अनुभव होगी; परन्तु उन्हें भयभीत नहीं होना चाहिए। दो-तीन दिनों के नियमित अभ्यास के पश्चात् पीड़ा दूर हो जायेगी।

महामुद्रा

भूमि पर बैठ जायें। बायें पैर की एड़ी से गुदा को दबायें। दाहिने पैर को आगे की ओर सीधा फैला दें। दोनों हाथों से दाहिने पैर के अँगूठे को पकड़ लें। श्वास ले कर उसे रोकें। ठुड्डी को सीने पर दृढ़ता से दबायें। दृष्टि को त्रिकुटी पर (अर्थात् भ्रूमध्य मे) जमायें। जितनी देर हो सके, इस मुद्रा में रहें। इसी प्रकार अब दूसरे पैर से अभ्यास करें।

योगमुद्रा

पद्मासन में बैठ जायें। हथेलियों को एड़ियों पर रख लें। धीरे-धीरे श्वास बाहर निकालें तथा आगे की ओर झुकें और अपने मस्तक से भूमि को स्पर्श

करें। यदि आप इस मुद्रा को देर तक टिकाये रखते हैं तो सामान्य रूप से श्वास ले और निकाल सकते हैं; किन्तु यदि आप अल्पकाल तक ही मुद्रा में रहें तो अपना शिर ऊपर उठाने तथा अपनी पूर्वावस्था में आने तक श्वास को रोके रखें और उठने पर श्वास लें। हाथों को एड़ियों पर न रख कर उन्हें पीठ की ओर ले जा कर अपने दाहिने हाथ से बायीं कलाई पकड सकते हैं। यह मुद्रा ब्रह्मचर्य की रक्षा में लाभदायी है। यह उदर की मेदोवृद्धि को कम करता तथा आमाशय और अँतड़ियों के सारे रोगों को दूर करता है। कोष्टबद्धता दूर होती है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है। क्षुधा तथा पाचन-शक्ति में सुधार होता है। यदि आप इस मुद्रा को लगातार देर तक टिकाये नहीं रख सकते तो इस प्रक्रम को कई बार दोहरायें। मध्यावधि में विश्राम करें।

वज्रोलीमुद्रा

यह हठयोग में एक महत्त्वपूर्ण यौगिक क्रिया है। इस क्रिया में पूर्ण सफल होने के लिए आपको कठिन परिश्रम करना पड़ेगा। इस क्रिया में बहुत कम व्यक्ति दक्ष होते हैं। योग के विद्यार्थी विशेष प्रकार से बनवायी हुई चाँदी की एक नालशलाका (कैथीटर) को मूत्र-मार्ग में बारह इंच अन्दर प्रवेश करा कर इसके द्वारा पहले जल खींचते हैं। पर्याप्त अभ्यास के पश्चात् वे दूध, तेल, मधु इत्यादि खींचते हैं। वे अन्त में पारा खींचते हैं। कुछ समय बाद वे बिना चाँदी की नालशलाका के सहारे सीधे मूत्र-मार्ग द्वारा इन तरल पदार्थों को खींच लेते हैं। ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन करने के लिए यह क्रिया अत्युपयोगी है। प्रथम दिन मूत्र-मार्ग में नालशलाका एक इंच, दूसरे दिन दो इंच और तीसरे दिन तीन इंच ही प्रवेश करायें; इसी प्रकार बढ़ाते जायें। जब तक बारह इंच नालशालका का भीतर प्रवेश न हो जाये, तब तक धीरे-धीरे अभ्यास करते रहें। मार्ग साफ तथा प्रवाही बन जाता है। राजा भर्तृहरि इस क्रिया को बहुत दक्षता से कर लेते थे।

इस मुद्रा को करने वाले योगी का एक बूँद वीर्य बाहर नहीं निकल सकता और यदि निकल भी जाये तो वह इस मुद्रा के द्वारा उसे वापस अन्दर खींच सकता है। जो योगी अपने वीर्य को ऊपर खींच कर सुरक्षित रख सकता है, वह मृत्यु पर भी विजय पा लेता है। उसके शरीर से सुगन्ध निकलती है।

वाराणसी के त्रिलिंग स्वामी ने इस क्रिया में सिद्धि प्राप्त कर ली थी। लोनावाला के स्वामी कुवलयानन्द जी इस मुद्रा का प्रशिक्षण दिया करते थे।

कुम्भक करें। जब तक आप श्वास यथेच्छ समय तक न रोक सकें तब तक इसी प्रकार बढ़ाते जायें।

प्राणायाम करते समय 'ॐ', गायत्री अथवा किसी अन्य मन्त्र का मानसिक जप करें। ऐसा भाव रखें कि अन्दर श्वास लेते समय दया, क्षमा, प्रेम इत्यादि सभी दैवी सम्पत्तियाँ आप में प्रवेश कर रही हैं और प्रश्वास के साथ काम, क्रोध, लोभ, द्वेष इत्यादि समस्त आसुरी गुण निष्कासित हो रहे हैं। श्वास लेते समय यह भी अनुभव करें कि आपको दिव्य स्रोत, विश्व-प्राण से शक्ति प्राप्त हो रही है तथा आपाद-मस्तक आपका सारा शरीर नवीन शक्ति से निमज्जित हो रहा है। जब शरीर अधिक रोगी हो तो अभ्यास बन्द कर दें।

२२
कुछ निदर्शी कहानियाँ

१

काम की शक्ति

जैमिनि का दृष्टान्त

एक समय श्री वेदव्यास अपने शिष्यों को वेदान्त पढ़ा रहे थे। उन्होंने अपने व्याख्यान-काल में बताया कि युवा ब्रह्मचारियों को बहुत सावधान रहना चाहिए और उन्हें युवतियों से मिलना-जुलना नहीं चाहिए; क्योंकि पूर्ण सतर्कता तथा जागरूकता रखते हुए भी वे काम के शिकार बन सकते हैं। कामदेव बड़ा बली है। पूर्व-मीमांसा का रचयिता जैमिनि उनका शिष्य धृष्ट था। उसने कहा : "गुरु जी महाराज! आपका कथन गलत है। मुझे कोई स्त्री आकृष्ट नहीं कर सकती। मैं ब्रह्मचर्य में पूर्णतः स्थित हूँ।" व्यास ने कहा : "जैमिनि, तुम्हें शीघ्र मालूम हो जायेगा। मैं वाराणसी जा रहा हूँ। तीन मास के भीतर लौट कर आऊँगा। तुम सावधान रहना। अहंकार से फूल मत जाना।"

अपनी योग-शक्ति के द्वारा श्री व्यास ने झीने कौशेय वस्त्र से परिवेष्ठित हृदयवेधी नेत्रों तथा अत्यन्त मनोरम मुख वाली एक सुन्दरी युवती का रूप बना लिया। सूर्यास्त के समय वह युवती एक वृक्ष के नीचे खड़ी थी। बादल घिर आये, वर्षा होने लगी। संयोगवश जैमिनि उसी वृक्ष के पास से हो कर जा रहा

था। उसने उस कन्या को देखा। उसे दया आयी और उसने उससे कहा : "सुन्दरी! तुम मेरे आश्रम में आ कर रह सकती हो। मैं तुम्हें आश्रय दूँगा।" युवती ने पूछा : "क्या आप अकेले रह रहें हैं? क्या कोई स्त्री वहाँ रहती है?" जैमिनि ने उत्तर दिया : "मैं अकेला हूँ; परन्तु मैं पूर्ण ब्रह्मचारी हूँ। मुझ पर कामवासना का प्रभाव नहीं हो सकता। मैं प्रत्येक प्रकार के विकार से मुक्त हूँ। तुम वहाँ रह सकती हो।" युवती ने आपत्ति की : "कुमारी युवती के लिए ब्रह्मचारी के साथ रात्रि में अकेले रहना उचित नहीं है।" जैमिनि ने कहा : "सुन्दरी, भय मत करो। मैं तुम्हें अपने पूर्ण ब्रह्मचर्य का वचन देता हूँ।" तब वह मान गयी और रात्रि में उसके आश्रम में ठहर गयी।

जैमिनि बाहर सोया और वह युवती कमरे के अन्दर सो रही थी। अर्द्धरात्रि में जैमिनि के मन में कामदेव का संचार होने लगा। उसके मन में थोड़ी-सी कामवासना जगी। प्रारम्भ में वह बिलकुल पवित्र था। उसने दरवाजा खटखटाया और कहा : "हे सुन्दरी! बाहर हवा चल रही है। मैं शीत वायु के झकोरों को सहन नहीं कर सकता। मैं अन्दर सोना चाहता हूँ।" युवती ने द्वार खोल दिया। जैमिनि अन्दर सो गया। क्योंकि वह स्त्री के अति-निकट था तथा उसकी चुड़ियों की झनकार सुन रहा था, अतः कामवासना कुछ और अधिक प्रबल तथा तीव्र हो गयी। तब वह उठा और युवती का आलिंगन करने लगा। तुरन्त ही श्री व्यास जी ने अपना दाढ़ीदार वास्तविक स्वरूप धारण कर लिया और कहा : "प्रिय वत्स जैमिनि! कहो, अब तुम्हारा ब्रह्मचर्य का बल कहाँ है? क्या अब तुम पूर्ण ब्रह्मचर्य में स्थित हो? जब मैं इस विषय पर व्याख्यान दे रहा था तो तुमने क्या कहा था?" जैमिनि ने बड़ी लज्जा से अपना शिर झुका लिया और कहा : "गुरु जी! मुझसे भूल हुई। कृपया मुझे क्षमा कर दीजिए।"

यह दृष्टान्त यह प्रदर्शित करता है कि माया की शक्ति तथा विद्रोही इन्द्रियों के प्रभाव से महापुरुष भी प्रवञ्चित हो जाते हैं। ब्रह्मचारियों को बहुत ही सावधान रहना चाहिए।

२

मानव-मन पर कामवासना की पकड़

सुकरात तथा उनका शिष्य

सुकरात के एक शिष्य ने अपने गुरु से प्रश्न किया : "पूज्य गुरुदेव ! कृपया मुझे यह अनुदेश दें कि एक गृहस्थ अपनी धर्मपत्नी के साथ कितनी बार सहवास करे।" सुकरात ने उत्तर दिया : "अपने जीवन-काल में केवल एक बार।"

शिष्य ने कहा : "हे प्रभो ! यह सांसारिक व्यक्तियों के लिए सर्वथा असम्भव है। काम अत्यन्त भयावह तथा उपद्रवी है। यह संसार प्रलोभनों तथा चित्त-विक्षेपों से पूर्ण है। गृहस्थों में प्रलोभनों का प्रतिरोध करने के लिए पर्याप्त मनोबल नहीं है। उनकी इन्द्रियाँ बड़ी प्रबल तथा विद्रोही होती हैं। मन कामवासना से पूर्ण होता है। आप तत्त्ववेत्ता तथा योगी हैं। अतः आप नियन्त्रण कर सकते हैं। कृपया सांसारिक लोगों के लिए एक सुगम मार्ग निर्धारित कीजिए।" इस पर सुकरात ने कहा : "गृहस्थ वर्ष में एक बार मैथुन कर सकता है।"

शिष्य ने उत्तर दिया : "पूज्यवर ! यह भी उनके लिए दुष्कर कार्य है। इससे भी अधिक सरल मार्ग निर्धारित कीजिए।" तत्पश्चात् सुकरात ने उत्तर दिया : "प्रिय वत्स ! ठीक है, माह में एक बार। यह अनुकूल तथा अति-सुन्दर है। मेरा विचार है कि अब तुम इससे सन्तुष्ट होगे।" शिष्य ने कहा : "पूज्य गुरुदेव ! यह भी असम्भव है। गृहस्थ बहुत ही अस्थिर बुद्धि के होते हैं। उनके मन कामवासनाओं तथा संस्कारों से भरे होते हैं। वे मैथुन के बिना एक दिन भी नहीं रह सकते। आपको उनकी मनोवृत्ति का पता नहीं है।"

इस पर सुकरात ने कहा : "प्रिय वत्स ! तुमने ठीक ही कहा। अब एक कार्य करो। सीधे कब्रिस्तान चले जाओ और वहाँ एक कब्र खोद लो। शव के लिए पहले से ही एक शव-पेटी (ताबूत) तथा शव-वस्त्र (कफन) खरीद लो। अब तुम जितनी बार चाहो, अपने को कलुषित कर सकते हो। यही मेरा तुम्हारे लिए अन्तिम परामर्श है।" इस अन्तिम उपदेश ने शिष्य को मर्माहत कर दिया। इसने उसके हृदय को स्पर्श किया। उसने इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया। वह ब्रह्मचर्य की आवश्यकता तथा उसके महत्त्व को समझ गया। वह उसी समय से

आध्यात्मिक साधना में गम्भीरतापूर्वक लग गया। उसने आजीवन अखण्ड-ब्रह्मचर्य पालन का व्रत लिया। वह एक ऊर्ध्वरेता योगी बन गया तथा उसने आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लिया। वह सुकरात का एक प्रेमपात्र शिष्य बना।

३

उपभोग से कामवासना में वृद्धि होती है

राजा ययाति

एक समय ययाति नामक एक राजा रहते थे। उनकी श्रेणी का एक राजा जिन भोग-विलासों का अधिकारी हो सकता था, वे उन सभी सुखों को भोगते हुए पूरे एक हजार वर्ष तक जीवित रहे। जब वृद्धावस्था ने उन्हें आक्रान्त किया और उनमें कुछ और वर्षों तक सभी राजकीय सुखों के भोगने की तीव्र लालसा बनी रह गयी तो उन्होंने एक-एक करके अपने प्रत्येक पुत्र से उनकी जरावस्था को स्वयं अंगीकार करने तथा बदले में अपनी तरुणाई देने के लिए कहा और विश्वास दिलाया कि एक सहस्र वर्ष के पश्चात् वे उसकी तरुणाई वापस दे देंगे और अपनी जरावस्था वापस ले लेंगे, परन्तु पुरु नामक कनिष्ट पुत्र के अतिरिक्त उनमें से एक भी उनका प्रस्ताव स्वीकार करने को तैयार न हुआ।

पुरु ने बड़ी विनम्रता से कहा कि मैं पिता के इच्छानुसार करने को पूर्णरूप से तैयार हूँ और तदनुसार उसने पिता को अपनी तरुणाई दे दी और बदले में जरावस्था तथा उसकी परिणामी दुर्बलता प्राप्त की। ययाति नयी तरुणाई से अत्यधिक प्रसन्न हो कर पुनः यौन-सुख का आनन्द लूटने लगे। उन्होंने अपनी इच्छा-भर, अपनी शक्ति-भर तथा धर्म के निर्देशों को भंग किये बिना यथेच्छ भोग भोगा। वे बड़े आनन्द में थे, किन्तु उन्हें एक विचार सताता रहता था और वह यह कि सहस्र वर्ष शीघ्र ही समाप्त हो जायेंगे।

निर्धारित समय के समाप्त होने पर वे अपने पुत्र पुरु के पास आये और उससे बोले : "वत्स ! मैंने तुम्हारी तरुणाई के द्वारा यथेच्छ तथा यथाशक्ति और वह भी ऋतु के अनुकूल सब आनन्द भोगा। किन्तु, कामनाएँ कभी समाप्त नहीं होतीं। वे भोग से कभी परितृप्त नहीं होतीं। जिस प्रकार होमाग्नि में घृत डालने से वह धधक उठती है उसी प्रकार कामनाएँ उपभोग से और अधिक तीव्र हो जाती हैं।

यदि व्यक्ति धन-धान्य, रत्नों, पशुओं तथा नारियों से सम्पन्न इस सम्पूर्ण पृथ्वी का एकमात्र स्वामी बन जाये तब भी वह उसे पर्याप्त न होगी। अतः भोग की तृष्णा का परित्याग कर देना चाहिए। भोगों की तृष्णा जिसका त्याग करना दुरात्माओं के लिए दुष्कर है तथा जो जीवन के क्षीण होने पर भी क्षीण नहीं होती, मनुष्य में वस्तुतः एक घातक रोग है। इस तृष्णा से छुटकारा पाना ही सच्चा सुख है। मेरा मन एक सहस्र वर्ष-भर जीवन के भोग-विलासों में ही अनुरक्त रहा। तथापि उनके लिए मेरी तृष्णा क्षीण होने के स्थान में प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। अतः मैं इससे अपना पीछा छुड़ाऊँगा। मैं अपना मन ब्रह्म में स्थिर करूँगा तथा शान्त और अनासक्त हो कर अपने जीवन के शेष दिन निरीह मृगों के साथ वन में व्यतीत करूँगा।" ऐसा कह कर, पुरु को उसकी तरुणाई वापस करने के पश्चात् उसे राजसिंहासन पर आसीन कर वानप्रस्थ-जीवन यापन करने के लिए वे निर्जन अरण्य में चले गये।

४

विवेक तथा वैराग्य का उदय

योगी वेमना

वेमना का जन्म १८२० में आन्ध्र प्रदेश के गोदावरी जिले के एक छोटे से ग्राम में हुआ। उनके रामन्न नामक एक भाई था। उनकी शैशवावस्था में ही उनके माता-पिता की मृत्यु हो गयी। उनका जन्म एक धनाढ्य परिवार में हुआ था। वे रेड्डी जाति के थे।

वेमना को प्राथमिक पाठशाला में भेजा गया, किन्तु वे अपना अध्ययन पूरा न कर सके। वे कुसंगति में पड़ गये तथा एक ऊधमी बालक बन गये। किन्तु वे बहुत मनोहर तथा चपल थे। रामन्ना तथा उनकी पत्नी जगदीश्वरी वेमना को बहुत चाहते थे। पन्द्रह वर्ष की आयु में वेमना विषयी बन गये। वे एक स्त्री के लिए बहुत धन व्यय करते थे। तथापि उनके भाई और भाभी उन्हें अत्यधिक चाहते थे।

रामन्न तथा उनकी पत्नी वेमना के आचरण को सुधारना चाहते थे। उन्होंने रुपया देना बन्द कर दिया। अतः वेमना ने रात्रि में अपनी भाभी के आभूषण चुरा लिये और उन्हें एक वेश्या को दे दिया। जब उनकी भाभी को अपने आभूषणों

की क्षति का पता चला तो उसने वेमना से पूछा : "मेरे आभूषण कहाँ हैं?" वेमना ने उत्तर दिया : "क्योंकि आपने मुझे रुपया नहीं दिया, मैंने उन्हें उठा लिया और अपनी प्रेयसी को दे दिया।" जगदीश्वरी ने एक शब्द भी नहीं कहा। उसने अपने पति को भी आभूषणों की चोरी की सूचना नहीं दी। वह वेमना को बहुत चाहती थी। उसने अपने सभी आभूषणों को एक तिजोरी में बन्द कर ताला लगा दिया।

उस वेश्या ने और अधिक धन अथवा आभूषण लाने के लिए वेमना से आग्रह किया। अतः एक बार पुनः वेमना अर्द्धरात्रि में अपनी शय्या से उठे तथा भाभी के गले से कुछ आभूषण उतारने का प्रयास किया। उसने विवाह के समय अपने गले में बाँधे गये पवित्र मंगल-सूत्र को ही पहन रखा था। अपने अन्य आभूषणों को उसने तिजोरी में बन्द कर दिया था। वेमना कम-से-कम यह आभूषण उतारना चाहते थे। जब वे इसे उतारने का प्रयास कर रहे थे, जगदीश्वरी जाग गयी तथा उनके हाथ को पकड़ लिया और पूछा कि वे अर्द्धरात्रि में उसके शयन-कक्ष में क्यों आये। उहोंने साहसिक रूप से उत्तर दिया : "मेरी प्रेयसी ने कुछ आभूषण लाने के लिए मुझसे कहा था। मैं यहाँ उन्हें लेने के लिए आया था।" जगदीश्वरी ने उन्हें तुरन्त कमरे से बाहर निकल जाने के लिए कहा। तब वेमना रो पड़े और उसके चरणों में गिर गये। जगदीश्वरी ने वेमना को सद्बुद्धि प्रदान करने तथा उन्हें शुद्ध तथा धर्मात्मा बनाने की भगवान् से प्रार्थना की। तत्पश्चात् उसने वेमना को आभूषण देने का वचन दिया यदि वे उसके वचन का पूर्ण रूप से पालन करें। वेमना ने उसे पूर्ण आश्वासन दिया।

जगदीश्वरी ने कहा : "वेमना! उस लड़की को अपने सम्मुख खड़ी होने के लिए कहना। उसकी पीठ तुम्हारी ओर हो। तब उससे कहना की वह झुके तथा अपने हाथों को अपनी जङ्घाओं के बीच से ले जा कर तुम्हारे हाथ से आभूषण ग्रहण करे।" वेमना ने ऐसा करने के लिए वचन दिया तथा काली देवी के नाम में शपथ भी ली। तब उनकी भाभी ने उन्हें एक मूल्यवान् आभूषण दिया।

वेमना सीधे वेश्या के घर गये और जैसा उनकी भाभी ने आदेश दिया था वैसा ही उसे करने के लिए कहा। जब वेश्या झुक रही थी तब उन्होंने स्त्री के गुप्तांगों को बहुत स्पष्ट रूप से देखा। तत्काल उनके मन में तीव्र वैराग्य उदय हुआ। वे अपने हाथों में आभूषण लिये अपने घर वापस आ गये। उन्होंने अपनी भाभी को आभूषण वापस दे दिया और जो-कुछ हुआ था वह सब उसे कह

सुनाया। उन्होंने कहा : "प्रिय भाभी ! आपके सभी सौम्य कार्यों के लिए आपको बहुत धन्यवाद। अब मैं एक परिवर्तित व्यक्ति हूँ। इस संसार में सच्चा सुख नहीं है। यह सब माया का इद्रजाल है। अब मैं सच्चे सुख की खोज में जा रहा हूँ।" वे घर से तुरन्त चल पड़े तथा अपने ग्राम के पास एक काली-मन्दिर में गये। वहाँ वे काली की मूर्ति के पास बैठ गये।

अब ऐसा हुआ कि अभिरामय्या नामक एक व्यक्ति कई वर्षों से काली के दर्शन देने की प्रार्थना कर रहा था। एक दिन वे उसके स्वप्न में प्रकट हुईं और कहा : "कल अर्द्धरात्रि में आओ। मैं तुम्हें दर्शन दूँगी।" किन्तु वह अभागा व्यक्ति दूसरे दिन न आ सका। जब काली आयीं तो वहाँ उसके स्थान पर वेमना थे। काली ने वेमना को उनसे वरदान माँगने के लिए कहा : "हे माँ! मुझे ब्रह्मज्ञान दीजिए।" तब काली माँ ने उन्हें ज्ञान के रहस्य की दीक्षा दी। उस दिन से आगे, वेमना महती भक्ति, योग-शक्ति तथा ज्ञान से सम्पन्न एक धर्मात्मा व्यक्ति बन गये।

वेमना अपने परिभ्रमण-काल में कड़पा गये। वहाँ वे कड़पा के निकट एक वन में रहते थे। उन्होंने तरबूजा, ककड़ी आदि के विविध प्रकार के पादप लगाये। ककड़ियाँ स्वर्ण से भरी थीं। वेमना ने इस स्वर्ण से श्री शैलम् में एक मन्दिर का निर्माण कराया। अभी भी इस मन्दिर में मल्लिकार्जुन का ज्योर्लिङ्ग विराजमान है। यह एक प्रख्यात तीर्थ-स्थल है। एक दिन कुछ डाकू स्वर्णगर्भा ककड़ियों को लूटने के लिए आये, किन्तु वे सब वेमना की योगशक्ति से संज्ञाहीन हो गये।

एक बार वेमना ने अर्द्धरात्रि में एक निर्धन ब्राह्मण की झोपड़ी में प्रवेश किया तथा उसकी शय्या पर सो गये। रात्रि में उन्होंने शय्या पर ही मल-त्याग कर दिया। शय्या का वह भाग जो उनकी विष्ठा से दूषित हो गया था, स्वर्ण में रूपान्तरित हो गया।

वेमना ने अपना भौतिक कलेवर कड़पा जिले के कटमनापल्ले में सन् १८६५ में त्याग दिया। उन्होंने तेलुगु में योग पर अनेक पुस्तकें लिखीं जिनमें **'वेमना-तत्त्वज्ञानम्'** तथा **'वेमना-जीवामृतम्'** प्रमुख हैं।

५

सौन्दर्य कल्पना में है

हेमचूड़ की कहानी

प्राचीन काल में मुक्तचूड नामक एक राजा था। वह दशार्ण देश पर राज्य करता था। उसके दो पुत्र, हेमचूड तथा मणिचूड थे। वे दोनों ही बहुत रूपवान् तथा गुणवान् थे। उनका आचार-व्यवहार अच्छा था। वे सभी कलाओं में प्रवीण भी थे। वे दोनों परिचरों तथा अस्त्र-शस्त्र के साथ आखेट हेतु सह्याद्रि पर गये। उन्होंने अनेक व्याघ्रों तथा वन्य पशुओं का शिकार किया। अकस्मात् भयानक रेतीली आँधी आयी। इतना घोर अन्धकार छा गया कि एक व्यक्ति दूसरे को देख नहीं सकता था।

हेमचूड किसी तरह एक ऋषि के आश्रम में पहुँचने में सफल हो गया जो फलदार वृक्षों से भरा हुआ था। उसने आश्रम में एक सुन्दर कुमारी को देखा। वह उस निर्जन वन में एक निर्भीक कन्या को देख कर आश्चर्य में पड़ गया। उसने कुमारी से पूछा : "आप कौन हैं? आपका पिता कौन है?" उसने शिष्टता से कहा : "राज कुमार! आपका स्वागत है। आसन ग्रहण कीजिए। थोड़ा विश्राम कीजिए। आप बहुत श्रान्त प्रतीत होते हैं। कृपया ये फल तथा मेवे ग्रहण कीजिए। मैं अभी आपको अपनी कहानी बतलाऊँगी।" राजकुमार ने उन फलों तथा मेवों को खाया तथा कुछ समय तक विश्राम किया।

तब बालिका ने कहना आरम्भ किया : "राजकुमार! मेरी कहानी ध्यानपूर्वक सुनिए। मैं व्याघ्रपाद ऋषि की धर्मपुत्री हूँ जिन्होंने अपने कठोर तप के बल से संसार को जीत लिया है तथा जीवन्मुक्ति प्राप्त कर ली है। मेरा नाम हेमलेखा है। अनुपम सौन्दर्य तथा अनिर्वचनीय वैभव से युक्त स्वर्ग की अप्सरा, विद्युत्प्रभा एक दिन वेणा नदी में स्थान करने आयीं। वेंगों का राजा सुषेण भी वहाँ आया। वह विद्युत्प्रभा के मनोहर सौन्दर्य से मोहित हो गया। स्वर्गिक अप्सरा भी राजा सुषेण के रमणीय रूप से प्रेमान्ध हो गयी। सुषेण ने विद्युत्प्रभा को अपना प्रेम निवेदित किया। उसने अनुक्रिया की। राजा ने उसके साथ कुछ काल व्यतीत किया। तत्पश्चात् वह अपनी राजधानी को वापस चला गया।

"विद्युत्प्रभा ने शीघ्र ही एक शिशु को जन्म दिया। चूँकि वह अपने पति से भय करती थी अतः अपने शिशु को वहीं छोड़ कर वह अपने यहाँ चली गयी।

वह शिशु मैं ही हूँ। व्याघ्रपाद अपने दैनिक स्नान के लिए नदी पर आये। उन्होंने मुझे देखा और उन्हें मुझ पर दया आयी। उन्होंने मातृवत् मेरा पालन-पोषण किया। मैं उन्हें अपना पिता मानती हूँ। मैं उनकी श्रद्धापूर्वक सेवा करती हूँ। उनकी कृपा से मैं यहाँ निर्भीक हो गयी हूँ। मेरे पिता इस समय आने वाले हैं। कृपया थोड़ी प्रतीक्षा कीजिए। उन्हें प्रणाम कीजिए तथा उनका आशीर्वाद प्राप्त कीजिए।" बुद्धिमती लड़की राजकुमार के हृदय की बात जान गयी। उसने कहा : "राजकुमार! आप निराश न हों। आप अपनी कामना तुष्ट कर सकते हैं। मेरे पिता आपकी इच्छा पूर्ण करेंगे।"

तत्काल, व्याघ्रपाद ने पूजा हेतु पुष्प लिये हुए वहाँ प्रवेश किया। राजकुमार उठ खड़ा हुआ और उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। ऋषि समझ गये कि राजकुमार लड़की से प्रेम करता है। उन्होंने हेमलेखा का विवाह राजकुमार के साथ कर दिया। राजकुमार उसके साथ अपने नगर में वापस आया। उसके पिता अत्यधिक प्रसन्न हुए। उन्होंने बड़ी धूमधाम तथा शान-शौकत से उनका विवाहोत्सव मनाया।

राजकुमार हेमलेखा से अत्यधिक प्रेम करता था। वह उससे अनुरक्त था। उसने देखा कि वह यौन-सुख के प्रति कुछ उदासीन रहती है। एक दिन उसने उससे पूछा : प्रिय हेमलेखा! तुम्हें क्या कठिनाई है? मैं तुमसे बहुत अनुरक्त हूँ। तुम मेरे प्रेम का प्रतिपादन क्यों नहीं करती? तुम पर कुछ भी प्रभाव पड़ता नहीं प्रतीत होता। तुम अनासक्त हो। तुम्हारी मनोवृत्ति ऐसी होने पर मैं क्योंकर आनन्द प्राप्त कर सकता हूँ? तुम सदा नेत्र बन्द कर एक मूर्ति की भाँति बैठती हो। तुम मेरे साथ न हँसती हो, न केलि करती हो और न हास-परिहास करती हो। कृपया अपने हृदय की बात साफ-साफ कहो। स्पष्टवादी बनो।"

हेमलेखा ने आदरपूर्वक उत्तर दिया : "हे राजकुमार! मेरी बात सुनिए। प्रेम क्या है? नफरत क्या है? मेरे मन को इसका स्पष्ट बोध न होने के कारण मैं सदा इस पर विचार करती रहती हूँ। मैं किसी निश्चित निष्कर्ष पर नहीं पहुँचती हूँ। कृपया इस विषय को मुझे समझाइए। मैं आपके अनुनय करती हूँ।"

हेमचूड ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया : "यह सच है कि स्त्रियों का मन अबोध होता है। पशु भी पसन्दगी तथा नापसन्दगी समझते हैं। हम देखते हैं कि प्रिय वस्तुओं को पसन्द करते हैं और अप्रिय वस्तुओं को नापसन्द करते हैं। सुन्दरता

हमें सुखदायी तथा कुशलता हमें दुःखदायी होती है। इस विषय पर प्रतिदिन तुम अपना समय क्यों नष्ट करती हो?"

हेमलेखा ने उत्तर दिया : "यह सच है कि स्त्रियों में स्वतन्त्र विचार-शक्ति नहीं होती। अतः क्या मेरी शंकाओं का निवारण करना आपका कर्तव्य नहीं है? यदि आप इस पर प्रकाश डालें तो मैं विचार करना छोड़ कर सदा आप से अनुरक्त रहूँगी। राजकुमार! आपने कहा कि पसन्दगी तथा नापसन्दगी अथवा प्रेम तथा घृणा सुखद तथा दुःखद पदार्थों से उत्पन्न होते हैं। किन्तु एक ही पदार्थ काल, परिस्थिति तथा वातावरण के कारण हमें सुख तथा दुःख देता है। तब क्या निर्णय क्या है? कृपया आप अपना सुस्पष्ट उत्तर दें। अग्नि शीतकाल में बहुत ही सुखकर होती है, किन्तु ग्रीष्मकाल में वह भीषण होती है। आप अग्नि के निकट नहीं जा सकते। एक ही अग्नि शीतप्रधान देशों में सुख तथा उष्णता प्रधान देशों में दुःख देती है। अग्नि की मात्रा भी हमें भिन्न-भिन्न परिणाम देती है। ऐसी ही बात सम्पत्ति, पत्नी, पुत्र, माता आदि के विषय में भी है। ये प्रभावकारी कष्ट तथा दुःख देते हैं। ऐसा क्यों कि आपके पिता मुक्तचूड अपरिमित सम्पत्ति, पुत्रों तथा स्त्री पर स्वामित्व रखते हुए भी सदैव उदास रहते हैं? अन्य लोग इनके अभाव में भी अत्यन्त सुखी हैं। सांसारिक सुख के साथ दुःख, कष्ट, भय तथा चिन्ता मिले रहते हैं। अतः इसे किसी तरह भी सुख नहीं कहा जा सकता है। दुःख वैयक्तिक तथा अवैयक्तिक अथवा आन्तरिक तथा बाह्य होता है। बाह्य दुःख शारीरिक तत्त्वों के दोष के कारण होता है। आन्तरिक दुःख कामना से उत्पन्न होता है। इसका सम्बन्ध मन से होता है। इन दोनों में आन्तरिक दुःख अधिक विकट होता है। यह सभी कष्टों का बीज अथवा कारण है। सम्पूर्ण संसार इस प्रकार के आन्तरिक दुःख में निमग्न है। इस दुःख नामक वृक्ष का सशक्त तथा नित्य अचूक बीज कामना है। इन्द्र तथा अन्य देवगण इस कामना के द्वारा प्रेरित होते हैं। वे इसके आदेशों का अहर्निश पालन करते हैं। यदि कामना न हो तो आप कोई भी सुख अनुभव नहीं कर सकते। ऐसा मिश्रित सुख-दुःख कीट, कृमि तथा कुत्ते भी भोगते हैं। क्या आप सोचते हैं कि मनुष्य का सुख इससे बढ़ कर है? कीटों का सुख मनुष्य के सुख से बढ़ कर है; क्योंकि उनके सुख में कामना नहीं मिली होती, वह विशुद्ध होता है। जबकि मनुष्य में सहस्रों अतृप्त कामनाओं के बीच में अल्प-सा सुख पाया जाता है। इसे सुख नहीं कह सकते। पुरुष अपनी पत्नी का आलिंगन कर सुख अनुभव करता

है; किन्तु उसके अंगों को अधिक दबा कर वह उसे असुविधा में डाल देता है। केलि के पश्चात् वे परिश्रान्त हो जाते हैं। आपको इन वैषयिक विनाशशील पदार्थों में क्या सुख प्राप्त होता है? राजकुमार! कृपया समझायें। इस प्रकार का सुख कुत्ते, गधे तथा शूकर भी भोगते हैं। किन्तु यदि आप कहते हैं कि आप मेरे शारीरिक सौन्दर्य को देख कर सुखी होते हैं तो यह सुख स्वप्न में स्त्री के आलिंगन की भाँति काल्पनिक तथा भ्रामक है।

"एक सुन्दर राजकुमार की स्वरूपवती पत्नी थी। वह उससे बहुत अधिक अनुरक्त था। इसके विपरीत वह स्त्री राजकुमार के सेवक से प्रेम रखती थी। वह राजकुमार को अनुचित उपायों से ठग रही थी। सेवक राजकुमार को दी जाने वाली सुरा में कुछ मादक द्रव्य मिला देता था। तब वह एक कुरूप नौकरानी को राजकुमार के पास भेज देता। वह स्वयं राजकुमार की पत्नी के साथ केलि करता। राजकुमार नशे में सोचता, 'मैं बड़ा भाग्यशाली हूँ। मुझे संसार की सर्वाधिक सुन्दरी स्त्री मिली है।' इस प्रकार कई दिन व्यतीत हो गये। एक दिन सेवक सुरा में स्वापक मिलाना भूल गया। राजकुमार ने भी उस दिन अधिक सुरा नहीं पी। काम से पीड़ित होने पर उसने उस कुरूप स्त्री से सम्भोग किया। उसने उससे पूछा कि उसकी प्रिय पत्नी कहाँ है? पहले तो वह मौन रही। तब राजकुमार ने अपनी तलवार निकाली और धमकाया कि यदि वह सम्पूर्ण सच्चाई प्रकट नहीं करती तो वह उसे मार डालेगा। उसने सब-कुछ बतला दिया और वह स्थान दिखाया जहाँ उसकी पत्नी सेवक के साथ थी। राज कुमार ने कहा : 'मैं क्या ही मूर्ख हूँ। मैंने मदिरा-पान से अपने को भ्रष्ट कर डाला। जो भी स्त्री से बहुत अधिक प्रेम करता है, तिरस्कणीय होता है। जिस भाँति पक्षी किसी एक ही वृक्ष-विशेष से आबद्ध नहीं रहता उसी भाँति स्त्री भी किसी एक व्यक्ति से आबद्ध नहीं रहती। उसका मन चंचल तथा अस्थिर होता है। मैंने अपनी विवेक-शक्ति खो दी है। मैं अपनी पत्नी को अपने प्राणों से भी अधिक मूल्यवान् समझता था। जो व्यक्ति स्त्री से अनुरक्त होता है तथा उसकी अधीनता स्वीकार करता है, वह वास्तव में पक्का गधा है। स्त्री का प्रेम शरत्कालीन आकाश के मेघ के समान क्षणस्थायी होता है। मुझे अभी तक स्त्री के स्वभाव का ज्ञान नहीं था। वह नीच सेवक के पास जाती है तथा मुझे त्याग दिया जो उससे सदा अनुरक्त है और उसके प्रति निष्ठावान् है। वह एक नाटक की अभिनेत्री की भाँति मुझसे प्रेम प्रदर्शित करने का अभिनय करती थी। मैं ठगा गया हूँ। सेवक के सभी अंग

कुरूप हैं। उसमें उसे क्या सौन्दर्य दिखायी पड़ता है?' राजकुमार को सबसे विरक्ति हो गयी। वह राज्य छोड़ कर वन में चला गया।"

हेमलेखा ने अपना कथन जारी रखा : "अतः, हे राजकुमार! सौन्दर्य केवल मन की सृष्टि है। सौन्दर्य मनोजात है। यह मन के प्रत्यय का परिणाम है। आप जैसा सौन्दर्य मुझमें देखते हैं उससे भी अधिक सौन्दर्य अन्य लोग कुरूप स्त्रियों में देखते हैं। स्त्री को देखने पर पुरुष के मनरूपी दर्पण में उसका प्रतिबिम्ब बन जाता है। यदि व्यक्ति इस सौन्दर्य का निरन्तर चिन्तन करता है तो शरीर के उस अंग में, जो आवेग के अधीन होता है, कामना उद्दीपित हो उठती है। वह व्यक्ति, जिसमें इस प्रकार कामना प्रदीपित होती है, विषय-सुख उपभोग करता है, जबकि वह व्यक्ति, जिसकी कामना उद्दीपित नहीं होती, सर्वाधिक मनोहर लड़की की ओर देखने की परवाह भी नहीं करेगा। इसका कारण सौन्दर्य अथवा स्त्री का निरन्तर ध्यान करना है। बालक तथा तपस्वी इस विषय का ध्यान अथवा चिन्तन नहीं करते। अतः उनमें विषय-सुख की कोई कामना नहीं होती है। वे लोग किसी स्त्री-विशेष की संगति में सुख अनुभव करते हैं, अपने मन में अपनी भावना के अनुसार सौन्दर्य सृजन करते हैं। वे इसमें इस पर ध्यान नहीं देते के स्त्री कुरूप है अथवा परम रूपवती। वे उस स्त्री में अपनी भावना के अनुसार सौन्दर्य प्रक्षेपित करते हैं। यदि आप पूछें कि कुरूप स्त्री में सौन्दर्य क्योंकर पाया जाता है तथा सौन्दर्य के अभाव में सुख क्योंकर उपलब्ध हो सकता है तो मैं इतना ही कहूँगी कि कामुक व्यक्ति प्रेमोन्माद में अन्धा होता है। कामदेव का चित्रण अन्धे के रूप में किया गया है। कामुक व्यक्ति अत्यन्त कुरूप स्त्री में भी रम्भा के सौन्दर्य को प्राप्त करता है। कामना के बिना सौन्दर्य नहीं हो सकता। यदि पदार्थों में वर्तमान अम्लता, माधुर्य तथा कटुता की भाँति ही सौन्दर्य भी स्वाभाविक हो तो यह बच्चों तथा छोटी लड़कियों में क्यों नहीं पाया जाता? अतः सौन्दर्य केवल मन की सृष्टि है।

"लोग मांस से संघटित, रक्त से पूरित, स्नायुओं से रचित, त्वचा से आच्छादित, अस्थियों का पंजर, बालों से अतिवर्द्धित, पित्त तथा कफ से पूर्ण, मल-मूत्र की पेटी, रक्त तथा वीर्य से सृष्ट, मूत्र-मार्ग से उत्पन्न इस शरीर को सुन्दर समझते हैं! जो व्यक्ति इस (शरीर) से सुख प्राप्त करते हैं वे गन्दगी से उत्पन्न कृमियों से क्योंकर श्रेष्ठ हो सकते हैं? राजकुमार! आपको मेरा यह भौतिक शरीर सुन्दर लगता है। जरा इस शरीर के एक-एक अंग का विश्लेषण कीजिए तथा प्रत्येक

अंग के विषय में चिन्तन कीजिए। मधुर तथा रुचिर वस्तुओं वाले प्रत्येक अंग का चिन्तन कीजिए। सभी पदार्थ, जो हम खाते हैं, घृणास्पद मल में परिवर्तित हो जाते हैं। ऐसी स्थिति होने से, इस (शरीर) में क्या प्रीतिकर तथा आनन्ददायी है?"

हेमचूड ने हेमलेखा के अमृतोपदेश को बड़े ध्यान तथा रुचि से सुना। उसमें प्रबल वैराग्य तथा विवेक विकसित हुआ। उसने सर्वव्यापी शुद्ध अमर आत्मा पर चिन्तन किया तथा वह जीवन्मुक्त बन गया। मणिचूड ने भी अपने भ्राता से, मुक्तचूड ने अपने पुत्र से तथा उसकी पत्नी ने अपनी पुत्र-वधू से सत्य का ज्ञान प्राप्त किया। मन्त्री तथा उस नगर के नागरिक ज्ञानी बन गये। उस नगर के पक्षी भी ज्ञानमयी वाणी बोलते थे। ऋषि वामदेव तथा अन्य लोगों ने देखा कि उस नगर में पशु-पक्षी-सहित सभी लोग विद्वान् तथा ज्ञानी हैं। अतः उन्होंने उस नगर का नाम विद्यानगर नाम दिया।

६

शारीरिक सौन्दर्य कोई सौन्दर्य नहीं है

राजकुमार की कहानी

एक बार एक नवयुवक राजकुमार ने जब वह मृगया-विहार के लिए गया था, एक नदी के तट पर एक रूपवती राजकुमारी को देखा। राजकुमारी की प्रवृत्ति दार्शनिक थी। उसका कई वेदान्त-ग्रन्थों पर अधिकार था। वह आत्मा पर गम्भीर ध्यान का अभ्यास करती थी। राजकुमार उसके पास गया और उसने उससे विवाह करने की इच्छा व्यक्त की। उसने कोरा जवाब दे दिया। राजकुमार ने बारम्बार उससे अनेक प्रकार से अनुनय-विनय किया। अन्त में राजकुमारी ने उससे कहा : "कृपया दश दिन के पश्चात् मेरे निवास-स्थान पर आ कर मुझसे मिलें। मैं आपसे विवाह करूँगी।" राजकुमार भी वेदान्त का छात्र था, किन्तु उसमें सच्चा पुष्ट वैराग्य नहीं था। उसने निद्रारहित रात्रियाँ व्यतीत कीं तथा दशवें दिन प्रातःकाल उत्सुकतापूर्वक राजकुमारी के राजमहल को प्रस्थान किया।

राजकुमारी ने विवाह के चुंगल से बचने के लिए एक उपाय पहले ही खोज निकाला था। वह दश दिन तक जमालगोटे के तेल की तीक्ष्ण रेचक औषधि लगातार लेती रही तथा सभी मलों को दश अलग-अलग तामचीनी (एनैमल) के

मल-मूत्र पात्रों (कमोड) में एकत्रित करती रही। उसने एक बड़े कमरे में उन सबको एक से दश संख्या तक बड़ी अच्छी तरह सजा कर रखा था। सभी मल-मूत्र पात्रों को सुन्दर रेशमी वस्त्रों से आच्छादित कर रखा था। उसकी त्वगस्थि मात्र ही अवशेष रह गयी थी। उसके नेत्र धँसे हुए थे तथा वह अपनी चारपाई पर लेटी हुई थी।

राजकुमार बड़ी प्रसन्नतापूर्वक उससे मिलने आया। नौकरानी राजकुमार को उस कमरे में लिवा ले गयी जहाँ राजकुमारी लेटी हुई थी। राजकुमार उसे पहचान न सका। उसने नौकरानी से पूछा—"वह सुन्दर नवयुवती कहा है? यह वह महिला नहीं है जिससे मैं कुछ दिन पूर्व मिला था।" इस पर राजकुमारी ने उत्तर दिया—"प्रिय राजकुमार! मैं वही महिला हूँ। मैंने अपने सौन्दर्य को उधर के कमरे में सावधानी पूर्वक संचित कर रखा है। कृपया मेरे साथ चल कर वहाँ संचित सौन्दर्य को देखिए। अब मेरे साथ आइए। मैं उसे आपको दिखाऊँगी।" ऐसा कह कर वह राजकुमार को कमरे में ले गयी, रेशमी वस्त्रों को हटा दिया और उसने अपने (राजकुमारी के) सौन्दर्य को देखने को कहा। उसने आगे कहा—"यह मेरी त्वचा तथा मांस का सौन्दर्य है।" राजकुमार एकदम स्तब्ध रह गया। उसने महिला से एक शब्द भी नहीं कहा। उसने उसके चरणों में प्रणिपात किया और उसे अपनी माता माना। वह अपने राजसी वस्त्र फेंक कर वन में चला गया। अब उसका हृदय तीव्र वैराग्य से भर गया। उसने एक ऋषि की शरण ली, उनसे निर्देश प्राप्त किया, उग्र ध्यानाभ्यास किया तथा आत्मज्ञान प्राप्त किया।

७

व्यस्त रहना काम के नियन्त्रण का सर्वोत्तम उपाय है

एक पिशाच की कहानी

मन एक पिशाच के समान है जो सदा अशान्त रहता है। एक बार एक ब्राह्मण पण्डित ने मन्त्र-सिद्धि के द्वारा एक पिशाच को वश मे कर लिया। पिशाच ने पण्डित से कहा—"मुझमें अलौकिक शक्तियाँ हैं। मैं पलमात्र में आपके लिए, कोई भी कार्य कर सकता हूँ। आपको नित्य विविध प्रकार के कार्य देते रहना होगा। यदि आपने मुझे बिना किसी काम के एक क्षण भी छोड़ा तो मैं आपको तत्काल खा जाऊँगा।" ब्राह्मण सहमत हो गया।

उस पिशाच ने ब्राह्मण के लिए एक तालाब खोदा, खेतों की जोताई की तथा अल्पकाल में ही विविध प्रकार के कार्य किये। वह ब्राह्मण उस पिशाच को और किसी कार्य में लगाये न रख सका। पिशाच ने उसे धमकाया—"अब मेरे लिए कुछ भी कार्य नहीं है। मैं आपको निगल जाऊँगा।" ब्राह्मण किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। उसकी समझ में न आया कि अब उसे क्या करना चाहिए। वह अपने गुरु के पास गया और अपनी स्थिति स्पष्ट की। उसके गुरु ने कहा—"अपनी सामान्य बुद्धि का प्रयोग करो। अपने घर के सामने एक बड़ा, दृढ़ चिकना काष्ठ-स्तम्भ खड़ा करवा दो। इस स्तम्भ में एरण्ड तेल, मोम तथा अन्य स्निग्ध पदार्थों का लेपन करवा दो। उस पिशाच को इस स्तम्भ पर अहर्निश चढ़ते-उतरते रहने का आदेश दो।" शिष्य ने तदनुसार कार्य किया तथा उस पिशाच को सहज ही वश में कर लिया। पिशाच निरुपाय हो गया।

इसी प्रकार आप भी अपने मन को जप, ध्यान, स्वाध्याय, सेवा, कीर्तन, प्रार्थना आदि किसी-न-किसी प्रकार का काम सदा दें। उसे पूर्णतः व्यस्त रखें। तभी मन अनायास ही नियन्त्रित किया जा सकता है। कोई कुविचार मन में नहीं आयेगा। आप शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही प्रकार के ब्रह्मचर्य में सुस्थित हो सकेंगे।

कामवासना तथा ब्रह्मचर्य पर उत्कृष्ट सूक्तियाँ

मन, वाणी तथा शरीर से, सदा, सर्वत्र तथा सभी परिस्थितियों में सभी प्रकार के मैथुनों से अलग रहना ही ब्रह्मचर्य है। **—याज्ञवल्क्य**

स्त्री अथवा उसके चित्र के विषय में चिन्तन करना, स्त्री अथवा उसके चित्र की प्रशंसा करना, स्त्री अथवा उसके चित्र के साथ केलि करना, स्त्री अथवा उसके चित्र को देखना, स्त्री से गुह्य भाषण करना, कामुकता से प्रेरित हो कर स्त्री के प्रति पापमय कर्म करने की सोचना, पापमय कर्म करने का दृढ़ संकल्प करना तथा वीर्यपात में परिणमित होने वाली क्रियानिवृत्ति—ये मैथुन के आठ लक्षण हैं। ब्रह्मचर्य इन आठ लक्षणों से सर्वथा विपरीत है। **—दक्षस्मृति**

आपको ज्ञात हो कि आजीवन अखण्ड ब्रह्मचारी रहने वाले व्यक्ति के लिए इस संसार में कुछ भी अप्राप्य नहीं है।. . . एक व्यक्ति चारों वेदों का ज्ञाता है तथा दूसरा व्यक्ति अखण्ड ब्रह्मचारी है। इन दोनों में पश्चादुक्त व्यक्ति ही पूर्वोक्त ब्रह्मचर्य-रहित व्यक्ति से श्रेष्ठ है। **—महाभारत**

ब्रह्मचर्य सर्वश्रेष्ठ तप है। ऐसा निष्कलंक ब्रह्मचारी मनुष्य नहीं साक्षात् देवता है।. . . अत्यन्त प्रयत्नपूर्वक अपने वीर्य की रक्षा करने वाले ब्रह्मचारी के लिए संसार में क्या अप्राप्य है? वीर्य संवरण की शक्ति से कोई भी व्यक्ति मेरे समान बन जायेगा। **—शंकर भगवत्पाद**

जो इस ब्रह्मलोक को ब्रह्मचर्य के द्वारा जानते हैं, उन्हीं को यह ब्रह्मलोक प्राप्त होता है तथा उनकी सम्पूर्ण लोकों में यथेच्छ गति हो जाती है। **—छान्दोग्योपनिषद्**

बुद्धिमान् व्यक्ति को विवाहित जीवन से दूर रहना चाहिए जैसे कि वह जलते हुए कोयले का एक दहकता गर्त हो। सन्निकर्ष से संवेदन होता है, संवेदन से तृष्णा होती है और तृष्णा से अभिनिवेष होता है। सन्निकर्ष से विरत होने से जीव सभी पापमय जीवन धारण से बच जाता है। **—भगवान् बुद्ध**

काम की सहज-प्रवत्ति जो प्रथम तो एक सामान्य लघूर्मि की भाँति होती है, कुसंगति के कारण सागर का परिमाण धारण कर लेती है। **—नारद**

विषयासक्ति जीवन कान्ति, बल, ओज, स्मृति, सम्पत्ति, कीर्ति, पवित्रता तथा भगवद्भक्ति को नष्ट कर डालती है। **—भगवान् श्रीकृष्ण**

शरीर से वीर्यस्राव होने से मृत्यु शीघ्र आती है तथा उसके परिरक्षण से जीवन की रक्षा तथा आयु की वृद्धि होती है।

इसमें सन्देह नहीं है कि वीर्यपात से अकाल मृत्यु होती है। ऐसा जान कर योगी को सदा वीर्य का परिरक्षण तथा अतिनियमनिष्ठ ब्रह्मचर्यमय जीवन यापन करना चाहिए। **—शिवसंहिता**

भोजन में सावधानी रखना तिगुना उपयोगी है; परन्तु मैथुन पर संयम रखना चौगुना उपयोगी है। स्त्री की ओर कभी न देखना, यह संन्यासी के लिए एक नियम था और अब भी है। **—आत्रेय**

ब्राह्मण नग्न स्त्री को न देखे। **—मनु**